रंगभाषा रूपान्तरा

संगीत नाटक अकादेमी की छमाही गृह पत्रिका

अंक - 3 - 4

अप्रैल-सितम्बर 2013 / अक्तूबर 2013-मार्च 2014

प्रकाशक

हेलेन आचार्य

संपादक

सुशील जैन

सह-संपादक

तेजस्वरूप त्रिवेदी

संगीत नाटक अकादेमी

संगीत नाटक अकादेमी की छमाही गृह पत्रिका— रंगभाषा रूपांतरा
अंक 3 एवं 4, अप्रैल-सितम्बर 2013/ अक्तूबर 2013-मार्च 2014

प्रकाशक
हेलेन आचार्य
सचिव, संगीत नाटक अकादेमी
नई दिल्ली-110001

संपादकीय कार्यालय
संगीत नाटक अकादेमी
रवीन्द्र भवन, 35 फिरोजशाह रोड,
नई दिल्ली-110001

टेलीफ़ोन : 23387246, 23387247, 23382495
एक्सटेंशन : 146,122
फ़ैक्स : 23382659
ई-मेल : mail@sangeetnatak.gov.in
rajbhasha@sangeetnatak.gov.in
वेबसाइट : http://www.sangeetnatak.gov.in

आवरण का मुख पृष्ठ : स्वामी विवेकानंद का चित्र
आवरण का अंतिम पृष्ठ : दक्षिणेश्वर का काली मंदिर

पत्रिका में प्रस्तुत सभी लेखों, छायांकनों, और रेखाचित्रों का अन्यत्र उपयोग अकादेमी की अनुमति से ही किया जा सकेगा। रचनाओं में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं और अकादेमी का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

मुद्रक : विकास कम्प्यूटर एण्ड प्रिंटर्स, नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032
ई-मेल : vikas_printers@hotmail.com

अनुक्रम

संपादकीय / 5

आलेख

स्वामी विवेकानन्द : उनके जीवन की झलकियाँ! / 7 : अंकुर आचार्य
भारत के भागीरथ : स्वामी विवकानन्द / 15 : तेजस्वरूप त्रिवेदी
संगीतनायक विवेकानन्द / 20 : पं. निखिल घोष
संगीत नाटक अकादेमी पुरस्कार 2012 / 22 : हेलेन आचार्य
रवीन्द्र प्रणति / 25 : सुशील जैन
पंत काव्य की सदानीरा / 29 : प्रयाग शुक्ल
बलराम और कृष्ण का कला में आविर्भाव-समय / 35 : डॉ. सरोजिनी कुलश्रेष्ठ

आत्मकथ्य

अहसास / 37 : कुसुम ढींगरा
कुछ हलचल जरूरी है / 39 : शशीबाला बुद्धिराजा

यात्रा वृत्तांत

मेरी सातवीं हेमकुंड साहिब की यात्रा / 41 : अमरजीत कौर
पचास रुपए का पास बनाम यह माटी सभी की कहानी कहेगी / 46 : विजय सिंह

कहानी

व्यथा के स्वर / 49 : प्रकाश टाटा आनंद

संस्मरण

चार मास का बाँस / 57 : हरसिंह मनराल

गीत / कविता

नाचे उस पर श्यामा / 61 : अनुवादक : 'निराला'
अल्मोड़े में विवेकानन्द / 64 : सुमित्रानंदन पंत
जूठी चिलम / 65 : रामधारी सिंह 'दिनकर'
सागर देखिछा ? मूल असमिया / 66 : स्व. देवकांत बरुवा
सागर देखा है ? हिन्दी रूपान्तर / 66 : डॉ. रमानाथ त्रिपाठी
चल रहा हूँ / 67 : डॉ. रामदरश मिश्र
मुझे है चिंता !!! / 68 : पवन झा 'काश्यप कमल'
क्रांति, बारिश / 70 : शुभा सक्सेना
तरसता बचपन / 71 : सुमित भोला
संघर्ष / 72 : ललिता बजाज

राजभाषा स्तम्भ

हिंदी दिवस–2013 के अवसर पर भारत के राष्ट्रपति,
श्री प्रणव मुखर्जी का अभिभाषण / 73
संगीत नाटक अकादेमी में विकास के पथ पर राजभाषा / 75 : तेजस्वरूप त्रिवेदी
भारत की चुनाव व्यवस्था : समग्र मूल्यांकन / 77 : रागेश कुमार पाण्डेय
मेरी अभिलाषा / 80 : हरसिंह मनराल
राजभाषा नीति संबंधी प्रमुख निदेश / 81
प्रतिक्रियाएँ / 83
संगीत नाटक अकादेमी के प्रकाशन / 84
अकादेमी द्वारा निर्मित फिल्म / वीडियो कार्यक्रम और ऑडियो सीडी / 86

संपादकीय

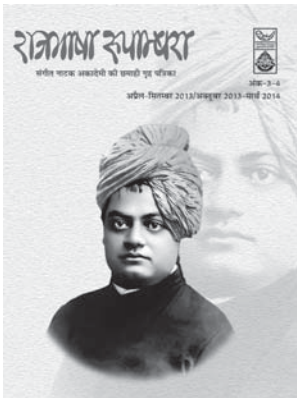

संस्कृति ही मनुष्य को सुसंस्कृत बनाती है। सुसंस्कारों में ढला समाज ही राष्ट्र के चरित्र का द्योतक है। स्वामी विवेकानन्द भारत की संस्कृति के राजदूत थे। स्वामी विवेकानन्द एक सार्वभौमिक गुरू के एक सार्वभौमिक शिष्य थे। क्योंकि सार्वभौमिक व्यक्ति को छोड़ दूसरा कोई सार्वभौमिक उपदेश नहीं दे सकता। इस अर्थ में रामकृष्ण परमहंस मजहबी सीमाओं से परे एक सार्वभौमिक गुरू थे जिन्होंने विभिन्न पंथों की साधनाओं के द्वारा यह सिद्ध किया कि सभी का लक्ष्य उस एक परमतत्व की उपलब्धि है जिसे ईश्वर, अल्ला, नूर, मसीहा जैसे शब्दों से संबोधित किया जाता है। और विवेकानन्द सही मायनों में ऐसे सार्वभौमिक गुरू के सार्वभौमिक शिष्य थे जिन्होंने रूढ़ियों, परम्पराओं और अज्ञानता के पंक में फंसी मनुष्य जाति के उद्धार के लिए अपना जीवन समर्पित कर दिया। विवेकानन्द उस प्रभु के सेवक थे जिसे अज्ञानी लोग मनुष्य कहते हैं।

पांच हजार वर्षों का इतिहास गवाह है। विश्व के रंगमंच पर कितनी ही सभ्यताएं आयीं और जल पर तरंगों की भांति लुप्त हो गयी और इन लोपमान सभ्यताओं में भारत की सभ्यता ही स्थायी दीख पड़ती है। आखिर हमारी इस सांस्कृतिक अमरता के क्या कारण हैं यह प्रश्न बरबस हमें अपनी ओर खींचता है। इसका उत्तर यही है कि हमारे देश में एक अन्तराल के बाद कोई न कोई महापुरूष जन्म लेता है। ईश्वर का अवतार माने जाने वाले इन महापुरूषों के कारण ही हमारी संस्कृति सुरक्षित रही है। स्वामी विवेकानन्द ऐसे ही महापुरुष थे जिन्हें भारतीय संस्कृति के अग्रदूत होने का श्रेय जाता है।

स्वामी विवेकानन्द के आदर्श एवं विचार सार्वभौमिक हैं। वे तब भी उतने ही प्रासंगिक थे जितने प्रासंगिक आज हैं। इसीलिए वर्ष 1884 में भारत सरकार ने निर्णय लिया था कि स्वामी जी का जन्म दिन 12 जनवरी, राष्ट्रीय युवा दिवस (National Youth Day) के रूप में मनाया जाये और वर्ष 1885 से 12 जनवरी को हम राष्ट्रीय युवा दिवस के रूप में मनाते आ रहे हैं।

भारत सरकार ने 12 जनवरी 2011 से 12 जनवरी 2014 तक स्वामी जी की 150वीं जयंती व्यापक स्तर पर मनायी जिसके तहत देशभर में कार्यक्रम आयोजित हुए और स्वामी जी की शिक्षाओं एवं आदर्शों का जनमानस में और प्रचार-प्रसार हुआ।

अठारह सौ सत्तावन के स्वतंत्रता संग्राम में असंख्य देशभक्त शहीद हो गये लेकिन किन्हीं कारणों से स्वतंत्रता नहीं मिल पायी। तरुणाई को जगाने के लिए सन् 1863 में नरेन्द्रनाथ का आविर्भाव हुआ जो रामकृष्ण स्कूल के योग्य शिष्य हुए और अपने जीवन के उनतालिस वर्षों में ही उन्होंने सोये भारत को जगा दिया जिसका विस्तृत वर्णन हमें

अंकुर आचार्य और तेजस्वरूप त्रिवेदी के आलेख में देखने को मिलता है। नाद ही ब्रम्ह है और यही नाद अनहद नाद के रूप में योगी को आनंदित करता रहता है। स्वामी जी भी नाद ब्रह्म के उपासक थे इसका परिचय हम पं. निखिल घोष के आलेख 'संगीत नायक विवेकानन्द' में पाते हैं जिसमें स्वामी जी कहते हैं — ''युगों पूर्व भारत में संगीत को पूर्ण स्वरों तक विकसित किया गया था, यहां तक कि अर्ध एवं चतुर्थांश स्वर तक भी विकसित हुए थे। भारत ने संगीत में और नाटक तथा—स्थापत्य कला में भी नेतृत्व किया। जो कुछ अब किया जा रहा है, वह केवल मात्र अनुकृति का एक प्रयास है।''

अपने युग के प्रतिनिधि कवि पंत, निराला और दिनकर ने अपनी तूलिका के माध्यम से स्वामी विवेकानन्द के व्यक्तित्व एवं कृतित्व को उकेरा है। इस अंक में हमने इनकी कविताओं को भी शामिल किया है।

संगीत नाटक अकादेमी प्रतिवर्ष प्रदर्शन कलाओं के क्षेत्र में प्रतिष्ठित कलाकारों को अकादेमी रत्न सदस्यता एवं अकादेमी पुरस्कार से अलंकृत करती है। वर्ष 2013 के मई माह में सम्पन्न अकादेमी अलंकरण समारोह का विस्तृत विवरण सचिव श्रीमती हेलेन आचार्य के आलेख में पाते हैं।

भारत सरकार संस्कृति मंत्रालय द्वारा गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर की एक सौ पचासवीं जयंती का आयोजन व्यापक स्तर पर किया गया। वर्ष 2011 से 2012 तक चले विभिन्न कार्यक्रमों में गुरुदेव को स्मरण किया गया। संगीत नाटक अकादेमी ने रवीन्द्र प्रणति के तहत अनेकानेक कार्यक्रम आयोजित किये जिन्हें श्रीमती सुशील जैन के आलेख रवीन्द्र प्रणति में देखा जा सकता है।

इसके अतिरिक्त साहित्य की विविध विधाएं यथा, निबन्ध, कहानी, संस्मरण, गीत, कविता के माध्यम से इसे और सुरुचिपूर्ण बनाने का प्रयास किया गया है।

संगीत नाटक अकादेमी में राजभाषा हिंदी सिर्फ सरकारी कामकाज तक ही सीमित नहीं है वरन यहां के अधिकारी एवं कर्मचारी हिंदी कार्यशालाओं एवं गोष्ठियों में सक्रियता से भाग लेते हैं। संगीत नाटक अकादेमी में राजभाषा हिन्दी और इसकी विस्तृत गतिविधियों की जानकारी हम 'राजभाषा स्तम्भ' में देख सकते हैं। राजभाषा रूपाम्बरा का यह संयुक्तांक (अंक 3 एवं 4) भी अकादेमी में राजभाषा के बढ़ते कदमों का ही प्रतीक है।

इस अंक को संयुक्तांक कहें या विशेषांक लेकिन है यह समर्पित उस कर्मठ संन्यासी को जिसे हम विवेकानन्द के नाम से जानते हैं।

—सुशील जैन
संपादक एवं सहायक
निदेशक (राजभाषा)

आलेख

स्वामी विवेकानन्द : उनके जीवन की झलकियाँ!

अंकुर आचार्य

स्वामी विवेकानन्द का जन्म 22 जनवरी 1863 को कोलकाता नगरी में हुआ था। उनका नाम नरेन्द्रनाथ रखा गया।

विवेकानन्द के जन्म के एक साल पूर्व उनकी माता भुवनेश्वरी देवी ने दत्ता परिवार की एक वृद्ध मौसी को जो कि वाराणसी में रहते थे, लिखा कि वे वीरेश्वर शिव के पास पूजा अर्चना करें ताकि उन्हें (भुवनेश्वरी देवी को) एक पुत्र की प्राप्ति हो। यह तय किया गया कि हर सोमवार को मौसी वीरेश्वर शिव की पूजा करेंगी, और भुवनेश्वरी देवी विशेष तप करेंगी। कहा जाता है कि इस तरह के व्रत को एक साल तक करने से पुत्र की प्राप्ति होती है। भुवनेश्वरी धैर्य के साथ अपने तप में लीन रहीं। वे अपने दिन जप और ध्यान करने में बिताने लगी। उन्होंने अनेक उपवास किए और अन्य तरह के तप और प्रबल कर दिए। उनकी पूर्ण आत्मा शिव का ध्यान करने लगी, तथा उनका हृदय प्रेम के साथ भगवान शिव पर एकाग्रित होने लगा।

एक रात भुवनेश्वरी ने एक ज्वलन्त स्वप्न देखा। उन्होंने देखा कि भगवान शिव अपनी ध्यान समाधि से उठकर एक पुरुष संतान का रूप ले लेते हैं, जो संतान उनको (भुवनेश्वरी) होने वाली है। वह जागी और सोचने लगी कि क्या यह ज्योति-सागर जिसमें वे अपने आप को निमग्न पा रही थी, स्वप्न मात्र है? उसी समय कोलकाता के दक्षिणेश्वर में श्री रामकृष्ण परमहंस ने वाराणसी की तरफ़ से एक दिव्य ज्योति को कोलकाता में उतरते हुए देखा।

विश्व की रोशनी भविष्य के स्वामी विवेकानन्द पर सोमवार, 12 जनवरी, 1863 को पहली बार गिरी।

नरेन्द्र एक असाधारण, सत्यवादी तथा उच्च आदर्श वाला युवक था। बचपन से ही उनकी प्रतिभा का आभास पाया जा सकता था। उनकी स्मरण शक्ति एक श्रुतिधर (ऐसा व्यक्ति जो किसी के भी शब्द मात्र एक बार सुनने भर से ही हु बा हु याद रख सकता हो) के तुल्य थी। इस कारण उनकी शिक्षा अन्य बालकों जैसी नहीं हुई क्योंकि एक बार सुनने भर से ही वे सब कुछ हमेशा के लिए याद रख सकते थे। एक बार ऐसा हुआ कि प्रवेश (Entrance) परीक्षा से तीन दिन पूर्व उन्हें लगा कि उन्हें रेखागणित (Geometry) के बारे में अल्प ज्ञान है। अत: वह उस विषय को पढ़ने लगे तथा दिन-रात जागकर 24 घण्टों के भीतर ही उन्होंने रेखागणित (Geometry) की चारों पुस्तकें आत्मसात कर लीं।

नरेन्द्र की शारीरिक क्रियाकलापों (Physical activity) तथा खेलकूद में विशेष रूचि थी। उनको घुड़सवारी, व्यायाम, कुश्ती, कसरत, दीवार पर चढ़ना, तैरना आदि में विशेष रुचि तथा योग्यता प्राप्त थी।

अपने दोस्तों से उन्हें आजीवन प्रेम रहा। वह अत्यंत साहसी युवक थे। और यही गुण भविष्य में उनके रामकृष्ण संघ के अध्यक्ष बनने में सहायक सिद्ध हुए।

नरेन्द्र हमेशा हँसमुख प्रवृत्ति के इंसान थे क्योंकि वह एक सक्षम शरीर, तीव्र बुद्धि, असाधारण स्मरण-शक्ति और एक स्वच्छ हृदय से परिपूर्ण थे। उन्हें शारीरिक व्यायाम, वाद्य संगीत, गाना, नृत्य, खेलकूद तथा मित्रों के साथ धमाचौकड़ी मचाना बेहद प्रिय था। जो लोग उनके स्वभाव को नहीं समझ पाते थे वे अक्सर उनके चरित्र पर सन्देह करते थे पर उत्साही नरेन्द्र किसी की प्रशंसा अथवा निन्दा को तनिक मात्र भी अपने हृदय में जगह नहीं देते थे। उनका सिंह स्वरूप गौरवमय हृदय किसी की निन्दा का उत्तर देना उचित नहीं समझता था।

नरेन्द्र दीन-दुखियों के प्रति अत्यंत दयालु थे, बचपन से ही जब भी कोई भिखारी उनसे भीख माँगता था वे उसे दे देते थे जैसे कि कपड़े, बर्तन आदि। चूँकि ऐसा बार-बार

हुआ करता था, इस वजह से एक दिन माता ने उन्हें ऊपरी मंजिल के एक कमरे में बन्द कर दिया। पर जब सड़क पर एक भिखारी जोर-जोर से भिक्षा माँगने लगा, नरेन्द्र ने खिड़की खोलकर अपने माँ के कीमती कपड़े खिड़की से नीचे फेंककर भिखारी को दे दिए। श्री रामकृष्ण के शब्दों में ''नरेन्द्र जन्म से ही ब्रह्मज्ञानी थे।'' एक बच्चे के रूप में उनका सबसे प्रिय खेल ध्यान करना था। वे अपने साथियों के साथ ध्यान करने का खेल खेलते थे और सचमुच ध्यानमग्न हो जाते थे, यहाँ तक कि एक दिन उन्हें एक जहरीले नाग के आगमन का आभास तक नहीं हुआ। उनके साथी भाग खड़े हुए, परन्तु नरेन्द्र ध्यानमग्न रहे। साँप ने उन्हें कुछ क्षति नहीं पहुँचाई और वहाँ से नौ दो ग्यारह हो गया। एक दिन की बात है उन्हीं के शब्दों में ''जब मैं स्कूल में पढ़ रहा था, एक दिन बन्द कमरे में ध्यान करते-करते मैं गहरे ध्यान में चला गया और न जाने कितनी देर तक ध्यानमग्न रहा, कह नहीं सकता। जब मैंने मन को स्थिर किया और सभी सोच-विचारों से रिक्त हुआ अर्थात शून्य हुआ, तो लगा कि मन में आनन्द की एक लहर बहने लगी है, जिसके प्रभाव से मुझे एक तरह का नशा महसूस हुआ। ध्यान खत्म करने के बहुत देर बाद तक मुझे अपने आसन से उठने की इच्छा नहीं हो रही थी। जब मैं उसी अवस्था में ध्यान खत्म करने के पश्चात् बैठा हुआ था, मैंने अचानक एक विचित्र सन्यासी को सामने प्रकट होते हुए देखा, कहाँ से मुझे ज्ञात नहीं था। वह सन्यासी मुझसे कुछ ही दूरी पर खड़े हुए थे। सारा कमरा उनकी दिव्य ज्योति से भरा हुआ था। वे गेरूए वस्त्र पहने हुए थे, और उनके हाथ में कमण्डल था। उनके मुखमण्डल में सभी चीजों के प्रति अनासक्ति से उत्पन्न एक ऐसा शान्त और अन्तर्मुखी भाव था कि मैं अचम्भित रह गया और उनके प्रति अति आकर्षित हुआ। वे धीमी गति से मेरी ओर आने लगे, उनकी आँखें मुझ पर एकांत निग्रह रखें, जैसे कि वे मुझसे कुछ कहना चाह रहे हों। परन्तु मैं भयभीत हो उठा और स्थिर ना बैठ सका। मैं आसन छोड़कर दरवाजा खोलकर जल्दी से भाग गया। दूसरे ही क्षण मुझे विचार आया कि यह क्या मूर्खों वाला भय है, मैं तुरन्त ही कमरे में उस सन्यासी को सुनने के लिए लौट आया, परन्तु वे अब उस कमरे में नहीं थे। मैं काफी अर्से तक वहाँ व्यर्थ ही खड़ा रहा, निराशा और पछतावा लिए सोचता रहा कि मैं भी कितना मूर्ख हूँ उन्हें बिना सुने ही कमरे से भाग गया। मैंने जीवन में अनेक सन्यासियों को देखा है, परन्तु ऐसी विचित्र आभा किसी के भी मुखमण्डल पर नहीं देखी। वह चेहरा मेरे हृदय में हमेशा के लिए रेखांकित हो गया है। यह मेरा भ्रम भी हो सकता है, पर बारम्बार मैं यही सोचता हूँ कि उस दिन मुझे भगवान बुद्ध के दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ।''

सत्य-लाभ की तीव्र इच्छा रखते हुए नरेन्द्र ने ध्यान का अभ्यास किया, पूर्व और पश्चिम के धर्म तथा दर्शन का अध्ययन किया, और अनेक धर्म गुरुओं से भेंट की, परन्तु वे अपनी खोज में असफल रहे। फिर एक दिन सन् 1881 को जब नरेन्द्र जनरल असेम्बली के महाविद्यालय में पढ़ रहे थे, महाविद्यालय के प्रोफेसर डब्ल्यू डब्ल्यू हेस्टी, विलियम वर्ड्सवर्थ की कविता 'The Excursion' में समाधि (Trance) के उल्लेख के सन्दर्भ को समझा रहे थे। वे कहने लगे, ''ऐसा अनुभव मन की पवित्रता का फल और किसी एक वस्तु पर एकान्त ध्यान का फलस्वरूप है, और यह अनुभव बड़ा दुर्लभ है, विशेषकर इन दिनों। मैंने सिर्फ एक ही ऐसे व्यक्ति को देखा है जिन्हें मन की इस धन्य अवस्था को प्राप्त है और वे हैं दक्षिणेश्वर (कोलकाता के समीप) के रामकृष्ण परमहंस। यह आप तभी समझ सकोगे जब आप स्वयं वहाँ जाकर उन्हें देखेंगे।'' अन्तत: नरेन्द्रनाथ की भेंट दक्षिणेश्वर के मन्दिर के बगीचे में श्री रामकृष्ण परमहंस से हुई। नरेन्द्र ने रामकृष्ण से एक सरल प्रश्न पूछा, ''सर, क्या आपने कभी भगवान को देखा है?'' मुहूर्त मात्र की दुविधा के बिना श्री रामकृष्ण ने उत्तर दिया, ''हाँ मैंने भगवान को देखा है। मैं उन्हें ऐसे ही देखता हूँ जैसे कि मैं तुम्हें देखता हूँ, अपितु और ज्यादा स्पष्टता के साथ। भगवान देखे जा सकते हैं, आप उनसे बात कर सकते है। पर कौन भगवान को चाहते हैं। लोग अपनी पत्नी, बच्चों एवं परिजनों हेतु आँसुओं की नदी बहाते हैं, परन्तु कौन भगवान के दर्शन हेतु आँसू बहाते है? अगर कोई भगवान के लिए रोता है, उसे भगवान अवश्य दिखाई देते हैं।'' ''यह बात मुझे भा गई'', नरेन्द्रनाथ ने भविष्य के जीवन में कहा। ''पहली बार मुझे ऐसे व्यक्ति मिले जो यह कहने का साहस रखते थे कि उन्होंने भगवान को देखा है, धर्म एक वास्तविकता है, महसूस

करने के लिए, अनुभव करने के लिए हमारे संसार के अनुभव से कोटि-गुणा अधिक तीव्रता से। मैं हर रोज उस इंसान (रामकृष्ण परमहंस) के पास जाने लगा, और मैंने वास्तव में देखा कि धर्म दिया जा सकता है। एक स्पर्श, एक नज़र, एक पूरे जीवन को बदल सकता है।'' सन् 1881 से सन् 1886 के बीच रामकृष्ण और नरेन्द्र के बीच एक घनिष्ठ सम्बन्ध तैयार हुए। नरेन्द्र का सन्देह और अविश्वास, रामकृष्ण की आध्यात्मिक शक्ति और अनुभूतियों द्वारा धीरे-धीरे दूर हो गया। रामकृष्ण के प्यार और सुहृदय ने नरेन्द्र को हमेशा के लिए उनका बना दिया। रामकृष्ण ने नरेन्द्र को 'राम' मन्त्र दिया और अनेक प्रकार की साधनाएँ करवाई जैसे कि अद्वैत साधना। नरेन्द्र ने अपने गुरु से व्यावहारिक वेदान्त भी सीखा और साथ ही यह भी सीखा की कैसे मनुष्य को भगवान समझकर उसकी सेवा करनी चाहिए। रामकृष्ण को किसी भी पुरुष अथवा नारी के शारीरिक गठन से उनके चरित्र के बारे में पता लग जाता था। उन्होंने नरेन्द्र के शारीरिक गठन को देखते हुए कहा था ''तुम्हारे शरीर में सारे शुभ लक्षण है, सिर्फ एक विकार है कि तुम सोते हुए गहरी साँस लेते हो (you breathe heavily when sleeping)। योगियों का कहना है कि यह अल्प आयु का लक्षण है।''

अपने परिवार को अत्याधिक आर्थिक कठिनाईयों में छोड़कर नरेन्द्र के पिता सन् 1884 में चल बसे। यद्यपि नरेन्द्र ने 1883 में महाविद्यालय से स्नातक की डिग्री प्राप्त कर ली थी, तथापि उन्हें नौकरी नहीं मिली। इस समय वे अत्याधिक कष्टों तथा कठिनाइयों से गुजरे, परन्तु कभी भगवान पर विश्वास नहीं छोड़ा। उनके गुरु रामकृष्ण ने हमेशा उनका पथ प्रदर्शित किया और उनकी रक्षा की। अत्याधिक कठिनाइयों से गुजरते हुए, नरेन्द्र को ख्याल आया कि ''भगवान श्रीरामकृष्ण की प्रार्थना सुनते हैं, अत: क्यों न मैं उन्हें भगवान से अपने लिये प्रार्थना करने के लिए कहूँ कि मेरे आर्थिक अभाव/गरीबी को दूर कर दें। मैं जल्दी से दक्षिणेश्वर गया और रामकृष्ण जी से हठ करने लगा कि वे भगवान से मेरे भूखे परिवार के लिए प्रार्थना करें। तब उन्होंने कहा, 'बेटा, मैं ऐसी प्रार्थना नहीं कर सकता, पर तुम ख़ुद क्यों नहीं जाकर माँ से अपने लिए माँगते। तुम्हारे सारे कष्टों का मूल उनके प्रति तुम्हारे निरादार है।' मैंने कहा कि 'मैं माँ को जानता नहीं, अत: आप खुद उनसे मेरी ओर से बात कीजिए, आपको ऐसा करना होगा।' श्री रामकृष्ण ने करूण-भाव से कहा, 'मेरे प्रिय पुत्र, मैंने बार-बार ऐसा किया, पर तुम उन्हें स्वीकार नहीं करते हो, अत: वे तुम्हारे लिए मेरी प्रार्थना नहीं सुनती। आज मंगलवार है, आज रात काली मन्दिर में जाओ और उनसे मनचाहा वर माँग लो। वह वर तुम्हें मिलेगा। वे सम्पूर्ण ज्ञान स्वरूप हैं, ब्रह्म की अनिर्वचनीय शक्ति है। अपनी इच्छा मात्र से ही उन्होंने इस संसार की रचना की है। उनमें सब कुछ देने की शक्ति एवं क्षमता है।' मैंने प्रत्येक शब्द का विश्वास किया और उत्साह पूर्वक रात्रि की प्रतिक्षा करने लगा। लगभग रात के 9 बजे श्री रामकृष्ण ने मुझे मन्दिर जाने को कहा। जैसे ही मैं मन्दिर गया, मैं एक दिव्य नशे से भर गया। मेरे पैर डगमगाने लगे। मेरा हृदय जीवन्त भगवती के दर्शन पाने और उनकी बात सुनने की अत्यानन्द की आकांक्षा करने लगा। यह विचार मेरे तन-मन में भर गया। मन्दिर पहुँचकर, जैसे ही मैंने मूर्ति की ओर देखा, मैंने पाया कि देवी माँ जीवन्त और चिन्मयी हैं, दिव्य प्रेम और सौन्दर्य का न खत्म होने वाला झरना (Perennial fountain) हैं। मैं भक्ति और प्रेम के उभरती हुई लहरों में पकड़ा गया। आनन्द की भाव-समाधि में, मैंने बार-बार माँ को प्रणाम किया और प्रार्थना की 'माँ मुझे विवेक दो, मुझे वैराग्य दो, मुझे ज्ञान और भक्ति दो, और आशीष स्वरूप मुझे हमेशा तुम्हारे इस रूप का निरंतर दर्शन हो'। मेरी आत्मा एक अपूर्व शांति से भर गई, मैं संसार को भूल गया। केवल देवी माँ मेरे हृदय में चमकने लगी। जैसे ही मैं वापस लौटा, श्री रामकृष्ण ने मुझसे पूछा कि क्या मैंने अपनी सांसारिक अभावों की पूर्तियों के लिए माँ से प्रार्थना की। मैं इस प्रश्न से चमक गया और मैंने कहा, 'नहीं सर, मैं तो उस विषय को सम्पूर्ण भूल गया, इसका अभी कोई उपाय है?' 'फिर से जाओ', उन्होंने कहा, 'और उन्हें (माँ को) अपनी सांसारिक आवश्यकताओं के बारे में कहो'। मैं फिर मन्दिर की ओर गया, पर माँ के दर्शन मात्र से ही अपना सम्पूर्ण उद्देश्य भूल गया। बार-बार माँ को प्रणाम किया और केवल प्रेम तथा भक्ति की माँग की। श्री रामकृष्ण ने फिर मुझसे पूछा, और मैंने उन्हें अपनी कहानी बताई। 'कितने विचारहीन हो तुम, क्या तुम अपने पर काबू करके उन चन्द शब्दों को नहीं कह

पाए? जाओ एक बार और चेष्टा करो और उनसे अपने लिये प्रार्थना करो'। मैं तृतीय बार मन्दिर गया पर वहाँ घुसते ही एक घोर शर्म (Terrible shame) ने मुझे अभिभूत किया। मैंने सोचा कि क्या तुच्छ चीज मैं माँ से माँगने आया हूँ। जैसे कि मैं राजा के सामने आकर उनसे कुछ सब्जियाँ माँग रहा हूँ, मैं कितना मूर्ख हूँ। शर्म और ग्लानि के साथ मैंने माँ का नमन किया और श्रद्धावत उनसे बोला, 'माँ मुझे सिर्फ ज्ञान और भक्ति देना'। मन्दिर से निकलने के बाद मुझे समझ में आया कि यह सब श्री रामकृष्ण की इच्छा से ही घटा। नहीं तो यह कैसे हो सकता है कि मैं अपने उद्देश्य में एक बार नहीं अपितु तीन बार असफल रहा। मैं श्री रामकृष्ण के पास गया और मैंने उनसे कहा कि 'सर, यह आप हैं, जिन्होंने मेरे मन पर एक ऐसा प्रभाव डाला कि मैं बार-बार भूल गया। अत: अब मुझे कृपया यह वर दें कि मेरे परिवार को और दरिद्रता की वेदना न सहनी पड़े।' श्री रामकृष्ण ने कहा, 'ऐसी प्रार्थना मेरी जीभ (Tongue) पर कभी नहीं आती। मैंने तुम्हें खुद अपने लिये प्रार्थना करने की सलाह दी, पर तुम वैसा नहीं कर सके। लगता है तुम्हारे भाग्य में सांसारिक सुख नहीं लिखा है। इस बारे में, मैं कुछ नहीं कह सकता।' पर मैं कहाँ उन्हें छोड़ने वाला था, मैंने दबाव दिया कि वे मेरी प्रार्थना स्वीकार करें। अन्तत: उन्होंने कहा 'ठीक है, तुम्हारे घर के लोग कभी भी सादे भोजन तथा कपड़ों का अभाव महसूस नहीं करेंगे'।'' इसके उपरान्त नरेन्द्र ने श्री रामकृष्ण को माँ काली की प्रशंसा में एक गाना सिखाने को कहा। नरेन्द्र के माँ काली की स्वीकार करने की बात से रामकृष्ण को अत्यन्त खुशी हुई, और उन्होंने यह गाना नरेन्द्र को सिखाया :

माँ, तुम ही एकमात्र त्राता हो,
तुम तीन गुणों के आधार हो
सबसे बड़े से भी बड़े तुम, तुम दयालु हो, जानता हूँ मैं,
जो हमारे कड़वे से कड़वे शोक को निवारती हो,
तुम पृथ्वी में हो, पानी में तुम,
तुम सबके मूल में हो।
मुझमें, सभी प्रणियों में, बसे हो तुम,
यद्यपि आकार हो तुम, तथापि तुम हो निराकार अस्तित्व।
संध्या हो तुम, और गायत्री,
तुम इस सृष्टि को धारण किए हुए हो।
माँ सहायता हो तुम,
उनके लिये जिनका तुम्हारे सिवा कोई और सहारा नहीं,
ओ, शिव के चिरंतन प्रिय।

नरेन्द्रनाथ ने यह गाना सारी रात गाया। भगवान के साकार रूप को यूँ स्वीकार करना नरेन्द्रनाथ के जीवन की एक महत्वपूर्ण घटना थी। अभी तक उन्हें भगवान को माँ के रूप में पूजने का तात्पर्य तथा पूजा के लिए मूर्ति तथा चीजों के प्रयोग का रहस्य मालूम न था। अब उन्हें इस तरह की पूजा का रहस्य मालूम हो गया और उनका आध्यात्मिक जीवन परिपूर्ण हो गया। इससे श्रीरामकृष्ण को अत्यन्त खुशी हुई। कई साल बाद स्वामी विवेकानन्द ने कहा, ''मैं काली को मानता नहीं था। परन्तु आर्थिक अभाव के अवसर का लाभ उठाकर, उन्होंने मुझे अपना दास बना लिया। तब से मैं जहाँ भी जाता हूँ, एक छोटी लड़की (काली) को मेरी उंगली पकड़कर मुझे पथ दिखाते हुए देखता हूँ''।

1885-1886 के बीच एक दिन जब श्री रामकृष्ण कोसीपुर में निवास कर रहे थे, तो नरेन्द्र ने उनसे निर्विकल्प समाधि के अनुभव की प्रार्थना की। शाम को, ध्यान के वक्त वे शारीरिक चेतना खो बैठे और उन्हें ऐसा लगा कि शरीर का अस्तित्व है ही नहीं। उन्हें लगा कि सूर्य, चन्द्र, आकाश, समय आदि एकागत हो गये और फिर गल कर कहीं दूर अज्ञात में लुप्त हो गये। वे लगभग निराकार ब्रह्म में लीन हो गये, परन्तु अहं की लेश-मात्र होने के कारण वे समाधि से निकल आ सके। समाधि से निकलने के बाद नरेन्द्र को अनिर्वचनीय शान्ति का अनुभव हुआ। जैसे उन्होंने श्री रामकृष्ण के कक्ष में प्रवेश किया, श्री रामकृष्ण ने कहा, माँ ने तुम्हें सब कुछ दिखा दिया है। पर यह अनुभूति, यह ज्ञान, तिजोरी में बन्द गहने के बराबर तुमसे छुपा लिया जायेगा और मेरे संरक्षण में रहेगा। तिजोरी की चाबी मैं अपने पास रखूँगा। तुम्हारे इस संसार में आने का जो उद्देश्य है उसकी पूर्ति के बाद यह तिजोरी फिर से खोल दी जाएगी। और तुम फिर से सब कुछ जान सकोगे, जैसे कि तुम अब जान पा रहे हो। बाद में विवेकानन्द ने एक शिष्य को बताया ''श्री रामकृष्ण के महासमाधि (16.8.1886) के दो या तीन दिन पूर्व, वे जिनको श्री रामकृष्ण काली कहते थे, इस शरीर में

प्रवेश कर गयी। यह वे है (काली) जो मुझे इधर-उधर ले जाती हैं और मुझे कर्म करने को मजबूर करती है। वे (काली) मुझे चुप बैठने नहीं देती तथा मुझे निजी सुखों को देखने नहीं देती। यह शरीर आलसी रहने के लिए नहीं बनाया गया है।''

श्री रामकृष्ण के महासमाधि के बाद विवेकानन्द और कुछ अन्य रामकृष्ण के शिष्यों ने पहला रामकृष्ण मठ वरानगर में स्थापित किया, तथा 1887 के शुरुआत में सन्यास का व्रत लिया। वे शास्त्र का अध्ययन करने लगे, गम्भीर तपस्या और ध्यान करने लगे और अपना चरित्र गठन करने लगे जिससे कि वे भविष्य में गुरु बन सकें। कहा जाता है कि, ''वह सन्यासी पवित्र है जो चलते जाता है, ओर वह नदी पवित्र है जो बहती जाती है।'' सन् 1888 में विवेकानन्द ने मठ छोड़ा, एक निर्धन चलता-फिरता सन्यासी का जीवन अपनाया। उनके पास सिर्फ एक डण्डा था, एक कमण्डल, और उनके दो सबसे प्रिय पुस्तकें—भगवद्गीता तथा 'द इमिटेशन ऑफ क्राइस्ट' (The Imitation of Christ)।

स्वामी जी (जैसे कि विवेकानन्द जाने जाते हैं रामकृष्ण संघ में) पहले वाराणसी गये। एक सवेरे वाराणसी में माँ दुर्गा के मन्दिर में जाने के बाद, स्वामी जी एक जगह से गुजर रहे थे, जहाँ एक तरफ एक तालाब-सा था, और दूसरे तरफ एक ऊँची दीवार। यहाँ बन्दरों के एक झुण्ड ने उन्हें घेर लिया। वह उनके पैर को पकड़ने लगे। जैसे स्वामी जी आगे बढ़ने की कोशिश में लगे थे वैसे बन्दर और निकट आने लगे। स्वामी जी दौड़ने लगे। पर जितने ही तेजी से वे भागने लगे, उतने ही तेजी से बन्दर आने लगे और वे स्वामी जी को काटने लगे। जब उनके बच भागने की उम्मीद खत्म होने वाली थी, एक वृद्ध सन्यासी ने उन्हें आवाज लगाया : ''जानवरों का सामना करो'' (Face the brutes)। यह सुनकर स्वामी जी होश में आए। वे पलटे और उन्होंने साहसपूर्वक बन्दरों का सामना किया। जैसे ही उन्होंने ऐसा किया, बन्दर डर गए और फिर भाग खड़े हुए। श्रद्धा और कृतज्ञता के साथ स्वामी जी ने सन्यासी को 'नमो नारायण' कहा और चले गए। न्यूयार्क (New York) में सालों बाद स्वामी विवेकानन्द ने इस घटना का जिक्र करते हुए कहा : ''यह सारे जीवन-भर के लिए एक शिक्षा है—भयानक का सामना करो, साहसपूर्वक सामना करो। बन्दरों के जैसे, जीवन की कठिनाइयाँ गायब हो जाती हैं जब हम उनसे भागने का अंत करते हैं। अगर हमें कभी-भी मुक्ति मिलना हो, तो प्रकृति पर जय करके ही मिलेगी, भाग के कदापि नहीं। कायर कभी विजयी नहीं होते। हमें भय, विपत्तियों तथा अज्ञानता का सामना करना होगा अगर हम उन्हें दूर भगाने की इच्छा रखते हैं।''

अपने परिव्राजक दिनों के दौरान उन्हें अलग-अलग आध्यात्मिक अनुभूतियाँ हुई। उदाहरण स्वरूप उन्हें एकबार दिव्य दृष्टि से दिखाई पड़ा सिन्धु नदी के तट पर एक वृद्ध पुरुष वेदों के गायन करते हुए (Chanting Vedic hymns)।

उन्होंने स्पष्ट सुना ऋग्वेद के गायत्री मन्त्र का आह्वान (Invocation)। स्वामी विवेकानन्द को विश्वास था कि इस दिव्य अनुभूति से उन्हें प्राथमिक आर्यों के मन्त्र उच्चारण तथा संगीत का पूर्ण आविष्कार हुआ (He rediscovered the musical cadences of the early Aryans)। उन्हें ईश्वर के विराट रूप का दर्शन हर एक प्राणी में हुआ (He experienced the presence of the Cosmic God in all beings)। ''यथा ब्रह्माण्डे तथा पिण्डे''। उन्होंने विराट को बीज में पाया एक बार (He experienced the macrocosm in the microcosm once)।

स्वामी विवेकानन्द ने प्राय: पैदल ही लगभग सम्पूर्ण भारत के तीर्थ स्थानों की यात्रा की। इस तरह उन्हें लोगों के जीवन तथा दशा की प्रत्यक्ष अनुभूति या आत्मानुभूति हुई। सर्वसाधारण के दयनीय जीवन को देखते हुए उन्होंने अनेकों बार आँसू बहाए। वास्तव में वही दूसरों के दर्द/दु:खों को समझ सकता है, जो स्वयं उस दर्द/दु:खों से गुजर चुका हो। एक बार अपने स्वाभाविक तरह से, उन्होंने कहा कि वह भगवान जो इस जीवन में रोटी का एक टुकड़ा नहीं दे सकता, उससे अगले जन्म में स्वर्ग प्राप्ति हेतु विश्वास नहीं किया जा सकता। उन्होंने समझा कि धर्म भारत की अत्यावश्यक वस्तु नहीं है, क्योंकि जैसे श्री रामकृष्ण ने कहा था, ''भूखे पेटों के लिए धर्म नहीं'' (Religion is not for an empty stomach)। उन्होंने राजा-महाराजाओं का ध्यान अपनी प्रजा की ओर करना चाहा, पर उन्हें इसमें अधिक सफलता नहीं

मिली। स्वामी विवेकानन्द ने पाया कि भारत के गरीबों का दिल अब भी उदार/जिन्दा है, जबकि अमीर लोग लगभग वह खो चुके है। अपनी भावनाओं को उन्होंने एक बार ऐसे प्रकट किया, ''मैं बार-बार जन्म लेना चाहता हूँ, और हज़ारों दु:खों का सामना करना चाहता हूँ ताकि मैं उस एक भगवान की पूजा कर सकूँ जो अभी जीवित है, उस एक भगवान जिस पर मैं आस्था रखता हूँ, सभी आत्माओं का एकत्रित स्वरूप—विशेषकर मेरा भगवान दुष्ट रूप में, मेरा भगवान दु:खी रूप में, मेरा भगवान सभी जातियों के दीन-दरिद्रों के रूप में, मेरे विशेष पूजा के पात्र हैं।''

भारत-भ्रमण करते हुए, स्वामी विवेकानन्द ने सितम्बर 1893 को शिकागो में होने वाली पार्लियामेण्ट ऑफ रिलिजन्स (Parliament of Religions) के बारे में सुना। कुछ भारतीय राजाओं और जाने-माने लोगों ने स्वामी विवेकानन्द पर दबाव डाला कि वे वहाँ जायें और हिन्दू धर्म का प्रतिनिधित्व करें, पर स्वामी जी ने मना कर दिया। बाद में जब एक दिव्य अनुभूति में स्वामी जी ने श्री रामकृष्ण का आदेश सुना, और फिर बाद में शारदा माँ का भी आदेश आया तो वे जाने के लिए राजी हो गये। स्वामी विवेकानन्द ने 31 मई 1893 को अमेरिका के लिए प्रस्थान किया। जाने से पहले उन्होंने अपने गुरुभाई ब्रह्मानन्द और तुरीयानन्द से भेंट की। उन्होंने उनसे कहा, ''मैंने भारत का भ्रमण किया परन्तु, मेरे भाइयों, मुझे अत्याधिक दु:ख हुआ अपनी आँखों से भारत के लोगों की गरीबी को देखते हुए। मैं अपने आँसू नहीं रोक पाया। यह मेरा मानना है कि इन लोगों की गरीबी दूर किये बिना, दु:खों का निवारण किये बिना धर्म का प्रचार करना व्यर्थ है। इसी कारण—अपने गरीब भारतवासियों के उद्धार का उपाय निकालने के लिए—मैं अमेरिका जा रहा हूँ।'' तुरीयानन्द को सम्बोधित करते हुए, विवेकानन्द ने कहा, ''हरि भाई, मैं तुम्हारे यथा-कथित धर्म को समझ नहीं पाया।'' भावुकता से काँपते हुए विवेकानन्द ने अपने हृदय पर हाथ रखते हुए कहा, ''परन्तु मेरे हृदय का विकास हुआ है, मेरा हृदय काफी बड़ा हो गया है, और मैंने दूसरों के दर्द को महसूस करना सीख लिया है। विश्वास करो मैं इसे (इस दर्द को) बड़े दु:ख से अनुभव करता हूँ।'' वे और बोल न पाए, उनकी आँखों से आँसू छलकने लगे।

विवेकानन्द शिकागो (Chicago) 30 जुलाई 1893 को पहुँचे। उन्हें वहाँ बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, उन्हें वहाँ बहुत अकेलापन महसूस हुआ। आखिरकार प्रोफेसर जॉन हेनरी राइट (John Henry Wright) की सहायता तथा श्रीमती जार्ज डब्ल्यू हेल (Mrs. George W. Hale) के सहयोग से उन्हें सोमवार 11 सितम्बर, 1893 को प्रात: 10 बजे के बाद Parliament of Religions को हिन्दू धर्म के प्रतिनिधि के रूप में सम्बोधित करने का अवसर प्राप्त हुआ। 27 सितम्बर तक के उनके सम्बोधन ने नया इतिहास रचा।

New York Herald पत्रिका का कहना था, "He is undoubtedly the greatest figure in the Parliament of Religions. After hearing him we feel how foolish it is to send missionaries to this learned nation"। वहाँ के चार हजार दर्शक स्वामी विवेकानन्द के हर एक शब्द को ताकते थे (would hang upon every word of his)। Boston Evening Transcript का कहना था, "At the Parliament of Religions they used to keep Vivekananda until the end of the Programme to make people stay until the end of the session. On a warm day, when a prosy speaker talked too long and people began going home by hundreds, the Chairman would get up and announce that Swami Vivekananda would give a short address just before the benediction. Then he would have the peaceable hundreds perfectly in tether. The four thousand fanning people in the hall of Columbus would sit smiling and expectant, waiting for an hour or two of other men's speeches to listen to Vivekananda for fifteen minutes. The Chairman knew the old rule of keeping the best until last"। अपनी सफलता का राज स्वामी विवेकानन्द ने अपने अटूट ब्रह्मचर्य को ठहराया। इस सफलता के बाद स्वामी विवेकानन्द ने अमेरिका के अनेक राज्यों में अनेकों भाषण दिये। उनका कहना था कि 'मुझे

पाश्चात्य को एक सन्देश देना है, जिस तरह बुद्ध को पूर्व को सन्देश देना था। "I have a message to the West as Buddha had a message to the East"। स्वामी विवेकानन्द ने पाश्चात्य (West) में क्या सिखाया? उन्होंने वेदान्त सिखाया, भारत के हजारों साल पुराने उपनिषद् का सार्वभौमिक (Universal) धर्म तथा दर्शन। उनका भाईचारे और सुहृदय का एक अभिभूत करने वाला सन्देश था। उनके अनुसार मनुष्य को अपने देवत्व का प्रकाश करना ही उनके जीवन का परम लक्ष्य है। "Each soul is potentially divine. The goal is to manifest this divinity within by controlling nature, external and internal. Do this either by work, or worship, or psychic control, or philosophy - by one, or more, or all of these - and be free. This is the whole of religion. Doctrines, or dogmas, or rituals, or books, or temples, or forms, are but secondary details." "I have been asked many times, 'why do you laugh so much and make so many jokes?' I become serious sometimes - when I have stomach-ache! The Lord is all blissfulness. He is the reality behind all that exists, He is the goodness, the truth in everything. You are his incarnations. That is what is glorious. The nearer you are to Him, the less you will have occasions to cry or weep. The further we are from Him, the more will long faces come. The more we know of Him, the more misery vanishes. If one who lives in the Lord becomes miserable, what is the use of living in Him? What is the use of such a God? Throw him overboard into the Pacific Ocean! We do not want Him!"

"Religion gives you nothing new. It only takes off obstacles and lets you see your Self."

पाश्चात्य में साढ़े तीन साल रहने के बाद, विवेकानन्द वहाँ के कुछ पाश्चात्य शिष्यों के साथ भारत लौट आए। 15 जनवरी, 1897 को वे कोलम्बो पहुँचे और वहाँ उनका भव्य स्वागत किया गया। वहाँ से अल्मोड़ा तक उन्होंने हजारों लोगों को सम्बोधित किया, सोये भारत को जगाया। 1 मई 1897 को उन्होंने कलकत्ता में रामकृष्ण मिशन की स्थापना की। उन्होंने रामकृष्ण संघ की आदर्श रखा, ''आत्मनो मोक्षार्थं जगद्धिताय च'' ''अपने मोक्ष के लिए, और जगत के हित के लिए''। उन्होंने हिमालय के मायावती में एक अद्वैत आश्रम, और मद्रास में एक आश्रम की संस्थापना की। उन्होंने वेदान्त तथा श्री रामकृष्ण के भावों को प्रचार करने के लिए तीन पत्रिकाएँ—ब्रह्मवादिन, प्रबुद्ध भारत तथा उद्‌बोधन आरम्भ की। अंग्रेजी में प्रबुद्ध भारत तथा बंगाली में उद्‌बोधन आज भी छापे जा रहे हैं। 1898 में गंगा के पार कलकत्ता के नजदीक उन्होंने बेलुर में 120 बीघा (40 एकड़) जमीन खरीदी। वहाँ रामकृष्ण संघ का मुख्यालय (HQ) स्थापित हुआ। इसके पश्चात् वे फिर अमेरिका गये। वहाँ उन्होंने अपने गुरु भाई स्वामी अभेदानन्द से एक दिन कहा, ''मैं सिर्फ तीन या ज्यादा से ज्यादा चार साल और जिऊँगा।'' स्वामी अभेदानंद के विरोध करने पर स्वामी विवेकानन्द ने कहा, ''तुम मुझे समझते नहीं हो, मैं बहुत बड़ा हो रहा हूँ। मेरी आत्मा इतनी विस्तृत हो रही है कि कभी-कभी मुझे लगता है कि यह शरीर मुझे और नहीं झेल पाएगा। मैं विशाल होने वाला हूँ। निश्चय ही यह माँस और खून के पिंजरे मुझे और ज्यादा दिन अपने में सीमित नहीं रख सकते।''

अमेरिका तथा यूरोप का भ्रमण करके स्वामी विवेकानन्द 9 दिसम्बर 1900 को बेलूर मठ लौटे। वहाँ उन्होंने अपने मित्र तथा शिष्य Josephine MacLeod से एक दिन कहा, ''मैं 40 साल तक नहीं जीऊँगा''।Josephine MacLeod ने जवाब दिया, ''परन्तु स्वामी, बुद्ध ने तो अपना प्रचार कार्य 40 और 80 साल के बीच किया''। इस पर स्वामी विवेकानन्द ने उत्तर दिया, ''मैंने अपना सन्देश दे दिया है, अब मुझे जाना होगा।'' श्री रामकृष्ण और भगवती माँ उनके मन में भाने लगे। वे इस प्रकार रहने लगे कि वे देवी माँ के बालक मात्र हों, या वह बालक हो जो दक्षिणेश्वर में श्री रामकृष्ण के चरणों में खेला करता था। उन्होंने कहा, ''एक बड़ी तपस्या और ध्यान मेरे ऊपर आ रहा है, और मैं मृत्यु की तैयारी कर रहा हूँ''। "A great tapasya and meditation has come upon me, and I am making

ready for death"। उनके शिष्यों तथा गुरु भाइयों को श्री रामकृष्ण का कथन याद आ गया कि, ''नरेन्द्र अपना काम पूरा करने के बाद हमेशा के लिए समाधि में लीन हो जाएगा'' और ''जब उसे मालूम हो जाएगा कि वे कौन है, वे अपने शरीर में रहने से इनकार कर देगा''। एक गुरु भाई ने अनायास ही पूछा ''आप क्या जान गये हैं कि आप कौन हैं?'' विवेकानन्द का उत्तर, ''हाँ, मैं अब जान गया हूँ'' ने सबको चुप करा दिया।

एक दिन, उनकी महासमाधि के एक सप्ताह पूर्व, स्वामी विवेकानन्द ने अपने एक शिष्य को बंगाली पंचांग लाने को कहा। अगले दिन उन्हें पंचांग का अध्ययन करते हुए देखा गया, जैसे कि वे किसी चीज के बारे में दुविधा में थे जो कि उन्हें जानना था। उनके महासमाधि के बाद, उनके गुरु भाई तथा शिष्यों को ज्ञात हुआ कि वे अपने शरीर को निकाल फेंकने की तारीख खोज (ढूँढ़) रहे थे और जो तारीख उन्होंने खोजी, वह थी 4 जुलाई (American Independence Day)।

4 जुलाई, 1902 को 39 वर्ष की उम्र में स्वामी विवेकानन्द ने स्वेच्छा से महासमाधि ली।

"You know," he once said to Mrs. Hansbrough in San Francisco, "I may have to be born again." The reason he gave was not that he would have to come back with Sri Ramakrishna, as he had said at other times; rather, the will to return would be his own as well as his Master's and of a piece with his own vastness of heart. "I may have to be born again", he said, "because I have fallen in love with Man."

इस आलेख की मूल अंग्रेजी की निम्नलिखित पुस्तकों की सहायता से रचना की गई है :

1. 'Sri Ramakrishna and his Divine Play' by Swami Saradananda. Translated by Swami Chetanananda.
2. 'East Meets West–Vivekananda' by Swami Chetanananda.

भारत के भागीरथ : स्वामी विवेकानन्द

तेजस्वरूप त्रिवेदी

भारत की राजनीतिक, सांस्कृतिक व सामाजिक स्थितियों पर स्वामी विवेकानन्द के आविर्भाव का क्या प्रभाव पड़ा, विवेकानन्द सार्धशती के अवसर पर आज इसका चिंतन, मनन करने की पुनः आवश्यकता है।

गीता में कर्मयोगी श्रीकृष्ण ने उद्घोष किया है ''यदा-यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत। अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं-सृजाम्यहम्।'' अर्थात जब-जब धर्म की हानि और अधर्म की वृद्धि होती है तब-तब मैं अवतीर्ण होता हूँ। इस प्रकार हम देखते हैं कि भगवान राम, श्रीकृष्ण, शाक्यमुनि गौतम, शंकराचार्य, रामानुज, चैतन्य महाप्रभु और रामकृष्ण परमहंस की इस धरा पर नरेन्द्रनाथ का आविर्भाव हुआ जो अपने गुरू परमहंस रामकृष्ण से दीक्षित होकर भविष्य में विवेकानन्द के नाम से प्रख्यात हुए।

अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में जब स्वामी जी का आविर्भाव हुआ, उस समय भारत की राजनैतिक स्थिति एक संक्रांति के दौर से गुजर रही थी, सन 1857 का स्वतंत्रता संग्राम सफल न हो सका फिर भी क्रांतिकारियों के युवा मन, हताश और निराश नहीं थे। अंग्रेजों की दमनपरक व्यवस्था से तानाशाही का दौर कायम था। सन् 1863 में विवेकानन्द का आविर्भाव शायद नियति की पूर्व निर्धारित व्यवस्था थी जिसने विवेकानन्द के रूप में एक ऐसे व्यक्तित्व को जन्म दिया जिसने आहत एवं त्रस्त मनुष्यता में जागरण की भैरवी का स्वर मुखर किया और उस पराधीन भारत में राष्ट्रीयता की अलख जगाते हुए नर को उसके नारायण स्वरूप से परिचित कराया।

ईसा, बुद्ध, महावीर के अंहिसा एवं दया के भाव उस समय के शासक वर्ग में अपना असर न दिखा सके। जरूरत थी गांडीवधारी अर्जुन एवं सुदर्शन चक्र धारी श्रीकृष्ण की जो दुष्टों का दलन कर सके। स्वामी जी ने यही किया। उन्होंने मनुष्यता को कोरी भावुकता से निकालकर उत्साह एवं साहस के साथ मुकाबला करने की प्रेरणा दी। आध्यात्मिकता के तेज से आप्लावित दण्डी स्वामी युवा विवेकानन्द के विग्रह में नर एवं नारायण के दर्शन होते हैं।

ब्रिटिश भारत में अपने-अपने ढंग से स्वतन्त्रता की लड़ाई लड़ रहे गोपालकृष्ण गोखले, मोहनदास करमचंद गाँधी, सुभाषचन्द्र बोस, बाल गंगाधर तिलक, रवीन्द्रनाथ टैगोर, अरविन्द सरीखे नेता स्वामी विवेकानन्द की मनीषा से निःसृत ओजस्वी वाणी से अभिभूत हुए बिना न रह सके। तुम मुझे खून दो मैं तुम्हें आजादी दूँगा, करो या मरो, इन्कलाब जिन्दाबाद, देखना है जोर कितना बाजुए कातिल में है सरीखी वाणी के पीछे स्वामी जी की ही चेतना समायी थी। अन्याय को अनवरत सहते जाना भी तमोगुण का लक्षण है और स्वामी जी ने भारत के सोये समाज को इस तमोगुण से उठाया और साहस के साथ अन्याय का प्रतिकार करने की प्रेरणा दी।

युगनायक, युगप्रवर्तक, युगाचार्य, विश्वमानव, राष्ट्रदृष्टा, विचारनायक, योद्धा, संन्यासी प्रभृति संज्ञाओं से विभूषित स्वामी विवेकानन्द साक्षात- राम और कृष्ण के विग्रह थे। भारत के गौरवशाली इतिहास में मर्यादा पुरूषोत्तम श्रीराम और कर्मयोगी श्रीकृष्ण को छोड़कर विवेकानन्द जैसा व्यक्तित्व दृष्टव्य नहीं होता है।

रामकृष्ण और विवेकानन्द ये दोनों एक ही जीवन के दो अंश, एक ही सत्य के दो पक्ष है। रामकृष्ण अनुभूति थे, विवेकानन्द उसकी व्याख्या बनकर आये। रामकृष्ण दर्शन थे, विवेकानन्द ने उनके क्रिया पक्ष का आख्यान किया। स्वामी निर्वेदानन्द ने रामकृष्ण को हिन्दू धर्म की गंगा कहा है, जो वैयक्तिक समाधि के कमण्डलु में बन्द थी। विवेकानन्द इस गंगा के भागीरथ हुए और उन्होंने देवसरिता को रामकृष्ण के कमण्डलु से निकालकर सारे विश्व में फैला दिया।

फ्रांसीसी राज्य-क्रान्ति का प्रभाव, उस समय, साहित्य के माध्यम से भारत में जोरो से फैल रहा था एवं नरेन्द्रनाथ भी उसके स्वतंत्रता, समानता और भ्रातृत्व के सिद्धान्त त्रय में बड़े उत्साह से विश्वास करते थे। यूरोपीय संस्कारों का उनमें पूरा जोर था और कहते हैं, अपने छात्र जीवन में वे केवल शंकावादी ही नहीं प्रचण्ड नास्तिक के समान बाते करते थे। किन्तु बौद्धिकता के इन समस्त उद्देश्यों के बीच उनके भीतर वह जिज्ञासा काम कर रही थी, जो पैगम्बरों में उठा करती हैं, अवतारों और धर्म-संस्थापकों में जगा-करती है, जो सभी प्रश्नों से ऊपर उठकर यह समझना चाहती है कि सृष्टि है क्या ? जीव सान्त है या अनन्त ? जन्म के पूर्व हम कहाँ थे ? मृत्यु के पश्चात हम कहाँ जायेगे। सृष्टि कोई आकस्मिक घटना है या इसके भीतर कोई नियम काम कर रहा है, यदि हाँ, तो उस नियम का निर्माता कौन है ? यही जिज्ञासा आरम्भ में उन्हें ब्रह्म-समाज की ओर ले गई और वहाँ से निराश होने पर यही जिज्ञासा उन्हें दक्षिणेश्वर ले आई जहाँ रामकृष्ण अपनी वैयक्तिक साधना में लीन थे। उन परमहंस का पूरा जीवन देवी माँ भगवती के चरणों में बीता था। शैशव से ही वह देवी को समर्पित हो गये थे। आत्मचेतना से भी पहले उनमें यह चेतना जाग गयी थी कि देवी उनकी अनन्य प्रेयसी है। यद्यपि देवी से एकात्म भाव होने के प्रयत्न में उन्हें वर्षों क्लेश उठाना पड़ा तथापि यह क्लेश मानो एक परीक्षा ही थी जिसके द्वारा वह अपने उस पवित्र धार्मिक प्रेम के लिए अपनी पात्रता प्रमाणित कर सके। जिस दुर्गम वन में वह भटक रहे थे उसकी असंख्य पगडंडियों का एक ही लक्ष्य था: सहस्त्रों चेहरों की विविधता में एक उसी देवी का वदन प्रतिबिंबित था—और जब रामकृष्ण लक्ष्य तक पहुँचे तब उन्होंने पाया कि उन्होंने देवी की मुखमुद्रा में ही इन सब विभिन्न चेहरों को पहचानना और अपनाना सीख लिया है और इस प्रकार देवी के ही रूप में वह समूचे संसार को अपना सकते हैं। उनका शेष जीवन इस विश्वव्यापी आनन्द की शान्त सम्पूर्णता में बीता जिसके उन्मेष को पश्चिम के लिए बेथोवेन और शिलर ने स्वर दिया किन्तु परमहंस ने इस आनन्द का बेध पश्चिम के सन्त्रस्त वीरनायकों की अपेक्षा अधिक गहराई से किया था। बेथोवेन के लिए आनन्द केवल घर्षणशील मेघों की घटा के बीच में से आकाश की नीलिमा की झलक मात्र थी; परमहंस मानो संघर्ष शील कल के परदे के पार राजहंस से अपने विशाल शुभ्र पंख फैलाये चिरन्तनत्व के मरकत सरोवर में विहार कर रहे थे।

वस्तुत: नरेन्द्रनाथ जब रामकृष्ण की शरण में गए, तब असल में, नवीन भारत ही प्राचीन भारत के शरण गया था। अथवा यूरोप भारत के सामने आया था। रामकृष्ण और नरेन्द्रनाथ का मिलन श्रद्धा और बुद्धि का मिलन था, रहस्यवाद और बुद्धिवाद का मिलन था। इस दो मूर्तियों में से एक तो पुराणों के सत्यों में लिपटी हुई थी, धर्म के वाह्याचारों को भी सत्य मानकर उन्हें कायम रखना चाहती थी तथा प्राचीन भारत की सभी साधनाओं को सत्य बतलाना चाहती थी और दूसरी तर्क के उच्छल एवं धर्म के वाह्य बन्धनों को तोड़कर प्राचीनता से बाहर निकल जाने को बेचैन थी। रामकृष्ण ने नरेन्द्रनाथ से कुछ भी नहीं लिया, हाँ, अपनी साधना का तेज और अपनी अदृश्यदर्शिनी दृष्टि को नरेन्द्रनाथ में उतारकर उन्होंने उन्हें विवेकानन्द अवश्य बना दिया।

स्वामी विवेकानन्द के समय उस समय तीन लक्ष्य थे। सबसे बड़ा काम धर्म की पुन:स्थापना का काम था। दूसरा काम हिन्दू धर्म पर कम से कम हिन्दुओं की श्रद्धा को बनाये रखना था और तीसरा काम भारतवासियों में आत्मगौरव की भावना को प्रेरित करना था, उन्हें अपनी संस्कृति, इतिहास, और आध्यात्मिक परम्पराओं का योग्य उत्तराधिकारी बनाना था। स्वामी जी ने कन्याकुमारी की शिला पर बैठकर भारत के भूत-भविष्य वर्तमान का चिंतन करने के उपरान्त अपने जीवन की समर नीति तैयार की जिसमें उन्होंने नीतिपरक ढंग से आधुनिक संदर्भों में नैतिकता की प्रतिष्ठा की।

स्वामी विवेकानन्द का देहान्त केवल 39 वर्ष की आयु में हो गया, किन्तु इस छोटी सी अवधि में ही उन्होंने उपर्युक्त तीनों कार्य सम्पन्न कर दिए। राममोहन राय के समय से भारतीय संस्कृति और समाज में जो आन्दोलन चल रहे थे, वे विवेकानन्द में आकर अपनी चरम सीमा पर पहुँचे। राममोहन, केशवसेन, दयानन्द, रानाडे, एनीबेसेंट, रामकृष्ण एवं अन्य चिन्तकों तथा सुधारकों ने भारत में जो जमीन तैयार की, विवेकानन्द उसमें से अश्वत्थ होकर उठे। अभिनव भारत को जो कुछ कहना था, वह विवेकानन्द के मुख से उद्गीर्ण हुआ। विवेकानन्द वह सेतु हैं जिस पर प्राचीन और नवीन

भारत परस्पर आलिंगन करते हैं। विवेकानन्द वह समुद्र हैं, जिसमें धर्म और राजनीति-राष्ट्रीयता और अन्तरराष्ट्रीयता तथा उपनिषद और विज्ञान, सब के सब समाहित होते हैं। रवीन्द्रनाथ टैगौर ने कहा है, यदि कोई भारत को समझना चाहता है, तो उसे विवेकानन्द को पढ़ना चाहिए।

स्वामी धर्म और संस्कृति के नेता थे। राजनीति से उनका कोई सरोकार नहीं था। पर राजनीति तो स्वयं संस्कृति की चेरी है। हमारी संस्कृत विश्व की सबसे प्राचीन भाषा और हमारा साहित्य सबसे उन्नत साहित्य है । भारत में सांस्कृतिक राष्ट्रीयता पहले उत्पन्न हुई, राजनैतिक स्वतन्त्रता बाद को जन्मी है और इस सांस्कृतिक राष्ट्रीयता के पिता स्वामी विवेकानन्द थे।

सन् 1893 ईसवीं में शिकागो में आयोजित विश्वधर्म संसद में हुए स्वामी के भाषणों पर टिप्पणी करते हुए 'द न्यूयार्क हेराल्ड' ने लिखा कि, ''धर्मों की पार्लियामेंट में सबसे महान व्यक्ति विवेकानन्द हैं। उनका भाषण सुन लेने पर अनायास ही यह प्रश्न उठ खड़ा होता है कि भारत सरीखे ज्ञानी देश को सुधारने के लिए धर्म प्रचारक भेजना कितनी बेवकूफी की बात है।''

शिकागो-सम्मेलन से उत्साहित होकर और वहाँ के निवासियों के आग्रह पर स्वामी विवेकानन्द अमेरिका और इंग्लैंड में तीन साल तक रहे और इस अवधि में भाषणों-वार्तालापों-लेखों-कविताओं विवादों और वक्तव्यों के द्वारा उन्होंने हिन्दू धर्म के सार को सारे यूरोप में फैला दिया। प्राय:डेढ़ सौ वर्षों से ईसाई धर्म प्रचारक संसार में हिन्दुत्व की जो निन्दा फैला रहे थे, उस पर अकेले स्वामी जी के कर्तृव्य ने रोक लगा दी और जब भारतवासियों ने यह सुना कि सारा पश्चिमी जगत स्वामी जी के मुख से हिन्दुत्व का आख्यान सुनकर गदगद हो रहा है तब हिन्दू भी अपने धर्म और संस्कृति के गौरव का अनुभव कुछ तीव्रता से करने लगे।

अंग्रेजियत के रंग में रंगे हिन्दू बुद्धिजीवियों को समझाना बहुत कठिन कार्य था किन्तु जब उन्होंने देखा कि यही अंग्रेजी जाति के नर-नारी स्वामीजी के शिष्य बनकर हिन्दुत्व की सेवा में लगने जा रहे हैं, तब उनके भीतर भी ग्लानि की भावना जगी और बकवास छोड़कर वे भी स्थिर हो गये। इस प्रकार हिन्दुत्व को लीलने के लिए, अंग्रेजी भाषा, ईसाई धर्म और यूरोपीय बुद्धिवाद के पेट से जो तूफान उठा था, वह स्वामी विवेकानन्द के हिमालय जैसे विशाल वक्ष से टकरा कर लौट गया। हिन्दू जाति का धर्म है कि जब तक वह जीवित रहे, विवेकानन्द की याद उसी श्रद्धा से करती जाय-जिस श्रद्धा से वह व्यास और वाल्मीकि को याद करती है

जहां तक स्त्री जाति की वेदनाओं और पीड़ाओं का प्रश्न है, स्वामी जी को भारत और यूरोप, दोनों ही महादेश आँसुओं से सिक्त दिखायी पड़े थे। स्वामी ने कहा था ''विपत्तियाँ भारत में भी हैं और पश्चिमी देशों में भी। यहाँ विधवाएँ रोती हैं, वहाँ कुमारियाँ।''

भक्तिमार्ग और ज्ञानमार्ग को बढ़ावा देकर हमारे सन्तों ने संन्यास आश्रम को महत्ता कम कर दी। और उसे उपेक्षित बना दिया। संन्यासियों की परम्परा चली, पर वह बस परम्परा ही रही। बाद में स्वामी विवेकानन्द ने देखा कि देश को जगाने के लिए परिव्राजकों की जरूरत है और उन्होंने इसे नया रूप दिया। रामकृष्ण परमहंस के शिष्यगण नये किस्म के संन्यासी थे। स्वामीजी ने यह प्रणाली चलायी कि संन्यासी लोग रहें अद्वैताश्रम में और काम करें सेवाश्रम में अर्थात उन्होंने कर्म प्रवण संन्यास चलाया। इन लोगों ने विद्यार्थियों के छात्रावास भी चलाये। स्वामी विवेकानन्द के युग कार्य से प्रेरणा पाकर रवीन्द्र ने शान्ति निकेतन में ब्रह्मचर्य आश्रम की स्थापना की, अरविन्द ने पांडिचेरी में आश्रम की स्थापना की और विनोबा ने नये आश्रमों की। आधुनिक युग में आचार्य श्रीराम शर्मा ने हरिद्वार में ऐसे ही आश्रम की स्थापना की। वास्तव में ये सभी आश्रम हमारे लिए आध्यात्मिक-सामाजिक जीवन की प्रयोगशाला बने हैं। विज्ञान के लिए जिस प्रकार लेबोरेट्री होती है, उसी प्रकार समाज के विकास और उत्थान के लिए आश्रम जरूरी हैं।

स्वामी विवेकानन्द ने संन्यासियों को कर्मप्रवण बनाने के साथ-साथ गृहस्थ जीवन की भी विस्तृत व्याख्या की। हिन्दू शास्त्रों के अनुसार मानवजाति के साधारण कर्तव्यों के अतिरिक्त प्रत्येक मनुष्य के जीवन में कुछ विशेष-विशेष कर्तव्य होते हैं। एक हिन्दू को पहले ब्रह्मचर्याश्रम अर्थात् छात्रजीवन का अवलम्बन करना पड़ता है; उसके बाद वह विवाह करके गृहस्थ हो जाता है; वृद्धावस्था में गृहस्थाश्रम से

अवकाश लेकर वह वानप्रस्थ धर्म का अवलम्बन करता है; और अन्त में वह संसार को त्यागकर संन्यासी हो जाता है।

जीवन के इन भिन्न-भिन्न आश्रमों में भिन्न-भिन्न कर्तव्य होते हैं। वास्तव में इन आश्रमों में कोई किसी से श्रेष्ठ नहीं है; एक गृहस्थ का जीवन भी उतना ही श्रेष्ठ है, जितना कि एक ब्रह्मचारी का; यह कहना व्यर्थ है कि 'गृहस्थ से संन्यासी श्रेष्ठ है।' क्योंकि संन्यासी को भी भिक्षा मांगने के लिए गृहस्थ के दरवाजे जाना पड़ता है।

गृहस्थ को सबसे पहले ज्ञानलाभ के लिए चेष्टा करनी चाहिए। फिर उसे धनोपार्जन के लिए भी यत्न करना चाहिए। यही उसका कर्तव्य है, और यदि वह अपने इस कर्तव्य को नहीं करता, तो उसकी गणना मनुष्यों में नहीं। जो गृहस्थ धनोपार्जन की चेष्टा नहीं करता, वह दुर्नीतिपरायण एवं निकम्मा है। यदि वह आलस्यभाव से जीवन यापन करता है और उसी में सन्तुष्ट रहता है, तो वह असत-प्रकृतिवाला है; क्योंकि उसके ऊपर अनेकों व्यक्ति निर्भर रहते हैं। यदि वह यथेष्ट धन उपार्जन करता है, तो उससे सैकड़ों का पालन-पोषण होता है।

यदि तुम्हारे इस शहर में सैकड़ों लोगों ने धनी बनने की चेष्टा न की होती, तो यह सभ्यता, ये अनाथाश्रम और ये हवेलियाँ कहाँ से आती ? ऐसी दशा में धनोपार्जन करना कोई अन्याय नहीं है, क्योंकि यह धन वितरण के लिए ही होता है। गृहस्थ ही समाज-जीवन का केन्द्र है। उसके लिए धन कमाना तथा उसका सत्कर्मों में व्यय करना ही उपासना है। जिस प्रकार एक संन्यासी को अपनी कुटी में बैठकर की हुई उपासना उसके मुक्तिलाभ में सहायक होती है, उसी प्रकार एक गृहस्थ की भी सदुपाय तथा सदुद्देश्य से धनी होने की चेष्टा उसके मुक्तिलाभ में सहायक होती है।

भारत में व्याप्त आर्थिक विपन्नता से द्रवित स्वामी जी का विचार था कि यूरोप की आर्थिक मदद से भारत का कल्याण संभव है। भारत में उनकी योजनाओं के क्रियान्वयन के लिए धन संचय भी हुआ लेकिन जब स्वामी भारत लौटे तो उन्होंने देखा कि इतने बड़े राष्ट्र की समस्याएं आर्थिक मदद से संभव नहीं है। देश को जगाने के लिए व्यक्ति को जगाना होगा। उसके अन्दर निहित शक्ति के विशाल भण्डार से उसको परिचित कराना होगा। जब व्यक्ति अपने तेजस्वरूप से परिचित हो जायेगा तभी जनजागरण होगा, पुनर्जागरण होगा। तभी तो स्वामी जी ने कहा है—शारीरिक सहायता से बड़ी बौद्धिक सहायता और बौद्धिक सहायता से बड़ी आध्यात्मिक साधना है।

स्वामी जी के अनुसार कर्म करना ही उपासना करना है। विजय प्राप्त करना ही त्याग करना है। स्वयं जीवन ही धर्म है प्राप्त करना और अपने अधिकार में रखना उतना ही कठोर न्यास है जितना कि त्याग करना और विमुख होना।

सच्चे प्रेम की प्रतिक्रिया दु:खप्रद तो होती ही नहीं। उससे तो केवल आनन्द ही होता है। और यदि उसमें ऐसा न होता, तो समझ लेना चाहिए कि वह प्रेम नहीं है बल्कि वह और ही कोई चीज है, जिसे हम भ्रमवश प्रेम कहते हैं। गीता के एक उदाहरण द्वारा उन्होंने समझाया जहाँ श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं, ''हे अर्जुन, यदि मैं कर्म करने से एक क्षण के लिए भी रूक जाऊँ, तो सारा विश्व ही नष्ट हो जाये। मुझे कर्म से किसी भी प्रकार का लाभ नहीं; मैं ही जगत का एक मात्र प्रभु हूँ-फिर भी मैं कर्म क्यों करता हूँ? इसलिए कि मुझे संसार से प्रेम है।'' ईश्वर अनासक्त है। क्यों ? इसलिए कि वह सच्चा प्रेमी है। उस सच्चे प्रेम से ही हम- अनासक्त हो सकते हैं। जहाँ कहीं सांसारिक वस्तुओं के प्रति आसक्ति है, वहाँ जान लेना चाहिए कि वह केवल भौतिक आकर्षण है- केवल कुछ जड़ कणों का दूसरे कुछ कणों के प्रति आकर्षण हो रहा है। मानो कोई एक चीज दो वस्तुओं को लगातार निकटतर खींचे ला रही है ; और यदि वे दोनों वस्तुएं काफी निकट नहीं आ सकतीं, तो फिर कष्ट उत्पन्न होता है। परन्तु जहाँ सच्चा प्रेम है, वहाँ भौतिक आकर्षण बिलकुल नहीं रहता। ऐसे प्रेमी चाहे सहस्रों योजन दूरी पर क्यों न रहें, उनका प्रेम सदैव वैसा ही रहता है, वह प्रेम कभी नष्ट नहीं होता, उससे कभी कोई क्लेशदायक प्रतिक्रिया नहीं होती।

स्वामी जी ने कहा कि इस प्रकार किसी दूसरे पुरूष किसी नगर अथवा देश के लिए तुम जो कुछ करो, उसके प्रति भी वैसा ही भाव रखो उनसे किसी प्रकार के प्रतिदान की आशा न रखो। यदि तुम सदैव ऐसा ही भाव रख सकों कि तुम केवल दाता ही हो तो जो कुछ तुम देते हो उससे तुम किसी प्रकार कि प्रतिदान की आशा नहीं रखते, तो उस कर्म से तुम्हें किसी प्रकार की आसक्ति नहीं होगी। आसक्ति तभी

आती है जब हम प्रतिदान की आशा रखते हैं। इस प्रकार कर्म की लालसा तो हमारी आध्यात्मिक उन्नति के मार्ग में बाधक है, इतना ही नहीं अन्त में उससे क्लेश भी उत्पन्न होता है। इस प्रकार स्वामी जी ने स्पष्ट किया कि यथार्थ कर्ममय जीवन, यथार्थ त्यागमय जीवन की अपेक्षा यदि अधिक कठिन नहीं, तो कम से कम उसके बराबर कठिन तो अवश्य है।

जीवन की अवधि अल्प है, पर आत्मा अमर और अनन्त है, और मृत्यु अनिवार्य है। इसलिए आओ हम अपने आगे एक महान आदर्श खड़ा करें और उसके लिए अपना जीवन उत्सर्ग कर दें। यही हमारा निश्चय हो और वह भगवान जो हमारे शास्त्रों के अनुसार साधुजनों के परित्राण के लिए संसार में बार-बार आविर्भूत होता है वही महान कृष्ण हमको आशीर्वाद दे एवं हमारे उद्देश्यों की सिद्धि में सहायक हो और यह उद्देश्य हो-आत्मनो मोक्षार्थं जगद्धिताय च अर्थात स्वयं की मुक्ति और जगत का हित।

जिन महत कार्यों के लिए स्वामीजी का आविर्भाव हुआ उन्हें शुरू कर चुपचाप इस संसार से चल दिये। उनके तिरोभाव का मर्मस्पर्शी चित्रण रोमां रोला ने इस प्रकार किया है - सात बजे मठ में आरती के लिए घण्टी बजी। स्वामी जी अपने कमरे में चले गये और गंगा की ओर देखने लगे, फिर उन्होंने उस छात्र को जो उनके साथ था, बाहर भेज दिया, कहा कि मेरे ध्यान में विघ्न नहीं होना चाहिए। पैंतालिस मिनट बाद उन्होंने उसे बुलाया, सब खिड़कियाँ खुलवा दीं और भूमि पर चुपचाप बाई करवट लेटे रहे और ऐसे ही निश्चल लेटे रहे। वह ध्यान मग्न प्रतीत होते थे। घण्टे प्रहर बाद उन्होंने करवट ली, गहरा नि:श्वास छोड़ा। कुछ एक क्षण तक मौन छाया रहा- पुतलियां पलकों के मध्य में स्थिर हो गयी-एक और गहरा नि:श्वास और फिर चिर मौन छा गया।

विवेकानन्द के एक गुरू भाई ने कहा उनके नथुनों में, मुँह में और आँखों में थोड़ा सा रक्त आ गया था।

दिखता था कि शायद वह निर्विकल्प समाधि में जो रामकृष्ण ने उन्हें उनका कार्यसम्पन्न होने पर ही बताने का वचन दिया था, कुण्डलिनी-शक्ति जाग्रत करते हुए चल दिये थे। तब वे उनतालिस वर्ष के थे। दूसरे दिन रामकृष्ण की भाँति उन्हें भी, संन्यासी गुरू-भाई और शिष्य, जयजयकार करते हुए, अपने कन्धों पर चिता तक ले गये। जहां कानों में यह ध्वनि गूँज रही थी -

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारूतः।।

सच है कि चार-चार शादियां करने वाले गृहस्थ भी कई दफे निपुत्रिक रह जाते हैं, परन्तु-संन्यासी की परम्परा कभी निपुत्रिक नहीं बनी। वह संन्यासी विवेकानंद चला गया लेकिन हमारे इस भारत में उसकी संन्यासी परम्परा अखण्ड रूप से चालू है। और रामकृष्ण संघ के ये संन्यासी योग, विज्ञान, दर्शन, कर्म कौशल में निपुण होकर मनुष्यता की सेवा में रत हैं।

सहायक ग्रन्थः

संस्कृति के चार अध्याय : डॉ. रामधारी सिंह दिनकर

स्वामी विवेकानन्द और उनका अवदान : (सं.) स्वामी विदेहात्मानन्द

विवेकानन्द : रोमां रोलां, अनुवादक - स. ही. वात्स्यायन 'अज्ञेय' व रघुवीर सहाय

विवेकानन्द रचनावली : सातो खंड

रामकृष्ण वचनामृत : सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

संगीतनायक विवेकानन्द

पं. निखिल घोष

(लेखक हमारे देश के एक सुप्रसिद्ध संगीतविद् तथा तबलावादक थे। वे खार, मुम्बई, में स्थित अरुण संगीत विद्यालय के प्रधानाचार्य थे। उनका यह मूल अंग्रेजी लेख स्वामीजी की जन्म-शताब्दी के अवसर पर महाराष्ट्र राज्य के स्वामी विवेकानन्द जन्म-शताब्दी समारोह कमेटी के प्रतिवेदन में प्रकाशित हुआ था। वहीं से अनूदित होकर इसका 'विवेक-ज्योति' के 1988 ई. में विवेकानन्द सपाद-शताब्दी विशेषांक में प्रकाशन हुआ था।)

स्वामी विवेकानन्द एक मेधावी संन्यासी, एक महान सुधारक, एक उत्साही देशभक्त, एक प्रचण्ड वक्ता और एक सुयोग्य संगठक के रूप में अपने सद्‌गुणों के लिए सुप्रसिद्ध हैं। परन्तु बहुत लोगों को यह पता नहीं है कि वे एक महान संगीतज्ञ भी थे। आज विश्व के कोटि-कोटि नर-नारी विविध एवं समुचित रूप से स्वामीजी के प्रति श्रद्धांजलियाँ अर्पित कर रहे हैं; एक संगीतज्ञ होने के नाते मैं भारत के समस्त संगीतज्ञों के साथ मिलकर, एक महान संगीतज्ञ स्वामी विवेकानन्द के प्रति अपनी विनीत श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ।

स्वामीजी के बारे में रोमाँ रोला ने लिखा है, ''उनके शब्द महान संगीत हैं, बीथोवन शैली के टुकड़े हैं, हैंडेल के समवेत गान के छन्द-प्रवाह की भाँति उद्दीपक लय हैं। शरीर में से विद्युत्स्पर्श के से आघात की सिहरन का अनुभव किए बिना मैं उनकी वाणी का स्पर्श नहीं कर सकता, जो तीस वर्षों की दूरी पर पुस्तकों के पृष्ठों में बिखरे पड़े हैं। और जब वे नायक के मुख से ज्वलन्त शब्दों के रूप में नि:सृत हुए, उस समय तो न जाने कैसे आघात और आवेग उत्पन्न हुए होंगे।'' स्वामीजी न केवल शब्दों के अपितु संगीत के भी नायक थे।

परिव्राजक के रूप में अपने भारत-भ्रमण के दौरान स्वामीजी की एकनाथ पण्डित नामक एक वरिष्ठ संगीतज्ञ के साथ मुलाकात हुई, जो एक ध्रुपद गायक थे। स्वामीजी ने उनका संगीत सुनने की इच्छा व्यक्त की। एकनाथ पण्डित के गाने के साथ स्वामीजी मृदंग पर संगत करने लगे। स्वामीजी के इस मृदंगवादन से गायक और श्रोता पूर्णत: सन्तुष्ट हुए। इस कार्यक्रम के पश्चात् होनेवाले वार्तालाप से पता चला कि स्वामीजी एक अच्छे गायक भी हैं, अत: उन लोगों ने स्वामीजी से गाने का अनुरोध किया। स्वामीजी तानपुरा उठाकर ध्रुपद का आलाप लेने लगे। फिर जब वे गीत के लय पर आए, तो कोई भी मृदंग पर उनकी संगत नहीं कर सका। सहसा ही उन्होंने तानपुरा एकनाथ पण्डित के हाथ में सौंपते हुए मृदंग उठा लिया और स्वयं ही अपनी संगत करने लगे। इस तरह सबको विस्मय के सागर में डुबोते हुए स्वामीजी ने दोनों भूमिकाएँ निभायीं। इस अद्‌भुत घटना पर विस्मित होकर पण्डितजी कह उठे, ''स्वामीजी, आप केवल गायक नहीं, नायक भी हैं।''

नायक की उपाधि एक ऐसे संगीतज्ञ को दी जाती है जिसमें सफल प्रदर्शन, संगीत-रचना की क्षमता, संगीत शास्त्र का ज्ञान और श्रोताओं को अभिभूत करने की प्रतिभा हो। जिन लोगों को संगीत का थोड़ा ज्ञान है, वे इस बात को ठीक-ठीक समझ सकेंगे कि ध्रुपद गायन, जिसमें कि षट्-प्राण और षट्-संग लगते हैं, के साथ मृदंग पर स्वयं ही संगत कर पाना प्राय: असम्भव-सा है। इन दोनों को एक साथ अकेले ही सफलतापूर्वक कर दिखाना एक अतिमानवीय कार्य है।

स्वामीजी के जीवन के इस पक्ष को और भी गहराई से जानने की जिज्ञासा के साथ मैं भारत के एक महान संगीतविद् स्वामी प्रज्ञानानन्द जी के पास गया और उनसे मुझे स्वामीजी के कुछ शिक्षकों और उनकी शिक्षा के बारे में कुछ सूचनाएँ मिलीं। स्वामीजी ने सुव्यवस्थित ढंग से ध्रुपद, धमार, ख्याल, भजन और टप्पा का अध्ययन किया था। टप्पा के बारे में उनकी राय अच्छी नहीं थी, इस विषय में उनके अपने शब्द मैं आगे उद्धृत करूँगा। विभिन्न शिक्षकों से उन्होंने मृदंग, तबला और सितार भी सीखा। वेणी उस्ताद (वेणीमाधव अधिकारी) और उस्ताद अहमद खाँ से उन्होंने ध्रुपद व ख्याल सीखा; ब्राह्म-समाज के एक सदस्य श्री काशी घोषाल से उन्होंने इसराज एवं मृदंग सीखा। उनके समकालीन बंगाल के संगीतज्ञों में प्रमुख थे रवीन्द्रनाथ ठाकुर, त्रैलोक्यनाथ सान्याल और द्विजेन्द्रनाथ ठाकुर। कहते हैं अपनी संगीत-शिक्षा के

दिनों में स्वामीजी नियमित रूप से कठोर अभ्यास किया करते थे।

स्वामीजी एक रचनाकार भी थे। परवर्तीकाल में उन्होंने संस्कृत, बंगला और हिन्दी रचनाएँ कीं और उन्हें विभिन्न शास्त्रीय रागों एवं तालों के साथ समायोजित किया। उनमें से कुछ का विवरण निम्नलिखित है—

1. 'खण्डन भव बन्धन'—राग-यमन, ताल-चौपाल; (रामकृष्ण संघ के सभी केन्द्रों में गायी जानेवाली दैनिक प्रार्थना)
2. 'एकरूप अरूप नाम वरण'—राग-बड़ा हंससारंग, ताल-चौताल;
3. 'नाहि सूर्य नाहि ज्योति'—राग-बागेश्री, ताल-अड़ा या इकवी;
4. 'मुझे वारी बनवारी सैंयाँ'—राग-ठुमरी, ताल-कहरवा।

हाल ही में कोलकाता से मेरे एक मित्र ने सूचित किया है कि उन्होंने स्वामीजी की एक हस्तलिखित पुस्तिका ढूँढ़ निकाली है, जिसमें तबले पर अनेक रचनाएँ हैं। वह पुस्तिका प्रकाशित भी होनेवाली है। यदि वे 39वर्ष की अल्प आयु में देहत्याग न कर देते, तो संगीत-जगत् सम्भवत: उनकी और भी रचनाएँ पाकर उपकृत होता। संगीत के किसी भी अन्य प्रकार की तुलना में ध्रुपद के प्रति स्वामीजी का बड़ा सम्मान का भाव था। वे कहते, ''जिन सब गीत-वाद्यों से मनुष्य के हृदय के कोमल भावसमूह उद्दीप्त हो जाते हैं, उन सबको अब थोड़े दिनों के लिए बन्द रखना होगा। खयाल-टप्पा बन्द करके ध्रुपद का गाना सुनने का अभ्यास लोगों को कराना होगा। वैदिक छन्दों के उच्चारण से देश में प्राण संचार कर देना होगा।''[1]

परन्तु संगीत के आदर्श रूप के बारे में स्वामीजी ने कहा था—''ध्रुपद और खयाल आदि में एक विज्ञान है। किन्तु कीर्तन अर्थात् माथुर और विरह तथा ऐसी अन्य रचनाओं में ही सच्चा संगीत हैं, क्योंकि वहाँ भाव है। भाव ही आत्मा है, प्रत्येक वस्तु का रहस्य है। ...बहुत से लोग सोचते हैं कि भाव मात्र ही संगीत है, पर ऐसी बात नहीं। दूसरी ओर, भाव विहीन परन्तु केवल व्याकरण शास्त्र पर आधारित शब्दों की कसरत भी संगीत नहीं है। ...लोकगीतों की मधुरता, शास्त्रीय संगीत का विज्ञान और कीर्तन का भाव—इन्हें मिलाने से ही आदर्श संगीत की सृष्टि होगी।''[2]

स्वरचिह्न और श्रुतियों के बारे में स्वामीजी का कहना था—''युगों पूर्व भारत में संगीत को पूर्ण स्वरों तक विकसित किया गया था, यहाँ तक कि अर्ध एवं चतुर्थांश स्वर तक भी विकसित हुए थे। भारत ने संगीत में और नाटक तथा स्थापत्य कला में भी नेतृत्व किया। जो कुछ अब किया जा रहा है, वह केवल मात्र अनुकृति का एक प्रयास है। आज भारत में हर बात इस प्रश्न पर आधारित है कि किसी व्यक्ति को जीवन-धारण के लिए कितने कम की आवश्यकता है।''[3]

टप्पा के बारे में उन्होंने कहा—''जो ध्रुपद गाने में दक्ष हैं, उन्हें तो टप्पा कर्कश ही लगता है। ...क्या आप सोचते हैं कि टप्पा को नाक से गाते हुए, बिजली के समान एक सुर से दूसरे सुर में दौड़ना कोई उत्कृष्ट संगीत है? नहीं! जब तक प्रत्येक सुर हर एक स्तर पर पूरा नहीं गाया जाता, उत्कृष्ट संगीत की सृष्टि नहीं हो सकती। ...तुम्हारी समझ में यह नहीं आ रहा है कि जब एक स्वर के पीछे दूसरा स्वर इतनी द्रुतगति से आता है, तो केवल संगीत की सुषमा ही नष्ट नहीं होती, वरन् एक प्रकार का बेसुरापन पैदा हो जाता है।''[4]

पाश्चात्य संगीत में गहराई तक पैठने के बाद स्वामीजी ने उसके बारे में उच्च धारणा बना ली थी। उन्होंने कहा—''जब मैंने उनके संगीत को ध्यानपूर्वक सुनना शुरू किया और उस शास्त्र का अध्ययन किया, तो प्रशंसा किए बिना नहीं रह सका। सभी कलाओं का यही हाल है।''[5]

''पर हमारे संगीत में स्वरों का आरोह-अवरोह बहुत सुन्दर बन पड़ता है। फ्रांसवालों ने संगीत के इस गुण को पहचाना और अपने संगीत में अपनाने का प्रयत्न किया है। उनको देखकर यूरोप भर में इसका अनुकरण होने लगा।''[6]

हम स्वामीजी से यही आशीर्वाद माँगते हैं कि वे हमें संगीत के भाव और उद्देश्य को रूपायित करने की प्रेरणा प्रदान करें।

सन्दर्भ-सूची

1. विवेकानन्द साहित्य, खण्ड 6, पृ. 197
2. वही, खण्ड 10, पृ. 39
3. वही, खण्ड 1, पृ. 262-63
4. वही, खण्ड 8, पृ. 247
5. वही, पृ. 246
6. वही, खण्ड 7, पृ. 247

संगीत नाटक अकादेमी पुरस्कार 2012

हेलेन आचार्य

संगीत नाटक अकादेमी, संगीत, नृत्य और नाटक की राष्ट्रीय संस्था है। भारत सरकार ने इसकी स्थापना प्रदर्शन कलाओं के संवर्धन और संरक्षण के लिए की है। अपनी स्थापना के समय से ही अकादेमी देश में प्रदर्शन कला के क्षेत्र की शीर्षस्थ संस्था के रूप में कार्य करती रही है। प्रदर्शन कलाओं की सर्वत्र श्रीवृद्धि के लिए सुनिश्चित उद्देश्यों में से एक में से एक उद्देश्य है—संगीत, नृत्य और नाटक के क्षेत्र में उत्कृष्ट उपलब्धियों के लिए कलाकारों को सम्मान प्रदान करना। जिन कलाकारों ने अपना जीवन कला के संरक्षण-संवर्धन और गुरू-शिष्य परंपरा के तहत अपने शिष्य कलाकारों को प्रोत्साहित करने में व्यतीत किया है, ऐसे उन्नायकों/गुरूओं को अकादेमी के राष्ट्रीय सम्मान से नवाजा जाना अकादेमी के प्रमुख उद्देश्यों में से एक है। अकादेमी दिग्गज कलाकारों को राष्ट्रीय सम्मान देकर न केवल उन्हें प्रोत्साहित करती है अपितु समाज में भी कला के प्रति जागरूकता उत्पन्न कर विकास प्रक्रिया में अपना सक्रिय योगदान देती है।

वर्ष 2012 में अकादेमी ने तीन विभूतियों को अकादेमी रत्न सदस्यता से अलंकृत किया। संगीत के क्षेत्र में नौ सर्वश्रेष्ठ कलाकारों को अकादेमी पुरस्कार से सम्मानित किया, नृत्य के क्षेत्र में आठ उत्कृष्ट कोटि के कलाकारों को और नाटक में भी आठ अग्रणी रंगकर्मियों को अकादेमी पुरस्कार से सम्मानित किया। पारंपरिक/लोक/जनजातीय/नृत्य/संगीत/ नाटक एवं पुतुल कला में आठ प्रमुख कलाकार अकादेमी पुरस्कार से नवाज़े गए और प्रदर्शन कलाओं में समग्र योगदान/ विद्वत्ता के लिए प्रमुख दो विद्वानों का चयन कर सम्मानित किया गया।

इन मूर्धन्य कलाकारों को अकादेमी द्वारा आयोजित एक विशेष समोराह में सम्मानित किया जाता है। वर्ष 2012 के रत्न सदस्यों और पुरस्कार से सम्मानित कलाकारों को 28 मई 2013 को राष्ट्रपति भवन के दरबार हॉल में भारत के माननीय राष्ट्रपति श्री प्रणव मुखर्जी द्वारा ताम्र पत्र, अंगस्त्रम और नकद पुरस्कार प्रदान किए गए।

इस समारोह के तुरंत बाद एक सप्ताह तक चलने वाले संगीत, नृत्य नाट्य समारोह का आयोजन किया जाता है जिसमें अकादेमी के रत्न सदस्य एवं पुरस्कृत कलाकार अपनी बेहतरीन कला का प्रदर्शन करते हैं। इस वर्ष यह कार्यक्रम 29 मई से 7 जून 2013 तक नई दिल्ली के श्रीराम सेंटर और मेघदूत थिएटर में आयोजित किया गया।

इस समारोह कार्यक्रम का शुभारंभ 29 मई 2013 सांय 6:00 बजे अकादेमी रत्न सदस्य (2012) एवं अकादेमी के पूर्व उपाध्यक्ष श्री रतन थियाम समसामयिक भारतीय रंगमंच की जानी मानी शख्सियत द्वारा निर्देशित उनके कालजयी मणिपुरी नाटक 'उत्तरप्रियदर्शी' के मंचन से हुआ। सफदर हाशमी मार्ग पर स्थित श्री राम सेंटर सभागार रसिक वर्ग से खचाखच भरा था क्योंकि अंतरराष्ट्रीय स्तर के ख्याति प्राप्त रंगकर्मी के अंतरराष्ट्रीय स्तर पर प्रख्यात नाटक उत्तरप्रियदर्शी का मंचन होना था।

कोरस रेपरट्री थिएटर, इम्फाल द्वारा प्रस्तुत नाटक उत्तरप्रियदर्शी की कथा मौर्य शासक अशोक (प्रियदर्शी) की कलिंग युद्ध के पश्चात की है जो बौद्ध धर्म से अभिप्रेरित होकर अपने अंदर की बुराइयों का उन्मूलन कर शांति के पथ पर अग्रसर होता है।

श्री रतन थियाम अपने नाटकों की मंच सज्जा, वेश-विन्यास के अतिरिक्त सृजनात्मक रूप से प्रकाश व्यवस्था के लिए जाने जाते हैं। एक मार्मिक दृश्य में कलिंग युद्ध के पश्चात वहाँ की विधवा औरतें मंच पर सफेद परिधान में दिखाई पड़ती हैं पर उनके वस्त्रों पर लाल रंग की पट्टी प्रियदर्शी की रक्तिम आत्मा को परिलक्षित करती है। नाट्य

निर्देशक मणिपुर की राजनैतिक गतिविधियाँ की ओर बरबस आकृष्ट कर लेते हैं, उनका मानना है कि संयुक्त राष्ट्र और मानव अधिकार आयोग जैसी सशक्त संस्थाओं के बावजूद हिंसा और युद्ध जैसी गतिविधियाँ न केवल बरकरार हैं, अपितु तेजी से बढ़ रही हैं।

बृहस्पतिवार 30 मई 2013 को मेघदूत थियेटर में सायं 6.00 बजे अकादेमी रत्न सदस्य श्रीमती एन राजम ने हिन्दुस्तानी वायलिन वादन और वी. विनायक राम को ने घटम वादन की प्रभावी प्रस्तुतियों से श्रोताओं आह्लादित किया। प्रियदर्शिनी गोविन्द ने कार्यक्रम के अन्त में अपनी भरतनाट्यम नृत्य कला से आत्मविभोर किया। विरहोत्कंठिता नायिका की भूमिका में उन्होंने अभिनय बखूबी निभाते हुए अपनी कला का पदर्शन किया। के.एस. बालकृष्ण, अरुण गोपीनाथ, शक्तिवेल मुरगनन्दन, शिखामणि ने उन्हें संगत देकर इस प्रस्तुति को सफल बनाया।

समारोह की अगली शाम (31 मई शुक्रवार शाम 6:00 बजे) ओ.एस. त्यागराजन के कर्नाटक गायन से शुरू हुई, के.वी. प्रसाद के सुमधुर मृदंग वादन ने रसिक श्रोताओं को आनंदित किया। शर्मिला विश्वास के मनोहारि नृत्य ने दर्शकों को बांधे रखा। गुरू केलुचरण महापात्र की प्रख्यात शिष्या शर्मिला विश्वास ने अपनी विशिष्ट प्रतिभा और नृत्य संरचना की परिपक्वता का बेजोड़ परिचय दिया। शर्मिला विस्वास ने अपनी प्रस्तुति में यशोदा की कथा का सफल चित्रण किया। धनेश्वर स्वैन और बुधनाथ स्वैन ने मर्दल पर सृजन भट्टाचार्य और राजेंद्र स्वैन ने गायन, अग्निमित्र बेहेरा ने वायलिन पर और प्रीतिरंजन स्वैन ने बॉसुरी पर कुशलतापूर्वक संगत दी।

जयपुर अतरौली घराने के हिन्दुस्तानी शैली के सुप्रसिद्ध गायक राजशेखर मन्सूर ने अपनी विशिष्ट गायकी और रागों से अपनी सुरीली आवाज़ से श्रोताओं का मन मोह लिया। विनय मिश्र ने हारमोनियम पर और विनोद लेले ने तबले पर उन्हें संगत दी।

1 जून 2013 को सायं 3.30 बजे नंदिनी रमणि द्वारा श्री राम सेन्टर में संस्कृत थिएटर पर आधारित नृत्य की प्रस्तुति थी। नंदिनी रमणी के मार्गदर्शन में संस्कृत नाटकों अनारकली, आश्चर्यचूड़ामणि, विक्रमोर्वशीयम और मत्तविलास प्रहसन के उद्धरणों ने दर्शकों को कूटियाट्टम नाटकों की सहसा याद करवा दी। संस्कृत भाषा से अनभिज्ञ रसिक जनों ने भी इसका रसास्वादन किया।

अरूण काकड़े द्वारा मैनेजिंग ए थिएटरग्रुप' विषय पर एक संवाद सत्र का आयोजन किया जिसमें रंगकर्मियों ने सोत्साह भाग लिया। यह कार्यक्रम अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुआ।

सायंकाल 6:00 बजे संगीत नाटक अकादेमी के सम्मानित कलाकार अजय जर्नादन पोहनकर ने हिन्दुस्तानी वायलिन वादन से रसिक जनों को आह्लादित किया, साबिर खाँ के तबला वादन की प्रस्तुति अत्यंत प्रभावी रही। विजयशंकर के कथक नृत्य की प्रस्तुति अत्यंत सराहनीय थी।

रविवार 2 जून की सुबह 11.00 बजे संगीत नाटक अकादेमी पुरस्कार से सम्मानित भाई बलबीर सिंह रागी की गुरवाणी से पूरा मेघदूत गूँज उठा। श्रद्धालु श्रोताओं ने गुरवाणी का भरपूर आनंद लिया।

2 जून की शाम की शुरुआत बहाउद्दीन डागर के रूदवीणा वादन से हुई। डागर परम्परा के रूद्रवीणा के कुशल वादक बहाउद्दीन डागर ने ध्रुपद शैली में वीणा वादन प्रस्तुत किया। उन्हें पखावज पर संगत संजय आग्ले ने दी। बहाउद्दीन डागर की ध्रुपद की यह प्रस्तुति अत्यंत अनूठी थी।

इसके बाद जय नारायण सामल के सराइकेला ग्रुप ने छऊ नृत्य की बेहतरीन प्रस्तुति दी। उन्होंने अपने नृत्य के पारंपरिक नृत्य राधा कृष्ण प्रस्तुत किया। शशधर आचार्य ने ढोल पर और विकास बाबू ने शहनाई पर संगत दी और समां बाँध दिया।

रविवार 2 जून की शाम अंतिम कार्यक्रम वेदांत रामलिंग शास्त्री का कूचिपुडि नृत्य रहा। आंध्र प्रदेश के कूचिपूडि गाँव में जन्मे श्री वेदांत रामलिंग शास्त्री ने कूचिपूडि नृत्य की मौलिकता को बरकरार रखते हुए अपने गुरुओं के अभिनव प्रयोग प्रस्तुत किए। महाभारत की कथा से कीचक प्रसंग की संगीतमय कूचिपूडि नृत्य की प्रस्तुति अत्यन्त रमणीय रही।

सोमवार 3 जून 2013 को सांय 6:00 बजे अकादेमी पुरस्कार से सम्मानित कलाकार प्रेम सिंह देहाती ने हरियाणा के लोक नाटक की लोकरंजन प्रस्तुति से मेघदूत थिएटर में आए रसिकजनों को हरियाणा के लोक नाट्य रस का रसास्वाद करवाया।

तत्पश्चात पश्चिम बंगाल के प्रफुल्ल कर्माकार ने वहाँ की पारंपरिक पुतुल कला का बखूबी प्रदर्शन किया। यह प्रदर्शन अत्यंत सरानीय रहा।

सोमवार 3 जून को सायं 7:00 बने अर्जुन देव चारण के हिंदी नाटक 'रामलीला' का सफल मंचन किया गया। यह नाटक जोधपुर के रम्मत ग्रुप ने प्रस्तुत किया।

मंगलवार 4 जून सायं 6:00 बजे मट्टानुर शंकर कुट्टी मरार ने केरल की पारंपरिक कला तयंबकम का मंचन किया, तदनंतर विजयकुमार ने कथकलि की सम्मोहक नृत्य प्रस्तुत दी।

कथकलि के जाने माने कलाकार पी.वी. विजयकुमार ने इस महोत्सव में भगवत् पुराण की एक कथा का चयन किया, जिसमें कृष्ण, इंद्र नरकासुर आदि की प्रमुख भूमिका थी। लगभग एक घंटे की अल्पावधि में भी उन्होंने अपनी अनूठी कला का सफल मंचन किया।

सायं 7:00 बजे सफदर हाश्मी मार्ग पर स्थित श्री राम सेंटर में हिंदी नाटक शायर...शटर डाउन का मंचन किया गया, इस नाटक का निर्देशन नाट्य जगत की जानी मानी निर्देशिका, अकादेमी पुरस्कार से सम्मानित त्रिपुरारि शर्मा थीं। नाटक की प्रस्तुति दिल्ली के मण्डप ग्रुप ने दी। इस नाटक में शहरी विकास के नाम पर अपनी ज़रूरतों के लिए इंसान के एकाकीपन व समझौतों का चित्रण बखूबी किया गया है।

बुधवार 5 जून को श्रीराम सेंटर, नई दिल्ली में कश्मीरी भांड पाथेर नाटक दर्ज एक पाथेर की प्रस्तुति बेहद रोचक रही, इसका निर्देशन अकादेमी पुरस्कार से सम्मानित कलाकार गुलाम रसूल भगत ने किया। भांड पाथेर नाटक की प्रस्तुति कश्मीर के अनंतनाग जिले में स्थित कश्मीर भगत थिएटर ने की। यह प्रदर्शन अत्यंत सराहनीय रहा।

सायं 7:30 बजे तमिल नाटक द्रौपदी वस्त्राभहरणम की प्रस्तुति थी जिसमें अकादेमी पुरस्कार से सम्मानित कलाकार पुरिसई कणप्पा थम्बीरान की मुख्य भूमिका अत्यंत प्रशंसनीय थी। इस नाटक की प्रस्तुति तिरूवनंतपुरम के पुरिसई दुरईसामी कणप्पा तम्मबीरन तेरूकूत्तु मनराम ने प्रस्तुति दी।

बृहस्पतिवार 6 जून 2013 को श्रीराम सेंटर नई दिल्ली में सायं 6:30 बजे अकादेमी पुरस्कार से सम्मानित मुरारि राय चौधरी ने रंग संगीत संवाद का आयोजन किया। मुरारि राय चौधरी के विभिन्न बांग्ला नाटकों के संगीत रचना की प्रस्तुति 'रंग संवाद' सत्र में की गई। सायंकाल 7:30 बजे प्रसिद्ध पंजाबी नाटक 'माँ मैनूँ मारी नाँ' का सफल मंचन हुआ। संगीत नाटक अकादेमी पुरस्कार से सम्मानित कलाकार निर्मल ऋषि ने इस नाटक में प्रमुख भूमिका निभाई। इस नाटक की प्रस्तुति लुधियाना के अलाईव आर्टिस्ट ग्रुप ने दी।

7 जून 2013, शुक्रवार को नई दिल्ली के श्रीराम सेंटर में मराठी नाटक 'नो सेक्स प्लीज' का मंचन किया गया, अकादेमी पुरस्कार से सम्मानित कलाकार वामन माधवराव केंद्रे द्वारा लिखे गए इस नाटक का निर्देशन भी उन्होंने स्वयं किया इस नाटक को मुंबई के रंगपीठ ने प्रस्तुत किया। नारी सशक्तिकरण पर आधारित यह नाटक प्राचीन ग्रीक प्रहसन एरिस्टोफेनस के कथासूत्र पर आधारित है। इसकी पटकथा वामन केंद्रे ने लिखी है और भारतीयता के कलेवर में इसका अति सुन्दर चित्रण किया गया है। सांगीतिक भावबोध में प्रस्तुत यह कथानक अत्यधिक रोचक है।

इस प्रकार संगीत नाटक अकादेमी का पुरस्कार समारोह हर्षोल्लास से सम्पन्न हुआ। एक सप्ताह तक चले संगीत, नृत्य, नाट्योत्सव में देश भर के दिग्गज कलाकारों जिन्हें संगीत नाटक अकादेमी की रत्न सदस्यता व पुरस्कार से सम्मानित किया गया, द्वारा इस अवसर पर बेहतरीन कला की प्रस्तुति से प्रबुद्ध श्रोतागणों व दर्शकों का लोकानुरंजन कर कार्यक्रम को सफल बनाया।

रवीन्द्र प्रणति

सुशील जैन

गुरुदेव रवीन्द्र नाथ टैगोर एक ऐसी शख्सियत हैं जिनका नाम केवल कोलकाता या भारत में ही नहीं अपितु विश्वभर में अत्यन्त मान-सम्मान से लिया जाता है। वह एक महान दार्शनिक, संत, कवि, नाटककार, साहित्यकार, चित्रकार के रूप में जाने जाते है। वे भारतीय संस्कृति की विश्वख्याति के लिए सदैव प्रयासरत रहे। गुरुदेव को अपनी साहित्यिक कृति 'गीतांजलि' के लिए नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया। बहुआयामी व्यक्तित्व कला गुरु कवीन्द्र रवीन्द्र नाथ टैगोर की 150वीं जन्मशती के उपलक्ष्य में भारत सरकार के संस्कृति मंत्रालय के मार्गदर्शन में संगीत नाटक अकादेमी ने 'रवीन्द्र प्रणति' का आयोजन किया जिसमें गुरुदेव की साहित्यिक कृतियों पर नृत्य नाटिकाओं, नाटकों, रवीन्द्र संगीत, पुतुल खेला आदि का मंचन किया गया। अकादेमी द्वारा आयोजित रवीन्द्र प्रणति शृंखला में कार्यक्रम की अभिकल्पना कुछ इस प्रकार से की गई —

1. वाचिकांजलि – रवीन्द्र संगीत की प्रस्तुति
2. वाद्यांजलि – वाद्य संगोष्ठी का संचालन
3. नृत्यांजलि – नृत्य संरचनाओं का मंचन
4. नाट्यांजलि – नाट्य प्रस्तुतिकरण
5. काव्यांजलि – कविताओं और गीतों का सस्वर पाठ

गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर के जन्म दिवस के अवसर पर उनकी जयन्ती न केवल भारत में मनाई जाती है अपितु विश्वभर में अनेक आयोजन किए जाते हैं। उनका जन्म 7 मई 1861 को कलकत्ता (तत्कालीन) में हुआ। अल्पायु में ही उन्होंने कविता, नाटक, कथा, निबन्ध लिखने आरम्भ कर दिए। वह एक दार्शनिक, कवि, कथाकार, नाट्यकार, समाज सुधारक के साथ साथ एक चित्रकार भी थे। उन्हें संगीत में भी बहुत रुचि थी उनके गीत हिन्दुस्तानी संगीत की ठुमरी शैली से प्रभावित थे और रवीन्द्र संगीत नाम से जाने जाते हैं। भारत सरकार ने राष्ट्रीय एवं अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर अद्वितीय प्रतिभा के धनी गुरुदेव श्री रवीन्द्रनाथ टैगोर की 150वीं जयन्ती के अवसर पर स्मरणोत्सव मनाने का निर्णय लिया था, इस अवसर पर भारत सरकार ने व्याख्यान, संगोष्ठियों, सम्मेलनों, कार्यशालाओं, कवि-लेखक सम्मिलन, समारोह, सांस्कृतिक कार्यक्रमों की प्रस्तुति, प्रदर्शनी लगाने संबंधी कार्यों, वृत्त चित्र तैयार करने और श्रव्य-दृश्य प्रस्तुतियाँ तैयार करने जैसे प्रस्तावों के कार्यान्वयन की मंजूरी दी थी।

संगीत नाटक अकादेमी भारत सरकार के संस्कृति मंत्रालय की एक वित्तपोषित स्वायत्त संस्था है। अकादेमी को भी इस स्मरणोत्सव मनाने का अवसर प्राप्त हुआ और अकादेमी ने अपनी जिम्मेदारी का पूर्णरूपेण निर्वहन किया।

रवीन्द्र प्रणति के शुभ अवसर पर 7-9 मई 2010 तक कार्यक्रम की अभिकल्पना इस प्रकार की गई—7 मई 2010 को 'रवीन्द्र संगीत' का आयोजन किया गया। 8 मई 2010 को गुरुदेव की रचनाओं का प्रस्तुतिकरण कला जगत के सुप्रतिष्ठित अभिनेताओं ने वाचिकांजलि से सम्पन्न किया। ऑल इंडिया रेडियो, दिल्ली के वाद्य वृन्द द्वारा वाद्यांजलि द्वारा वाद्य संगोष्ठी का संचालन किया गया। 9 मई 2010 को पुतुल नाटक के मंचन के साथ-साथ रवीन्द्रनाथ ठाकुर की प्रमुख कृतियों से नृत्य उद्धरण पेश कर देश के प्रख्यात नृत्य संरचनाकारों ने नृत्यांजलि से गुरुदेव को श्रद्धांजलि अर्पित की। भारत सरकार के तत्कालीन वित्त मंत्री श्री प्रणव मुखर्जी ने 9 मई 2010 को इस अवसर पर एक विशिष्ट स्मरणीय सिक्का जारी कर गुरुदेव को श्रद्धा सुमन अर्पित किए।

जैसे कि आप सब जानते ही हैं कि गुरुदेव का मन शांति निकेतन में रमता था, इसी बात को ध्यान में रखते हुए अकादेमी ने 4 जनवरी 2010 से 6 जनवरी 2011 तक सांथाली नृत्य

और संगीत के उत्सव 'एनेक सेरेंग पर्व' का भी आयोजन दरोन्दा गाँव, लाभ बाजार, वीरभूमि शांतिनिकेतन में किया। इस पर्व में 32 सांथाली समूहों (लगभग 750 कलाकारों) ने हिस्सा लिया, इस उत्सव की अत्यन्त सराहना हुई। अकादेमी ने 23 जनवरी 2011 से 26 जनवरी 2011 तक गुरुदेव की कृतियों पर आधारित एक नृत्य-नाटक उत्सव का आयोजन शांतिनिकेतन में और दूसरा कोलकाता में 24 जनवरी 2011 से 27 जनवरी 2011 तक सम्पन्न किया।

रवीन्द्र प्रणति की इसी शृंखला में भारत सरकार के तत्कालीन वित्त मंत्री श्री प्रणव मुखर्जी ने 7 मई 2011 को भारत-बांग्लादेश के संयुक्त आयोजन का शुभारम्भ किया, इस कार्यक्रम में गुरुदेव के साहित्यिक गीत नृत्य और नाटकों का मंचन किया गया। देश भर के 16 ग्रुप के कलाकार राष्ट्रीय स्तर के ख्याति प्राप्त कलाकार थे और 5 ग्रुप के कलाकार बांग्लादेश से आमंत्रित किए गए थे।

'कथक काव्यर अभिनय' में 150 से भी अधिक कलाकारों ने टैगोर के साहित्यिक कार्यों पर अभिनय किया। इनमें सीमा बिस्वास, शर्मीला बिस्वास, प्रेरणा श्रीमाली, वैभव आरेकर, कपिला वेणु, प्रियदर्शिनी गोविन्द , गिरीश सोपानम, गोपिका वर्मा, आलोक चटर्जी, शाश्वती सेन, स्वाति लेखा सेनगुप्ता, बहरुल इस्लाम, शोवना नारायण और बांग्लादेश की तमन्ना रहमान जैसे दिग्गज कलाकारों के नाम उल्लेखनीय हैं। लगभग 75 कलाकारों ने टैगोर की कविताओं और गीतों का सस्वर पाठ किया और संगीतावृति में रवीन्द्र संगीत शैली में कार्यक्रम प्रस्तुत किया।

नृत्य नाट्य कार्यक्रम में 70 कलाकारों ने नृत्य नाटकों का प्रदर्शन किया, इनकी नृत्य संरचना और निर्देशन बांग्लादेश के एम डी विलायत हुसैन खान, जागो आर्ट सैन्टर, बांग्लादेश और विश्व भारती, शान्तिनिकेतन की संगीत भावना ने किया।

बांग्लादेश में आयोजित गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर की 150वीं जन्मशती के अवसर पर कथक केन्द्र नई दिल्ली और जवाहर लाल नहेरू मणिपुर नृत्य एकेडमी, इम्फाल के 35 कलाकारों ने 6-8 मई 2011 तक बांग्लादेश में नृत्य कार्यक्रमों से बांग्लादेश के रसिकजनों का मनोरंजन किया।

भानु भारती, के एन पणिक्कर और एच कान्हाई लाल जैसे प्रख्यात निर्देशकों ने रीच (Reach) देहरादून के सहयोग से टैगोर की कृतियों पर तीन नाटकों का मंचन किया। इस अवसर पर रवीन्द्र संगीत के प्रमुख कलाकार संजय सरकार और बाउल संगीत के प्रख्यात कलाकार प्रहलाद ब्रह्मचारी ने भी गीत गाए। संगीता शर्मा की नृत्य संरचना 'विसर्जन' का मंचन भी किया गया जिसकी बहुत सराहना की गई।

गुरुदेव की 71वीं पुण्यतिथि के अवसर पर दिल्ली के राष्ट्रीय सभागार में 8 अगस्त 2011 को गुरुदेव को श्रद्धांजलि अर्पित की गई। इस कार्यक्रम का शुभारम्भ तत्कालीन वित्त मंत्री श्री प्रणव मुखर्जी ने किया। इस समारोह में रेलवे मंत्री श्री दिनेश त्रिवेदी और संस्कृति मंत्री कुमारी शैलजा और अकादेमी अध्यक्ष श्रीमती लीला सैमसन भी मौजूद थी। श्री अफताब सेठ ने टैगोर की कविताओं का सस्वर पाठ किया और बहाउद्दीन डागर ने रुद्र वीणा बजा कर श्रद्धा सुमन अर्पित किए।

गुरुदेव की याद में 26-30 सितम्बर 2011 तक पांच दिवसीय नृत्य-नाट्य उत्सव में गीतांजलि लाल की नृत्य संरचना चित्रांगदा, सत्रिय केन्द्र की नृत्य संरचना, कलामंडलम कोलकाता की नृत्य संरचना श्यामा, जवाहर लाल नेहरू मणिपुर नृत्य एकेडमी की एन अमूसाना देवी की नृत्य संस्थान बिदाई अभिशाप और कूचिपूडि आर्ट एकेडमी, चेन्नई के वेम्पट्टि चिन्न सत्यम की नृत्य संरचना चंडालिका जैसे नृत्य नाटकों का मंचन किया गया जिसमें कथक केन्द्र, सत्रिय केन्द्र, इम्फाल के कलाकारों ने उत्साहपूर्वक भाग लेकर समारोह को सफल बनाया। अकादेमी ने फोरम आर्ट बियॉन्ड बॉर्डर्स के सहयोग से 5 नवम्बर 2011 से 9 नवम्बर 2011 तक दिल्ली इंटरनेशनल आर्ट फेस्टिवल का आयोजन किया इसमें संगीता दास, रानी खानम, अनीता शर्मा, शशधर आचार्य, दीपिका रेड्डी, बीना देवी, सी वी चन्द्र शेखर, सुचेता भिडे चापेकार, सुनयना हज़ारीलाल, विजयलक्ष्मी और सोनल मानसिंह जैसे मूर्धन्य कलाकारों ने इस कार्यक्रम में चार चांद लगा दिए।

नाट्यांजलि पर्व में एक और कड़ी जोड़ते हुए अकादेमी के पूर्वोत्तर केन्द्र और सत्रिय केन्द्र गुवाहाटी ने 25 जनवरी 2012 तक एक छ: दिवसीय संगीत, नृत्य नाट्योत्सव का आयोजन किया और गुरुदेव की कृतियों में से नाट्य-प्रस्तुतिकरण किया। इस समारोह में रवीन्द्र संगीत के साथ

साथ नृत्य-नाटकों में बिदाई अभिशाप, (जवाहर लाल नेहरू मणिपुर नृत्य एकेडमी) चित्रांगदा (गीतांजलि डांस एकेडमी, शिलॉग) बिसर्जन (उमा शंकर चक्रवर्ती, अगरतला) चंडालिका (सत्रिय केन्द्र, गुवाहाटी) का मंचन किया गया। नाटकों की प्रस्तुति में अंगनबा कबीरई (मणिपुरी), राथेर राशि(राभा) और अभिसार (असमी) का मंचन पूर्वरंग, गुवाहाटी ने किया। समाचार पत्रों और दूरदर्शन में इस कार्यक्रम की अत्यन्त सराहना की गई।

आन्ध्र प्रदेश, संस्कृति मंत्रालय के सहयोग से 23 जनवरी से 28 जनवरी 2012 तक हैदराबाद में टैगोर की रचनाओं पर आधारित नृत्य और नाट्योत्सव का आयोजन किया गया। आन्ध्र प्रदेश के गर्वनर ने आन्ध्र सरकार के पर्यटन और संस्कृति मंत्री की गरिमामयी उपस्थिति में कार्यक्रम का शुभारम्भ किया, इस अवसर पर अकादेमी की उपाध्यक्ष श्रीमती शान्ता सर्वजित सिंह भी उपस्थित थीं।

तीन नृत्य नाटकों के मंचन में काव्यांजलि—एन ओड टु गुरुदेव की प्रस्तुति शंकरानन्द कलाक्षेत्र, हैदराबाद ने, 'प्रभु-आभार प्रियो आभार' की प्रस्तुति मणिपुरी नर्तनालय और उपासना सैन्टर फॉर डान्स, कोलकाता ने 'चित्रांगदा' की प्रस्तुति संजलि सैन्टर फॉर ओडिसी डांस, बेंगलुरु ने की। नाटकों में 'विषादकाल'—आल्टरनेटिव लिविंग थिएटर, कोलकाता (निर्देशन-प्रबीर गुहा) 'द प्रोफैट एण्ड द पोयट' अंग्रेजी-हिंदी नाटक की प्रस्तुति बंगलौर लिटिल थिएटर, बंगलौर (निर्देशन विजय पादकी), कन्नड नाटक 'गोरा' की प्रस्तुति रंगायन, मैसूर (निर्देशन : प्रकाश बेलवादी) ने दी।

रवीन्द्र परिषद, पटना के सहयोग से रवीन्द्र भवन ऑडिटोरियम, पटना में 13-16 फरवरी 2012 तक टैगोर की साहित्यिक कृतियों पर चार दिवसीय संगीत-नृत्य नाट्योत्सव का आयोजन किया गया। इस कार्यक्रम का शुभारम्भ टैगोर सम्मान से सम्मानित एवं अकादेमी पुरस्कार से सम्मानित कलाकार श्रीमती शान्ति गांधी ने किया। श्रीमती जयति घोष और श्री मनोज मुरली नायर ने रवीन्द्र संगीत प्रस्तुत किया और रवीन्द्र भारती यूनवर्सिटी, कोलकाता ने 'ऋतुरंग' और 'बसंत आला रे' की प्रस्तुति नृत्यगान, जमशेदपुर ने दी। हिन्दी नाटक 'कादम्बरी' का मंचन प्रांगण, पटना (निर्देशन अभय सिन्हा) और मणिपुरी नाटक 'द किंग ऑफ डार्क चैम्बर' का मंचन रतन थियाम के निर्देशन में मणिपुर के कोरस रेपरट्री थिएटर, इम्फाल ने किया। समाचार पत्रों और दूरदर्शन पर इस कार्यक्रम को अत्यन्त सराहा गया।

चंडीगढ़ संगीत नाटक अकादेमी के सहयोग से 20 फरवरी 2012 से 23 फरवरी 2012 तक चंडीगढ़ के टैगोर थिएटर में नाट्यांजलि का आयोजन किया गया जिसमें रवीन्द्र संगीत की प्रस्तुति श्रावणी सेन, अग्निभा बंदोपाध्याय, इरा मुखर्जी, शेखर कान्तिकार गुप्ता ने की और अकादेमी पुरस्कार से सम्मानित कलाकार पूरण चन्द्र दास ने बाउल गीतों से श्रोताओं को मंत्रमुग्ध किया। चंडीगढ़ की सुचित्रा मित्रा की नृत्य संरचना 'रवीन्द्र सृष्ट नारी' और राजश्री की 'खता' मुंबई के शिरके के साथ साथ इंटरनेशनल सैन्टर फॉर कथकलि के एवूर एस राजेन्द्रन पिल्लै के कथकलि नृत्य 'यात्रा शापम' और चंडीगढ़ की शोभा कौसर के 'वसन्त जाग्रत' नृत्य का सफल मंचन हुआ।

अकादेमी पुरस्कार से सम्मानित उषा गांगुली के निर्देशन में चंडालिका हिन्दी में, डाकघर डोगरी में (निर्देशन मुश्ताक काक, जम्मू) बोश्तोमी बांग्ला में (निर्देशन : सौमित्र बासु, कोलकाता) प्रस्तुत किए गए।

नाटयांजलि का शुभारंभ अकादेमी उपाध्यक्ष श्रीमती शांता सर्वजित सिंह और संघ शासित चंडीगढ़ के प्रशासकीय सलाहकार श्री के के. शर्मा (आई ए एस) ने किया।

अकादेमी ने लयशाला ललित कला समिति, इन्दौर के सहयोग से इन्दौर में टैगोर की साहित्यिक कृतियों पर आधारित पुतुल नाटकों का मंचन 28 और 29 फरवरी 2012 को किया। इस 'पुतुल खेला' में पाँच पुतुल समूहों ने अपनी कला का प्रदर्शन किया। यह कार्यक्रम भी अत्यन्त सफल रहा।

संगीत नाटक अकादेमी ने टैगोर सम्मान (फैलोशिप और पुरस्कार) का आयोजन पहले चरण में 25 अप्रैल 2012 को कोलकाता के रवीन्द्र सदन में किया। इसमें 25 फेलो का टैगोर सम्मान के लिए और 27 कलाकारों का चयन टैगोर पुरस्कार के लिए किया गया।

अकादेमी टैगोर फैलो और सम्मान के दूसरे चरण में अकादेमी ने चेन्नई की म्यूज़िक एकेडमी में 2 मई 2012 को देश के दक्षिण प्रान्त के 16 टैगोर फैलो और 15 कलाकारों

को टैगोर पुरस्कार से सम्मानित किया। यह सम्मान तमिलनाडु के गवर्नर डा. के रोजियाह ने प्रदान किए। टैगोर फैलो और पुरस्कार अलंकरण समारोह में अकादेमी की अध्यक्ष श्रीमती लीला सैमसन और अकादेमी की कार्यकारी सचिव श्रीमती हैलेन आचार्य उपस्थित रहीं।

6 मई 2012 को अकादेमी ने गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर की 150वीं जन्मशती के स्मरणोत्सव का समापन रवीन्द्र भवन के मेघदूत प्रांगण में किया। इस अवसर पर दिल्ली की (तत्कालीन) मुख्यमंत्री श्रीमती शीला दीक्षित ने दीप प्रज्जवलन किया। स्वरांगिनी कॉयर, नई दिल्ली के कलाकारों ने मंगलाचरण किया। नन्दिता यास्मिन ने रवीन्द्र संगीत, पार्वती बाउल ने बाउल संगीत और पश्चिम बंगाल के पारम्परिक वाद्य समूह दोहर की वाद्य-वृन्द प्रस्तुति से मेघदूत गूंज उठा।

6 मई 2012 और 7 मई 2012 को संगीत नाटक अकादेमी और भारत सरकार के संस्कृति मंत्रालय ने बांग्लादेश के सांस्कृतिक कार्य मंत्रालय के सहयोग से 6 मई 2012 को बांग्लादेश इन्टरनेशनल कल्चरल सैन्टर और 7 मई 2012 को बांग्लादेश शिल्पकला एकेडमी में एक कार्यक्रम का आयोजन किया गया जिसमें कोलकाता के श्री अग्निभा बन्दोपाध्याय द्वारा रवीन्द्र संगीत का आयोजन किया।

7 मई 2012 को विज्ञान भवन में वर्ष भर से चल रहे भारत - बांग्लादेश के संयुक्त आयोजनों का समापन हुआ। इस अवसर पर भारत के उपराष्ट्रपति श्री हामिद अंसारी मुख्य अतिथि थे और बांग्ला देश के विदेश मंत्री डा. दीपू मोनी ने अपने देश का प्रतिनिधित्व किया। तत्कालीन वित्त मंत्री श्री प्रणव मुखर्जी, आवासीय और शहरी गरीबी उन्मूलन मंत्री कुमारी शैलजा, भारत सरकार की सचिव (संस्कृति) श्रीमती संगीता गैरोला ने अपनी उपस्थिति से कार्यक्रम की शोभा बढ़ाई। इस अवसर पर गवर्नर, नई दिल्ली स्थित विदेशी दूतावास के राजदूत और हाई कमिश्नर भी मौजूद थे। कोलकाता के प्रमुख कलाकार प्रमिता मलिक, शान्तनु रॉय चौधुरी और बांग्लादेश की अदाकारा नन्दिता यास्मिन ने रवीन्द्र संगीत से श्रोताओं को मंत्रमुग्ध कर गुरुदेव रवीन्द्रनाथ के स्मरणोत्सव का समापन किया।

पंत काव्य की सदानीरा

प्रयाग शुक्ल

हर समर्थ कवि हमें किसी-न-किसी रूप में यह भान कराता है कि वह प्रकृति के, जीवन के, बहुत सारे मर्मों को जानता-पहचानता है। यह भी कि दो बिल्कुल असंबद्ध लगती चीज़ों को आपस में लगभग जादुई ढंग से जोड़ देने की क्षमता उसके पास है। कवि अपनी कविता से, काव्य प्रतिभा से, हममें यह विश्वास भी भरता है कि सूक्ष्म से सूक्ष्म वस्तु का निरीक्षण कर सकता है, और मानो इसी वज़ह से वह हमें *वहाँ* ले जा सकता है जहाँ जाना सामान्यत: संभव नहीं होता। और यह भी कम महत्त्वपूर्ण बात नहीं है कि हमें भाषा के प्रति भी सजग बनाता है—उन्हीं शब्दों को, जो या तो हमारी भाषा के शब्दाकोश में हैं, या फिर हम जिन्हें अपने निजी जीवन में और सामाजिक आचार-व्यवहार में बरतते हैं, नई तरह से बरत कर हमें दिखाता है। उनमें छिपी हुई ध्वनियों को, उनके अर्थों को, हमारे मानस-अटल पर एक अलग क्रम में, एक अलग तरह की अनुगूंज में बिछाता है। ग़ौर करने लायक तथ्य है कि ऐसा करते हुए वह अपनी प्रतिभा का ढिंढोरा नहीं पीट रहा होता—अगर वह ऐसा करेगा तो हम उसकी ओर आकर्षित ही नहीं होंगे। कविता में तो विनम्रता ही सुहाती है। और समर्थ कवि तो हममें यह बात भी ख़ास तौर पर अच्छी तरह बिठा देता है, कि सबसे पहले तो महत्त्वपूर्ण कविता ही है—माध्यम के रूप में कविता। कवि का नंबर तो उसके बाद ही आएगा—हर हाल में। इसे यों भी कह सकते हैं कि एक समर्थ कवि अपनी कविता के प्रसंगों से हमें यह भी दिखाता है चलता है कि माध्यम के रूप में—अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप में—कविता पर उसने कितना और कैसा भरोसा किया है। यह भी कि उसे उस पर कितना विश्वास है, और अगर उसने इस माध्यम में कुछ नया जोड़ा-घटाया है, तो अपने लिए और हमारे लिए भी, इस माध्यम को और लचीला, और काम्य, और जीवन-क्षम, और अनुभूति-बहुल बनाने के लिए ही।

सुमित्रानंदन पंत की कविता का एक बड़ा आकर्षण आज भी मेरे लिए यही है कि माध्यम के रूप में स्वयं कविता पर ऐसा मर्म भरा भरोसा विरले कवियों में ही मिलता है, ऐसी विनम्रता भी— यानी उनके जितनी मात्रा में—अन्यत्र कम ही देखने को मिलती है—और आज तो वह प्राय: दुलर्भ ही हो चली है। भाषा को बरतने के मामले में, एक प्रकार से उसे नई से सिरजने के मामले में भी उनकी जोड़ के कवि कम ही मिलेंगे। और जहाँ तक यह भान कराने का सवाल है कि जीवन और प्रकृति के बहुतेरे मर्मों-रहस्यों से कवि का परिचय है, और अमर हम उसकी कविता के निकट जाएंगे तो हम सकारात्मक रूप से ऐसी बहुत-सी चीज़ों से, नए सिरे से, परिचित हो सकेंगे जो हमारे जीवन-बोध और सौंदर्य-बोध को बढ़ाने में सहायक होंगी—तो यह भान कराने में भी उनकी कविता विलक्षण ही है। और प्राय: यह भान कराने का उनका अपना एक अनोखा ढंग है। कई बार उनकी कविता पहले तो कोई प्रश्न उठाती है, फिर तत्काल यह बता देती है कि प्रश्न तो एक तरक़ीब भर है—किसी जीवन-मर्म तक पहुंचने की—और असल बात भी प्रश्न के किसी निश्चित उत्तर तक पहुंचने में नहीं छुपी हुई है, वह छुपी हुई है प्रश्नोत्तर की लुकाछिपी में, उसकी चंचलता, उसकी क्रीड़ा और गतिशीलता में। स्थिर बिम्बों को भी स्थिर न रहने देने में, क्योंकि ऐसा होने पर ही नए अर्थों-आशयों के खुलने की संभावना बनी रहेगी। कुछ ही उदाहरण इस सिलसिले में पर्याप्त होंगे : *जिज्ञासा* शीर्षक कविता की आरंभिक पंक्तियां हैं :

कौन स्रोत ये ?
ये किन आकाशों में खोए
किन अवाक् शिखरों से झरते ?
किस प्रशांत समतल प्रदेश में

रजत फेन मुक्तारव भरते।
ये किन स्वच्छ अतलताओं की
मौन नीलिमाओं में बहते?
किस सुख के स्पर्शों से, स्वर्णिम
हिलकोरों में कँपते रहते।
कौन स्रोत ये।

ज़ाहिर है कि यह कविता दृष्टि की, प्रकृति की, सत्ता की, लौकिक और पारलौकिक प्रतीतियों की, बात करती है, और बड़े अद्भुत ढंग से स्वयं जीवन को गतिशील रखने वालों स्रोतों से हमें जोड़ देती है—और हम भी विस्मित होकर, अवाक् होकर इन स्रोतों के रहस-द्वार पर खड़े हो जाते हैं—अपने-अपने ढंग से इनको पहचानने के लिए, उनसे आनंदित होने के लिए।

इसी क्रम में हमें संध्या कविता याद आ सकती है, छाया कविता भी, और *प्रथम रश्मि* जैसी कविताओं की आरंभिक पंक्तियों की बानगी से फिलहाल काम चलाएं :

सन्ध्या

कहो तुम रूपसि कौन?
व्योम से उतर रही चुपचाप
छिपी निज छाया-छवि में आप,
सुनहला फैला केश कलाप
मधुर, मंथर, मृदु, मौन।

छाया

कौन, कौन तुम परिहत वसना
म्लान मना, भू पतिता-सी,
वात हता विच्छिन्न लता-सी,
रति श्रांता व्रज वनिता-सी?
नियति वंचिता, आश्रय रहिता,
जर्जरिता, पद दलिता-सी,
धूलि धूसरित मुक्त कुंतला,
किसके चरणों की दासी।

इस कविता की प्रश्नोत्तरी हमें जीवन के, प्रकृति के, स्त्री-जीवन के, इतने रूप-चित्र सौंपती हे और इतनी आत्मीयता से हमसे बतियाती है कि एक बार पढ़ी जाने के बाद फिर कभी भूलता नहीं है। इस कविता को पढ़ते हुए आज भी मैं एक रोमांच का अनुभव करता हूं।

और **प्रथम रश्मि** में वह पूछते हैं :

प्रथम रश्मि का आना, रंगिणी
तूने कैसी पहचाना?
कहाँ कहाँ हे बाल विहंगिनी
पाया तूने यह गाना?

देखें तो इन कविताओं में—एक प्रकार से उनकी इन तीन प्रतिनिधि कविताओं में—हम उनकी कविता स्रोत ढूँढ सकते हैं। इन कविताओं में प्रकृति उपकरणों के सहारे जीवन-मर्मों की खोज है, बिम्ब-बहुल शब्दावली में परिचित चीज़ों के माध्यम से एक अपरिचित-से भाव-संसार में प्रवेश है, सृष्टि के रहस-द्वार पर दस्तकें हैं, और लौकिक जीवन के दु:ख-सुख के चित्रों के ज़रिए जीवन-मान का उदात्तीकरण है, संवेदना के अछूते आयाम हैं, और एक ऐसी चित्रमयता है जो पंत की रची हुई हो सकती थी। शब्दों के मधुर-कोमल स्वरों का एक ऐसा संधान है, जिनसे पंत की कविता से पहले हिंदी परिचित न थी।

पंतजी की कविता के बारे में मुझ का बात और बड़ी विलक्षण लगती है। आम तौर पर यह माना जाता है कि कविता, कविता को ही ज़्यादा प्रभावित करती है, और किसी भाषा के, विभिन्न युगों के, और विभिन्न पीढ़ियों के, कवियों के बीच जो संवाद ज़ारी रहता है, जो लेन-देन, उसमें इस तरह के प्रभाव बार-बार देखने को मिलते हैं। पर, कम ही कवि ऐसे होते हैं जो समकालीन या परवर्ती पीढ़ियों के कवियों में पद्य पर ही नहीं, गद्यकारों-कथाकारों के गद्य पर भी अपना गहरा असर डालते हैं—या कहें उनके लिए ऐसी राह या राहें खोल देते हैं, जो पहले अजानी थीं। हिंदी कविता पर, पंत-काव्य का कैसा और कितना असर पड़ा है, इसकी कुछ चर्चा होती रही है—हालाँकि मेरे हिसाब से वह अभी भी बहुत आधी-अधूरी है, पर, उनके काव्य ने, हिंदी गद्य पर जो असर डाला है, उसकी तो ढंग से चर्चा भी शुरू नहीं हुई है, जबकि निश्चय ही पंत की कविता, खड़ी बोली के गद्य के एक प्रमुख हिस्से की प्रकृति को बहुत दूर तक बदलने में—उसे नया रूप और माधुर्य देने में—सहायक हुई है। जहाँ

तक मुझे स्मरण है *मैला आंचल* के शुरू के संस्करणों में पंतजी की ये चार पंक्तियां भी रहा करती थीं :

खेतों में फैला है श्यामल
धूल भरा मैला-सा आंचल
गंगा-जमुना में आंसू जल
मिट्टी की प्रतिमा उदासिनी

ज़ाहिर है कि मैला आंचल नाम भी इन्हीं पंक्तियों में से निकला है। पर, रेणु के गद्य और पंतजी के पद्य का सम्बन्ध बहुत गहरा है। निश्चय ही इस गद्य के बनने में, पंतजी की कविता का बड़ा हाथ है : बाँसों का झुरमुट, संध्या का झुटपुट, चिड़िया टीवी टुट टुट...पंक्तियों हों, या *धोबियों का नृत्य* कविता में नृत्य-गतियों के लिए व्यवहृत ध्वनि-रूप-शब्द-हों—ये सब रेणु जैसे गद्यकार के गद्य का पथ-प्रशस्त करने वाले रहे हैं। दरअसल, पंतजी ने खड़ी बोली को जैसी मधुरिमा, भंगिमा, कोमलता प्रदान की और शब्दों की मधुर-भिड़ंत से, ध्वनियों का जो एक अपूर्व संसार रखा, वह हिंदी के लिए कई नई संभावनाओं के द्वार खोलने वाला साबित हुआ। पंतजी ने हिंदी काव्य को एक नई चित्रमयता ही नहीं प्रदान की, उस *चित्रमयता* में चलचित्र वाली शक्ति भी भरी : जिस तरह हम सवाक् चलचित्र में, तस्वीरों के चलने-फिरने के साथ, उन तस्वीरों से जुड़ी ध्वनियों और शब्दों को भी सुनते हैं, उसी तरह पंतजी की कविता में भी प्राय: सभी दृश्य-चित्र, ध्वनि और नाद को सजीव ढंग से साथ लेकर चलते हैं :

सघन मेघों का भीमाकाश
गरजता है जब तमसाकार,
दीर्घ भरता समीर नि:श्वास
प्रखर झरती जब पावस धार;
न जाने, तपक तड़ित में कौन
मुझे इंगित करता तब मौन।

समीर क्या इन पंक्तियों में सचमुच नि:श्वास नहीं भर रहा है ? उसकी सांसों को क्या हम सचमुच ही नहीं सुन रहे हैं ?

पर, यहीं यह याद कर लेना भी ज़रूरी है कि ऊपर जो पंक्तियां उद्धृत की गई हैं, वे *मौन निमंत्रण* शीर्षक कविता में से हैं—और जब हम पंतजी की कविता में ध्वनियों की या शब्द-संगीत की चर्चा कर रहे हैं तो यह बात भी सहज ही ध्यान में आनी ही चाहिए कि उनकी कविताओं में *मौन* भी बहुत है—केवल *मौन* शब्द का ही इस्तेमाल नहीं है, वास्तव में मौनी-स्पेसेज भी हैं। ये *स्पेसेज* हैं, तभी ध्वनियां भी सुमधुर और मुखर हो पाती हैं। इस अर्थ में उनके यहाँ, *मौन* और ध्वनि का गहरा, परिष्कृत संतुलन और अंतर्संबंध है। और वे इसे भी बहुत अच्छी तरह पहचानते—और पहचनवाते हैं कि कुछ प्रसंग-चित्र ऐसे भी हो सकते हैं, जहाँ एक तरह की प्रशांति ही कायम रखी जाए—क्योंकि वे चित्र या बिम्ब हमसे वास्तव में तभी *बोलेंगे* जब हम उन्हें एक प्रकार की चुप्पी के बीच देखेंगे। *छाया* कविता को याद करें तो हम पाएंगे कि तरु के नीचे लेटी हुई *छाया* के प्रसंग से जितने चित्र एक-एक कर उभारे गए हैं, उनमें से यत्नपूर्वक नाद-निनाद को हटा दिया गया है, ताकि वे सभी चित्र स्पष्ट होकर दृष्टि-फलक पर आ सकें, अपनी सभी आकार रेखाओं और रंगों के साथ और किसी तरह का रोर-शोर हमें अस्थिर न कर पाए। और अंतत: ये चित्र और, मौन रहकर भी आपस में एक संलाप कर सकें। इसी तरह *सांध्य तारा* कविता की नीरवता कितने मुग्धकारी ढंग से रची गई है :

आरंभिक पंक्तियां ही कहती हैं :

नीरव संध्या में प्रशांत
डूबा है सारा ग्राम-प्रांत।

पत्रों के आनत अधरों पर सो गया निखिल वन का मर्मर।
ज्यों वीणा के तारों में स्वर।
खग-कूजन भी हो रहा लीन, निर्जन गोपथ अब धूलिहीन
धूसर भुजंग-सा जिह्व क्षीण।
झींगुर के स्वर का प्रखर तीर केवल प्रशांति को रहा चीर
संध्या प्रशांति को कर गंभीर।
इस महा-शांति का उर उदार, चिर आकांक्षा की तीक्ष्ण धार,
ज्यों बेध रही हो आर-पार।

इसके विपरीत धोबियों *का नृत्य* में ज़रूरी अनुपात में एक ध्वनि-संसार की रचना है :

उड़ रहा ढोल धाधिन, धातिन,
ओ' हुडुक घुडुकता ढिम-ढिम-ढिम,

मंजीर खनकते खिन-खिन-खिन,
मदमस्त रजक, होली का दिन,
लो, छन, छन, छन,
छन छन, छन छन।

फिर अचानक लय बदल जाती है—और यह पंक्ति आती है, कि जैसे कोई *ब्रेक* लग गया हो : *थिरक गुजरिया हरती मन।*

इस कविता में, नाच गुजरिया हरती मन, ठुमुक गुजरिया हरती मन, मत्त गुजरिया हरती मन, चतुर गुजरिया हरती मन, आदि पंक्तियाँ, नृत्य-संगीत ध्वनियों को एक ज़रूरी अंतराल या स्पेश देने के लिए ही रखी गई हैं। इन पर थोड़ी देर के लिए हमें टिकाकर—ठहराकर—कविता फिर आगे बढ़ती है।

यहीं पर, पंतजी पर *स्वर-सिद्ध* शीर्षक से लिखे गए *अज्ञेय* के लेख के एक अंश को सामने रख लेना निश्चय ही प्रासंगिक होगा। अज्ञेय ने लिखा है :

शब्द ध्वनियों के प्रति जैसी सजगता सुमित्रानंदन पंत में थी वैसी मैंने हिंदी के किसी दूसरे कवि में नहीं देखी, निराला में भी नहीं। रीतिकाल के कुछ कवियों में उसी तरह की कुछ सजगता मिलती है, लेकिन जैसा कि पंतजी ने भी लक्ष्य किया था, उन कवियों का ध्यान व्यंजन ध्वनियों की ओर अधिक था। काव्य में शब्द संगीत का आधार व्यंजन ध्वनियाँ नहीं, बल्कि स्वर ध्वनियाँ हैं, इसकी अचूक पहचान पंतजी को थी और आधुनिक हिंदी को यह उनकी बहुत बड़ी देन है कि उन्होंने अपने समकालीन और परवर्ती कवियों को स्वर-सौंदर्य की पहचान करा दी। यह बात दुहराने की ज़रूरत है कि पंतजी इस मामले में अद्वितीय थे। निराला भी यह पहचानने तो लगे थे कि परवर्ती कवियों के काव्य में शब्द-संगीत का आधार दूसरा हो गया है—एक बार उन्होंने स्वयं मुझसे कहा था कि उनके लिए काव्य का आधार हमेशा 'संगीत का स्वर' रहा जबकि हम लोक 'शब्द के स्वर' को ही महत्त्व देते हैं। निराला में इस बात की इतनी स्पष्ट पहचान है, यह जानकर मुझे प्रसन्नता हुई थी। लेकिन निराला ने यह लक्ष्य किया था या नहीं कि इस नई पहचान का उत्स सुमित्रानंदन पंत में है, या ऐसी संभावना प्रकट करने पर वह बहक भी जाते। लेकिन मैं तो जानता हूं कि स्वर ध्वनियों पर पंतजी का ऐसा अधिकार था कि उन्हें सच्चे अर्थ में स्वर-सिद्ध कवि कहा जा सकता है। वह स्वयं उत्तर काल में इस प्रतिभा को कम महत्त्व देने लगे थे, यह दूसरी बात है। यह भी हो सकता है कि इसका महत्त्व उनकी दृष्टि में इसीलिए कम हो कि इसे वह पूरी तरह आप्त कर चुके थे।

अज्ञेय द्वारा दृढ़तापूर्वक की गई पंतजी के इस योगदान की चर्चा की याद मुझे यहाँ इसलिए भी ज़रूरी लगी है कि अगर इसे वास्तव में—किसी न किसी तरह के प्रभाव के रूप में—लागू किया जाए तो परवर्ती पीढ़ियों के कई गद्य-पद्यकारों में पंत कहीं-न-कहीं से झाँकते नज़र आएँगे। पीढ़ियों के बीच इस तरह का आदान प्रदान हर भाषा में होता है, हिंदी में भी वह बहुतेरा हुआ है, हाँ हम उसे निर्दोष या निष्कलुष साहित्य-अनुराग के ज़रिए जाँचते ज़रा कम रहे हैं। आज के उत्तर आधुनिक दौर में, जब रचना के पाठ का एक अलग तरह का आग्रह है, और बहुकोणीय पाठ की संभावना को तरजीह दी जा रही है, तब पंतजी के नए पाठ में से बहुतेरी नई चीजें निकलेंगी या निकल सकती हैं।

वैसे इसे याद करना भी कम सुखद नहीं है कि पंतजी के कई तरह के पाठ, स्वयं उनके जीवनकाल में हुए थे, और अगर आलोचकों-समीक्षकों को फिलहाल छोड़ भी दें, तो स्वयं उनके समकालीनों और परवर्ती पीढ़ियों के रचनाकारों के कई महत्त्वपूर्ण पाठ उपलब्ध हैं। निराला के, दिनकर के, बच्चन के,और फिर *अज्ञेय, मुक्तिबोध* और शमशेर के। मुक्तिबोध के दो निबंध, *सुमित्रानंदन पंत और सुमित्रानंदन पंत : एक विश्लेषण*—पंत की कविता में भाव-अनुभूतियों, विषय-वस्तुओं और उनके विविधवर्णी सरोकारों और योगदान के विश्लेषण के कारण, आज भी अत्यंत प्रासंगिक लगते हैं। इसी तरह *ग्राम्य* की शमशेरजी की विस्तृत समीक्षा भी, जो 1940 की लिखी हुई है—पंत की कविता और उसके भाव-आस्वादन पर बहुत कुछ कहती है। इसी में शमशेरजी ने लिखा है : पंतजी के व्यंग की तरलता और गहराई और उसका आस्वादन भी —अभी बहुत कुछ भविष्य की चीज़ है।

व्यंग की तरलता—पंत काव्य के संदर्भ में, *ग्राम्या* के सम्बन्ध में, यह शमशेर जी का एक बिल्कुल विशिष्ट आकलन है। और इस सिलसिले में यह पूरी समीक्षा ही दृष्टव्य है।

इसी समीक्षा में, शमशेरजी ने एक और *स्थापना* की है। इस समीक्षा की शुरुआत में ही वह *स्थापना* है। वह लिखता है :

उस दिन खासी बहस के बाद यह सवाल उठा था कि क्या हम इन कविताओं को फिर-फिर पढ़ने को लालायित होते हैं ? शायद नहीं। और इस सहमति के बाद बहस ख़त्म हो गई थी।

एक बड़ी गलती हमने की थी।

एक और मित्र के साथ कुछ दिन बात 'ग्राम्या' की कुछ कविताएं पढ़ रहा था। और उस समय यह बात मुझे महसूस हुई कि नये पंत को हमें सिर्फ़ अकेले और एकांत भाव से पढ़ना होगा।.... ?

शमशेरजी की यह टिप्पणी, पंत-काव्य के संदर्भ में आज भी कितनी सटीक है।

पंत काव्य को, स्वयं पंत को, पिछले दो-तीन दशकों में कुछ विस्मृत कर दिए जाने की, उनके प्रति उदासीन-सा हो जाने की, जो शिकायत सुन पड़ती रही है, उसके पीछे क्या यह धारणा भी नहीं रही है कि *उनकी कविताएं फिर-फिर पढ़ने को लालायित नहीं करतीं।*

ग्राम्या की कविताओं के संदर्भ में शमशेरजी ने एक और मार्के की बात कही है, जिसे हम समूचे पंत-काव्य पर लागू करके देख सकते हैं:... *यह हो सकता है कि जहाँ वह (यानी पाठक) सिर्फ़ मस्त है बेखबर होना चाहता हो वहाँ वह अपने आप को ठगा-सा, खोया-सा पाए और बुरी तरह। या जहाँ वह आग और शोला ढूँढ़ता है, वहाँ उसे अधिक गर्मी नहीं, सिर्फ़ रोशनी मिले। जिसमें वह कुछ इस तरह अपने आपको पहचानने लगे मानो वह किसी नई दुनिया में आंखें खोल रहा हो।...*

रोशनी—यह पंत-काव्य के संदर्भ में एक बीज शब्द हो सकता है। क्या यह रोशनी उनकी कविताओं को पढ़ते हुए तत्काल हम तक पहुंचती है ? नहीं, वह उस अर्थ में कोई कोई ज्योति-पुंज नहीं है—पंतजी ने उसे वैसा बनाना भी नहीं चाहा है। यह रोशनी तो धीरे-धीरे शब्दों से छनकर, उभरकर हम तक पहुँचती है, और वास्तव में उनकी कविताएँ एकांत-पाठ की भी माँग करती हैं।

सुमित्रानंदन पंत युग-कवि थे। हर अर्थ में। उन्होंने अपने युग के साथ संवाद किया, और उनके युग ने उनके साथ। अपने जीवन के बहुलांश में उन्हें हिंदी-भाषी समाज का, साहित्य-समाज का भी पर्याप्त आदर और प्रेम-मिला। उनके युग का शायद ही कोई ऐसा विषय हो, शायद ही कोई ऐसी समस्या हो, जिसे उनकी कविता में स्थान न मिला हो। विचार-सरणियों, विचारधाराओं के स्तर पर भी देखें तो, गांधी, मार्क्स, अरविंद—सब वहाँ किसी न किसी दौर में मौजूद हैं। *ग्राम्या, युगांत* आदि में उस वक़्त के भारतीय समाज को भी कविता में आयत्त करने का यत्न है, है। पर, फिर क्या हुआ ? उत्तरकाल के पंत ही नहीं, लगभग समूचे पंत ही क्यों, विस्मृत-से होते चले गए हैं ? क्यों परवर्ती पीढ़ियों में उनकी कविता के प्रति उद्दाम आकर्षण कम होता चला गया है ? क्या इसलिए भी नहीं कि वे पंत, जिन्होंने काव्य में शब्द-संक्षिप्ति की, प्रिसीजन की, राह बनाई थी, और जिसके लिए बाद की पीढ़ियाँ, उनकी ऋणी रहेंगी, वही उत्तरकाल में जाकर शब्द-स्फीति के शिकार हुए ? और इस क्रम में उनकी अन्य रचनाएँ भी कुछ बिसरती चली गईं।

पर, इस विस्मरण का एक और बड़ा कारण मुझे लगता है। निराला, प्रसाद, महादेवी की तरह पंत ने गद्य के क्षेत्र में—मात्रा और गुण दोनों ही दृष्टियों से—कुछ विशेष नहीं किया, और धीरे-धीरे एक ऐसा युग आता गाया, या कहें, युग आते गये, जहाँ गद्य के बिना काम चलता नहीं है। और किसी कवि की कविता के प्रति आकर्षण, मानो उसके गद्य के प्रति आकर्षण के द्वारा भी संभव होता रहा है। निराला, प्रसाद, महादेवी ही नहीं, अज्ञेय, मुक्तिबोध, शमशेर से लेकर, साही, रघुवीर सहाय, श्रीकांत वर्मा और अब विनोदकुमार शुक्ल तक में हमें, गद्य-पद्य के मिले-जुले रूप का यही *आकर्षण* दिखाई पड़ता है। पर, पंत ने विचार, दर्शन, विश्लेषण, वर्णन—सबके लिए पद्य का ही आश्रय लिया। और इस अर्थ में शायद वह हिंदी के अंतिम ऐसे बड़े कवि थे, जो *कवि की छवि पर* ही पूरी तरह भरोसा करता था। बहरहाल, उनके विस्मरण के कारण चाहे जो भी हों, ऐसे समर्थ कवि—और हिंदी में एक और मधुर, कोमल, झंकृत हिंदी निकालने वाले कवि—की छवि विस्मृत करने वाली चीज़ तो बिल्कुल ही नहीं है। उनके साथ एक समय जितना न्याय हुआ है, उतना

ही बाद में अन्याय हुआ है। उनके जन्मशती वर्ष से, उम्मीद करनी चाहिए कि, इस सिलसिले में भूल-सुधार का एक क्रम भी शुरू होगा। जहाँ तक उनके बड़ेपन का सवाल है, वह तो इसी से सिद्ध है कि, स्मरण-विस्मरण के कई दौरों से गुज़रते हुए वह छवि कभी धूमिल नहीं होने पाई, और जब, जिसने उसकी ओर पलट कर देखना चाहा है या पलटकर देखा है, तो पाया है कि उनकी काव्य-संपदा में अभी भी बहुत कुछ ढूँढ़ा जा सकता है।

अंत में पंतजी की कविता से अपने सम्बन्ध की चर्चा करना मुझे ज़रूरी लग रहा है—केवल औपचारिक या आनुष्ठानिक रूप से नहीं, वास्तविक रूप से। तो, एक पाठक के नाते, और कविता लिखने वाले व्यक्ति के नाते भी, पाता हूँ कि अपनी किशोरावस्था से लेकर आज तक, यह सम्बन्ध कमोबेश अटूट ही रहा है। और वह अटूट सिर्फ़ इसलिए नहीं रहा है कि प्रकृति से, और कविता में भी प्रकृति से, एक गहरा नाता मैं भी अपना मानता रहा हूँ, दरअसल यह सम्बन्ध अटूट रहा है तो इसीलिए कि उनकी कविता के निकट जाकर, मुझे एक अभयारण्य में विचरने की-सी अनुभूति होती रही है—पंत-काव्य की आलोचना-प्रशंसा की छूट आपको वह कवि और काव्य, स्वयं कुछ इस तरह देते हैं कि आप चकित तक रह जा सकते हैं : हो सकता है कि आप इस अभयारण्य में थोड़ी देर के लिए कहीं अटक-भटक जाएँ, थक और निराश भी हो जाएँ, पर, फिर कहीं कोई छाया आपको दिखेगी, कोई किरण या रोशनी, और वह अपने में आपको रमा लेगी, तृप्त करेगी। और उनकी कविता बहुतेरे अर्थों में *सदानीरा* भी तो है।

अपनी एक कविता में उन्होंने पूछा था : *तुम्हें नहीं दीखी वह सदानीरा?*

हम भी नहीं-भाषा समाज से यह पूछते रह सकते हैं।

बलराम और कृष्ण का कला में आविर्भाव-समय

डॉ. सरोजिनी कुलश्रेष्ठ

बलराम और कृष्ण ब्रजक्षेत्र के लिए चिर परिचित हैं। यहीं उनका जन्म हुआ हुआ तथा यही उनकी लीला भूमि भी थी। महाभारत और पुराणों में उनका चरित्र विस्तार से वर्णित है। फिर भी न जाने क्यों उनका अंकन आरम्भ में नहीं हुआ। आश्चर्य की बात है कि इनका पुरातात्विक उल्लेख सबसे पहले हमें मथुरा क्षेत्र से बाहर ही मिलता है। चित्तौड़ के नागरी ग्राम के निकट हाथीबाड़ा नामक ध्वंसावशेष हैं। वहाँ से उपलब्ध एक लेख के अनुसार जो कि ईसापूर्व की पहली सदी का है इसका नाम 'नारायण वाटिका' था। इसे सर्वतात नामक राजा ने संकर्षण (बलराम) वासुदेव के लिए बनवाया था।

कुछ समय पूर्व पुरात्वविदों के एक दल ने अफगानिस्तान और रूस की सीमापर स्थित वक्षु नदी के कांटे में 'अई सानुम' नामक स्थान की खुदाई की थी। वहाँ सिक्कों के एक निरवात में भारत के यवन (यूनानी) शासक अगधुक्लेय (ईसापूर्व 150 के आसपास) के सिक्कों पर एक और मूसल और हलधारण किए हुए बलराम का तथा दूसरी ओर चक्रधारी वासुदेव का अमन अंकन हुआ है।

इन सिक्कों के प्रकाश में आने पर माना गया कि ब्राह्मणों (हिंदू) में देवी देवताओं की मूर्तियों की कल्पना हमें यवन से प्राप्त हुई हैं। वैसे भारत के यवन शासकों के सिक्कों पर हिंदू देवी देवताओं के अंकन का यह एकाकी उदाहरण नहीं है। इसके पूर्व भी अंबा (पार्वती) के मूर्त स्वरूप का अंकन यूनानी भांत के सोने के एक सिक्के से हो चुका जो लंदन ब्रिटिश संग्रहालय में है। इस सिक्के पर एक खड़ी हुई नारी का अंकन है। एक किनारे पर खरोष्टी लिपि में उसका परिचय 'पुखलावती नगर देवता' के रूप में दिया गया है। इस सोने के सिक्के के दूसरी ओर विश्व वाहन व्रषभ का अंकन और उषभ (वृषभ) लेख है। इसी क्रम में हमें शक-पह्लव शासक है के सिक्के पर पहली बार अभिषेक लक्ष्मी का चित्र देखने को मिलता है।

भारत के भूभाग पर हिन्दू देवी देवताओं का जो मूर्तन हमें प्राप्त होता है वह कुषाण काल (पहली और दूसरी ई. शदी) का है। यह मूर्तन उनके सिक्कों पर शिक स्कंद, महासेन विशाख और कुमार के नाम से कार्तिकेय रूप में प्राप्त होता है। मूर्तिकला भी इसी काल से देखने में आती है। यह मथुरा से प्राप्त हुई है। यहाँ ऐसी कुछ चतुर्भुज मूर्तियाँ मिली हैं जिनके तीन हाथों में शंख, चक्र और गदा है तथा चौथा हाथ खाली है। इनको सभी विष्णु समझ लेते हैं परन्तु विष्णुपुराण, हरिवंश और भागवत में जहाँ भी आयुध धारी कृष्ण वासुदेव की चर्चा हुई है उनके इन्हीं 'तीन आयुधरें के धारण करने की चर्चा है अत:ये मूर्तियां विष्णु की न होकर वासुदेव कृष्ण की हैं। यहाँ कृष्ण वासुदेव को मूर्तियों के रूप में पहली बार जुड़ा हुआ पाते हैं। इनकी मूर्तियों के कुछ अन्य रूपों में भी उपलब्ध होती हैं। उनमें संकर्षण वलदेव और कृष्ण वासुदेव के मध्य में एक नारी अंकन है। यह एकानंशा है वह बेटी जिसे वासुदेव कृष्ण के बदले में गोकुल से लाए थे वही यशोदापुत्री एकानंशा है। जगन्नाथपुरी में वह समुद्रा के नाम से जानी जाती है।

न जाने क्यों बलराम और कृष्ण कुषाण काल से पहले अनजाने रहे हैं। वस्तुत: अभी सम्बन्ध कुषाण काल से पहले ही कला से जुड़ चुका था। प्राचीनतम सिक्कों-आहत मुडायों पर वे अंकित हुए हैं। ये सिक्के ईसापूर्व की सातवीं आठवीं शती में प्रयोग में लाए जाते थे। इन सिक्कों पर लेख नहीं है यदि है तो केवल लांछन अंकित है इन्हें समझ पाना अभी तक नहीं हो पाया है। अनुमान है कि ये लाइन टकसाल स्थल, राजवंश तथा राज्य आदि के प्रतीक होंगे। इन्हीं में कुछ मानव आकृतियाँ भी मिली हैं। एक आकृति के दोनों

हाथ ऊपर उठे हुए हैं। दाहिने हाथ में हल सरीखा आयुध है तथा बाएं हाथ में दंड जैसा दिखाते देता है। इसे मूसल समझा जा सकता है। यह निश्चित ही बलदेव संकषर्ण का रूप है और यह रूप कुषाण काल से बहुत पहले का है। आहत मुडाओं के इस अंकन के बाद भी मौर्यकाल, मित्रकाल और क्षत्रय शासकों के सिक्कों पर भी अंकित है जो कुषाणों के आने से पूर्व लगभग दो शती तक मथुरा पर शासन करते रहे। अनुमान होता है कि आहत मुडाएँ भी मथुरा की टकसाल में बनी होंगी।

इसके अतिरिक्त एक और भांत का सिक्का भी दृष्टिव्य है जिस पर एक लांछन के रूप में अगल बगल दो आकृतियों का संयुक्त अंकन हुआ है। दोनों ने बड़े खड़े होने की भंगिमा एक सी है। बाईं और खड़ी आकृति संकर्षण वाली आकृति की तरह ऊपर उठे हाथों में हल और मूसल लिए हुए हैं अत: निश्चय ही ये संकर्षण हैं। दाई ओर जो आकृति है उसके ऊपर उठे हुए दोनों हाथों में-दाहिने हाथ से एक गोल वस्तु है जिसे चक्र माना जा सकता है ऊपर उठे बाएँ हाथ में पकड़े आयुध को निश्चित रूप से गदा माना जा सकता है। इस प्रकार इस भांत के सिक्कों पर संकर्षण बलदेव और कृष्ण वासुदेव दोनों का अंकन एक साथ हुआ है। यह युगल मूर्ति हाथी बाड़ा वाले अभिलेख में उल्लिखित संकर्षण वासुदेव की याद दिलाता है। इन दोनों का संयुक्त उल्लेख परवर्ती नागेघाट स्किंत सातवाहन अभिलेखों में भी हुआ है।

इस भांत का सिक्का भी मथुरा का ही है अर्थात् कृष्ण वासुदेव और संकषर्ण बलदेव के मूर्तन का आरंभ अभी क्रीड़ा स्थली मथुरा से ही हुआ था।

आत्मकथ्य

अहसास

कुसुम ढींगरा

जिन्दगी में काफी अनुभूतियाँ होती है परन्तुं कुछ घटनाएं ऐसी छाप छोड़ती है जिनको आप सारी उमर याद रखते है या यूं कहें कि याद रखना चाहते हैं। ऐसा ही कुछ मेरे साथ भी हुआ, वो थी मेरी पहली विदेश यात्रा, पहली बार साल 2009 में मेरा आस्ट्रेलिया जाने का मौका आया जब मेरे बच्चे वहां मेलबर्न में पढ़ रहे थे। पहली विदेश यात्रा वह भी बिलकुल अकेले क्योंकि मेरे पति कुछ कारणों वश मेरे साथ नहीं जा रहे थे और कुछ समय बाद आने वाले थे। एक तो पहली बार विदेश यात्रा और वह भी बिलकुल अकेले। मुझे समझ नहीं आ रहा था कि यह कैसा अनुभव है! मन में खुशी भी थी लेकिन कुछ असमंजस भी। खैर जाना तो मुझे था ही। पहला पड़ाव था दिल्ली एयरपोर्ट। बच्चों के लिए प्यार कहें या उनकी आवश्यकताएं, सामान कुछ अधिक हो गया। एक अकेले जाने की घबराहट और कुछ सामान का अधिक होना परेशानी का कारण बन गया। सामान था कि सब चीज़े जरूरी होने का अहसास दिला रही थी। जैसे-तैसे सामान निकाल कर बाहर खड़े अपने पति को पकड़ाया और आगे की ओर प्रस्थान किया। मुझे अपना विमान हांगकांग से बदलना था जहां समय केवल दो घंटे था। पहली बार होने के कारण घबराहट कुछ ज्यादा थी और दूसरा विमान जिस गेट से लेना था वह काफी दूर था शायद मेरे पहले गेट से 55-60 गेट दूर। चलते चलते मैं थक गयी क्योंकि मेरे पास एक हैंड बैग भी जो कि काफी भारी था। जैसे-तैसे मैं अपने गन्तव्य पर पहुंची तो पाया कि विमान परिचारिका मुझे ही ढूंढ रही थी और अगर कुछ और देर हो जाती तो शायद उन्हें घोषणा करनी पड़ती मुझे ढूँढ़ने के लिए। इस अफरा-तफरी के माहौल में मैं अपने घर टेलीफोन भी नहीं कर पायी पर विमान में बैठने के बाद मुझे पता चला कि टेलीफोन तो ये विमान से भी कर सकती हूँ लेकिन एक मिनट के 9 अमेरिकी डालर लगेंगे वो भी अगर मेरे पास क्रेडिट कार्ड होगा तो। मैंने भगवान को धन्यवाद दिया कि चलो फोन करने का तरीका तो मिला मैं फोन पर सिर्फ इतना ही बोल पायी कि हांगकांग पहुंच गयी हूँ और अगले विमान में बैठ चुकी हूँ। वहां पहुंच कर मेरा समय बच्चों के साथ कैसे बीता कुछ पता ही नहीं चला। 2010 में मैं और मेरे पति दोबारा मेलबर्न गये इस बार मेरे पति के साथ पहली विदेश यात्रा थी खैर इस बार घबराहट का कोई स्थान ही नहीं था क्योंकि इस बार पति का साथ था। कुछ खट्टे-मीठे अनुभवों को बटोरे हम मेलबर्न पहुंचे इस बार क्योंकि हम दोनों साथ थे तो घूमना अधिक हो पाया। वहां का वातावरण मौसम मेरे पति को तो कुछ अधिक ही भाया। लेकिन सबसे अच्छा था वहां का अनुशासन चाहे वो सड़क पर पैदल चलना हो या गाड़ी चलाना अथवा एक्सलेटर से कहीं किसी माल में जाना या स्टेशन से बाहर आना सभी जगह सबको एक सामान नियमों का पालन करना। सड़क पार करने के लिए किसी को खड़ा देख कर स्वयं गाड़ी रोकने एक्सलेटर के एक तरफ खड़ा होना ताकि दूसरी ओर से कोई अगर आगे बढ़ना चाहे तो बढ़ सके एक को सीढ़ी की तरह प्रयोग करके और कार्यस्थल पर कोई भेदभाव न हो, सभी का एक दूसरे को सम्मान और आदर से देखना, किसी भी काम को छोटा न समझना मुझे बहुत भाया। कोई भी यातायात के नियम नहीं तोड़ता चाहे वो कोई नेता हो या सामान्य नागरिक नियम तोड़ने पर दंड सभी के लिए एक जैसा। किसी भी दिशा में 10 किलोमीटर चले जाओ इतना खुला स्थान इतना खुला वातावरण, हरियाली ही हरियाली मन शांत हो जाता है। कहीं भीड़भाड़ नहीं। ज़रा धूप निकले तो निकल पड़े समुद्र किनारे। दीन दुनिया से बेखबर अपने में मस्ती। इतनी सफाई कि तिनका भी दिखे। खूब बारिश होती है परन्तु पानी कहां जाता है पता ही नहीं चलता, इन दोनो अवसरों से

अगला इस बार की यात्रा का मन में कुछ अलग ही अहसास था मन में खुशी थी एक अनोखी खुशी जो मुझे अपने बेटे के जन्मदिन पर मिली जिसने मेरे मन के अहसास को बदल दिया। वह खुशी थी मेरे घर में एक नन्हे मेहमान के आने की आहट। उस दिन के बाद तो कुछ ऐसा हो गया कि मेरी दुनिया ही बदल गई, हर पल एक अहसास, एक खुशी और मन ही मन मुस्कुराना मेरी दिनचर्या हो गयी। सारा दिन मैं तो अपने काम कर रही होती शरीर तो भारत में था लेकिन मन मेरे वहां जाने से बहुत पहले ही वहां पहुंच गया। मेरा मन सदा मेरी बहू को याद करता और सोचता काश! इस समय मैं वहां होती, सारा समय उसी के बारे में सोचती और सपनों में अपने अहसास को पनपता देखती। मुझे इससे कोई सरोकार नहीं था कि वो मेहमान लड़का होगा या लड़की। बस मन में उसे देखने, गोद में लेने की चाहत हर समय पंख पसारती रहती और मैं दिन गिन-गिन कर समय के आने का इन्तज़ार करती रही। वैसे तो विदेशों में अगर माता पिता चाहें तो उन्हें आने वाले मेहमान का लिंग पता चल जाता है लेकिन मेरे बच्चों ने ऐसा नहीं किया और जैसा कि अपने देश में होता है वही किया कि जन्म के समय ही पता लगेगा कि आने वाला राजकुमार है या राजकुमारी। मेरे लिए तो यही बहुत बड़ी सुखद अनुभूति थी कि मैं दादी बनने वाली हूँ। औरत होने के नाते मैं तो फिर भी अपनी खुशी जाहिर करती रहती थी लेकिन अगर ऐसा हो जाता तो मेरे पति तो दादा बनने के अहसास से हर समय उछलते रहते शायद मेरी तरह उनके लिए भी यह बहुत अनोखा अनुभव था अपने परिवार के पहले नन्हें मेहमान का। शायद अपने बेटे के जन्म पर हम इतने खुश नहीं हुए होंगे, जितने बेटे के घर नन्हें मेहमान के आने के अहसास भर से। शायद वो भी सपनों में अपने पोते या पोती को गोद में लेते होंगे नन्हें हाथ पकड़ते होंगे। एक पुरानी कहावत है कि मूल से सूद प्यारा होता है इस बात का अहसास हमें पहली बार तब हुआ जब अपनी नन्हीं पोती को पहली बार गोद में लिया मुझे ऐसा लगा कि सारी कायनात सिमट कर मेरी गोद में आ गयी हो। शायद यह मेरी जिन्दगी का सबसे बड़ा क्षण था जिसका वर्णन शब्दो में कर पाने में मैं अपने आप को असमर्थ पा रही हूँ। उसके नन्हे हाथ पैर शायद मुझे यह अहसास दिला रहे थे कि देखों दादी अपने बेटे और बेटी के बचपन को दुबारा और जी लो एक बार फिर वही जिन्दगी 30 साल अन्तर से। उसके जन्म के बाद से तो सब कुछ बदल गया। जिन्दगी जैसे उसी बच्ची में सिमट गई। हर समय इसका ध्यान कब सोई, कब जागी, आराम से सोई, सर्दी तो नहीं लगी, कुछ ऐसी ही बातें हमारी चारों की चर्चा का विषय होती। दीन दुनिया से बेखबर मेरा सारा ध्यान मेरी नन्ही परी में रहता। समय तो खैर अपनी गति से चलता रहता है लेकिन मुझे इस गति का अहसास तब हुआ जब मेरे आने का समय नज़दीक आ गया तब मुझे पता चला कि समय रूका नहीं था लेकिन मुझे अहसास नहीं हुआ। अस्पताल में जाकर मुझे अहसास हुआ कि यहां के सरकारी अस्पताल शायद भारत के निजी अस्पतालों से भी कही अधिक साफ हैं और बहुत अधिक देखभाल है। लेकिन सबसे अच्छा लगा वहां के लोगों का व्यवहार। शायद उन्हें भी मेरी खुशी का अहसास था इसलिए जो मिलता यहीं कहता First grand child और मैं मुस्कुराकर कहती 'हाँ' और यही एक 'हाँ' शायद मेरी सारी खुशियों का अहसास उन्हें करवा देती तभी तो सभी लोगों का एक जैसा जवाब होता कि उन्हें हमारे चेहरे से ही पता लग गया था। खैर भारी मन से मैं अपनी नन्हीं परी को केवल दो महीने ही पल पल बढ़ता देख कर भारी मन से वापिस आ गई। दिनचर्या तो अभी भी वही है लेकिन उसमें एक काम और जुड़ गया है हर पल मन ही मन अपनी नन्ही परी को याद करना और उसके आने का इन्तजार जो शायद दीवाली पर खत्म होगा। और मेरी नन्ही परी फिर एक बार एक महीने के लिए मुझे अपने होने का अहसास दिलाएगी और एक बार फिर मुझे खुशियों और यादें देकर वापिस अपने घर लौट जाएगी। शायद यह वादा लेकर कि मैं जल्द फिर मेलबर्न आकर उसके साथ खेलूंगी और उसे अपनी गोद में उठा कर यह सोचूं कि बूढ़ा होने का अहसास इतना सुखद होता है शायद यह मुझे दादी बनने के बाद पता चला।

कुछ हलचल जरूरी है

शशीबाला बुद्धिराजा

जीवन की नइया चलती रहे तभी संभव है कुछ कर गुजरने का। कुछ तलाश जरूरी है कुछ पाने के लिए। जीवन पर्यन्त चलने वाली तलाश खत्म नहीं होती। अगर जीवन में कुछ हलचल न हो, कुछ नया न हो तो जीवन नीरस सा लगने लगता है। सुबह से शाम तक काम में लगा व्यक्ति किसी वजह से अगर काम नहीं कर पाता तो उसे लगता है कि आज का दिन बेकार गया वो कुछ नहीं कर पाया। हिमालय की उंची चोटी पर चढ़ना प्रथम बार किस ने सोचा होगा। किसके दिमाग में यह बात आई होगी कोई नहीं जानता। कठिन परिश्रम के पश्चात् भी जिसे इस कार्य में सफलता नहीं मिली उसे कौन जानता है, पर मैं यह समझती हूं उसने शुरूआत की, रास्ता बनाया, उस मार्ग पर न जाने कितने व्यक्ति चले, पर सभी सफल तो नहीं हो सकते, सफल तो कुछ गिने चुने लोग ही होते हैं। या यूं कहिएं मेहनत और सफलता एक दूसरे के पर्याय कुछ लोगों के लिए बनते है, ऐसा भी नहीं है, मगर आपकी मेहनत, सूझबूझ या अच्छी सोच-समझ व्यर्थ नहीं जाती। कहीं न कहीं काम आती है। एक परिश्रमी व्ययक्ति की यहीं सोच होनी चाहिए न कि उस बात को दिमाग में रखकर कि मुझे सफलता नहीं मिली, इस डर से वो काम करना ही छोड़ दे। सफलता मिलना एक अच्छी बात है अगर आप कभी विफल हो जाते हैं तो उसमें भी बुराई नहीं है आपको और अधिक मेहनत की प्रेरणा मिलती है। जितनी मेहनत आप करेगें फायदा उतना ही आप का होने वाला है।

करत - करत अभ्यास के जड़मति होत सुजान। अर्थात अभ्यास करने से कुछ भी हो सकता है। यह आपकी परीक्षा की घड़ी है। हिमालय की चोटी पर चढ़ना हो तो उस के लिए भी आपको सर्वप्रथम तैयारी करनी होगी उसके लिए जरूरी हिदायतें हासिल करनी होंगी। कुछ सामान जुटाना होगा यथा— मौसम के हिसाब से कपड़े, खाद्य सामग्री, चढ़ाई के समय काम आने वाले जरूरी उपकरण और अन्य दिनचर्या की छोटी छोटी चीज़ें। चूंकि यह काम सरल नहीं है तथापि योजनाबद्ध तरीके से करने पर कुछ मुश्किलें आसान हो सकती है। हमारा कर्तव्य है कर्म करना। फल की इच्छा न रख इस बात को हमेशा ध्यान में रखना कि जरूरी क्या है यह प्रक्रिया आत्ममंथन कहलाती है या यूं कहें स्वयं को जानना या स्वयं की खोज।

अक्सर लोग दूसरों में बुराईयाँ ही खोजते हैं। खुद को जीवन पर्यन्त पाक पावन साबित करने में लगे रहते हैं। सारा जीवन यूं ही गवां देते हैं। यदि एक बार भी हम आत्ममंथन करें खुद को जाने तो सभी प्रश्नों के हल स्वयं से ही मिल जायेंगे। हमारे प्रश्नों में छिपे उत्तर हमें प्राप्त हो जायेंगे। हम अपना पूरा समय, अपनी कार्यक्षमता खुदको खोजने में ही लगाये तो तभी हमें अपनी गलती का एहसास होता है और दूसरों की अच्छाइयों का भी ज्ञान होता है। किसी में बुराई ढूढंना, आलोचना करना सरल है मगर खुद में बुराई ढूढंना कठिन है। अपनी गलती हमें गलती नहीं लगती। दूसरों की छोटी सी गलती भी हमें बुरी लगती है।

आज समाज के हर क्षेत्र में ऐसा चलन हो गया है कि कुछ लोग मिल कर अपना एक समूह बना लेते है समूह के कुछ नियम बनाये जाते है जिसे उस समूह के हर सदस्य को निभाने होते हैं। बस फिर क्या, वो अपना विजय अभियान शुरू कर लेते हैं उनका मिशन होता है कामयाबी। कैसे हासिल करनी है वो सब कुछ कैसे पाना है जो एक अकेला व्यक्ति नहीं कर पाता पर समूह अपनी ताकत से प्राप्त कर लेता है। अच्छे बुरे तरीके से धन दौलत हासिल करना बिना किसी की परवाह किये। उसका भविष्य में क्या परिणाम रहेगा। या

हमारी आने वाली पीढ़ी पर इसका क्या असर होगा। किसी भी व्याक्ति को इस की परवाह नहीं है। पैसे के सामने हमारी सोच छोटी पड़ जाती है। हम खुद को दबा महसूस करते हैं।

मां बाप बच्चों के आदर्श होते हैं। बच्चे अक्सर अपने मां बाप का अनुकरण करते हैं। यदि अभिभावक ही ऐसे होंगे तो हम अपने उत्तराधिकारियों पर इस बात का दोष नहीं मड़ सकते कि वो गलत हैं बल्कि उनके लिए तो रास्ते हमने इज़ाद किये हैं। हमने खुद ऐसी परिस्थितियाँ कायम की हैं, रास्ते इज़ाद किए हैं। फुरसत में यदि हम बैठ कर इस विषय पर आत्ममंथन करें तो हमें खुदबखुद पता चलेगा कि हमारी सोच कितनी छोटी है। अपने बच्चों को धरोहर में हमने क्या दिया—झूठ बोलना, चोरी करना, धोखा देना। साम-दाम-दण्ड-व भेद किसी भी तरीके से कुछ भी हासिल करना। जब मां बाप ही यह भूल जाते है कि उन्हें अपने बच्चों को क्या शिक्षा देनी है तो बच्चे क्यों याद रखें। जब बच्चे हाथ से निकल जाते हैं तो हम समझते हैं ऐसा क्यों हो रहा है। चिंता सताने लगती है। सुधी जन इस विषय पर अनुसंधान करने का प्रयास तो कर ही रहे हैं साथ ही आत्ममंथन की बात भी कही है।

इसी तरह जीवन की नईया चलती रहे कुछ नया होता है रहे। चूंकि आज हर इंसान की नजर इस विषय पर टिकी है।

यात्रा वृत्तांत

मेरी सातवीं हेमकुंड साहिब की यात्रा

अमरजीत कौर

मैं कार्यालय में अपनी सीट पर बैठी काम कर रही थी कि अचानक मोबाइल की घंटी बजी। मैंने फोन उठाया तो देखा कि सुरिन्दर कौर विश्वास पार्क उत्तम नगर, से फोन था। यह बात सात जून 2013 दिन शुक्रवार की है। उन्होंने मुझसे कहा कि मुझे कल आपके घर आना है और आप से ज़रूरी काम है। मैने कहा कि 'मोस्ट वैल्कम' और सोचा कि 12 जून 2013 को गुरु अर्जुन देव जी का शहीदी दिवस है, हो सकता है इस विषय में कुछ सलाह करनी होगी। 8 जून के दिन शनिवार को वह अपने पति के साथ हमारे घर में आई और कहने लगीं कि हमारे घर मे पाँच रिश्तेदार पंजाब से आ रहे हैं और हम सब 12 जून को शहीदी दिवस मनाने के बाद 13 जून वीरवार को श्री हेमकुंड साहिब की यात्रा पर जाना चाहते हैं और आप को साथ ले जाना चाहते हैं क्योंकि आप इस यात्रा पर छह बार जा चुके हो और आप को इन कठिन रास्ते 'बिखड़े पेंडए लंबे रास्ते' का भली भांति अनुभव है।

'अंधा क्या चाहे दो आंखे' मैं हेमकुंड साहिब जाने के लिए तड़पती रहती हूँ। मैंने आखिरी यात्रा जून 2008 में की थी। इसके बाद मुझे दसवें पातशाह शाहिब श्री गुरु गोबिंद सिंह जी ने बुलाया ही नहीं था। पता नहीं मेरा ऐसा कौन सा बुरा किया हुआ काम आगे आ गया जो मैं इस यात्रा पर नहीं जा सकी। मैं रोज़ दोनों समय यह प्रार्थना करती थी कि गुरु जी मेरी भूल चूक माफ कर के मुझे हेमकुंड साहिब की यात्रा पर बुला लो मुझे जीवन की अंतिम सांस आप के तपस्थान श्री हेमकुंड साहिब पर ही लेनी है।

आखिर दसवें पातशाह साहिब श्री गुरु गोबिन्द सिंह जी ने मेरी पुकार सुन ली। श्रीमती सुरिन्दर कौर जो विश्वास पार्क, उत्तम नगर, नई दिल्ली गुरुद्वारे का प्रबन्ध संभालती हैं, उन्हीं के जरिए मुझे न्यौता दे दिया। इस गुरुद्वारे के स्थान का विवाद चल रहा था। इनके ससुर स्वर्गीय सरदार हरभजन सिंह जी ने बड़े संघर्ष के बाद 1982 में छोटा सा कमरा बना कर श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी का प्रकाश कर दिया था। श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के प्रकाश से पहले विश्वास पार्क, उत्तम नगर के इलाके मे बहुत कम आबादी थी और एक राजस्थानी अनपढ़ औरत को रात के ढाई बजे के करीब कभी कभी नीले घोड़े पर नीले वस्त्र में किसी दैवी शक्ति की आंखों को चकाचौंध करने वाली रोशनी के दर्शन होते थे तो उसने कहा कि यह सिखों के गुरु हैं और अपना स्थान मांगते होगें। ऐसे ही वहाँ रहने वाले एक मुस्लिम लड़के को भी दर्शन हुये। 1984 में सिख विरोधी दंगाईयों ने गुरुद्वारे में आग लगा कर श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के स्वरुप को आग के हवाले कर दिया। उसके बाद फिर सरदार हरभजन सिंह जी, जिन्हें हम सभी पापा जी कह कर बुलाते थे, उन्होंने श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी का प्रकाश कर दिया। इस स्थान का बहुत विवाद चल रहा था। गली के लोगों ने हाई कोर्ट मे केस डाल दिया कि यहाँ गुरुद्वारा नहीं बनने दिया जाएगा। वहाँ केस हारने पर सुप्रीम कोर्ट में चुनौती दी और वहाँ भी गली के लोग हार गये और फिर स्वर्गीय सरदार हरभजन सिंह ने सुप्रीम कोर्ट मे केस जीत कर गुरुद्वारे का कमरा बनवा कर श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी का प्रकाश कर दिया। इस संघर्ष में उनका साथ किसी भी व्यक्ति या संस्था ने नहीं दिया था। इस गुरद्वारे की सेवा पहले सरदार हरभजन सिंह जी की धर्म पत्नी श्रीमती अमृत कौर संभालती थी अब वृद्धावस्था के कारण अब उनकी पुत्रवधु श्रीमती सुरिन्दर कौर संभालती हैं। इन्हें यह सेवा विरासत में मिली है और बहुत अच्छे ढंग से निभा रही हैं। वो राजस्थानी औरत अब बहुत वृद्धावस्था में हैं और उन्हें समय देखना भी नहीं आता। सन् 1982 से अंदाजे से प्रात: चार बजे उठ कर इसी गुरुद्वारे मे झाड़ू की सेवा करके अपना जीवन सफल कर रही हैं।

मैंने सुरिन्दर कौर को सलाह दी कि सितम्बर माह में चलेंगे तब तक बर्फ पिघल जायगी और खच्चर भी तपस्थान श्री हेमकुंड साहिब के दरबार तक जाना शुरू कर देंगे लेकिन उन्होंने कहा कि मेरे बच्चों ने बर्फ ही देखनी है। मैने कहा ऐसा है कि मैं अकेली नहीं मेरे पति भी मेरे साथ चलेंगें। मैंने अपने पति की सलाह के बिना उन्हें सहमति दे दी।

13 जून की तिथि तय हो चुकी थी परन्तु तमाम प्रयासों के बाद भी सूमो, टैम्पु ट्रैवेलर का प्रबंध नहीं हो सका। परन्तु गुरु जी का बुलावा इतना प्रबल था एक टेम्पो ट्रैवेलर पंजाब से दिल्ली पहुँचा हुआ था श्रीमती सुरिन्दर कौर के किसी रिश्तेदार ने दूरभाष द्वारा इस टैम्पो को हेमकुंड साहिब जाने के लिए तैयार कर लिया। दिन वीरवार तिथि 13 जून वाले दिन श्रीमती सुरिन्दर कौर, उनकी बेटी मन्नी, बेटा सन्नी, गुरद्वारे की सेवा करने वाले दो युवा लड़के हनी, सतनाम, पंजाब से आये पाँच रिश्तेदार, मैं और मेरे पति हेमकुंड साहिब की यात्रा पर चल दिये। 13 जून को हमने नगरासु गुरद्वारे में रात्रि विश्राम किया। इस स्थान पर हेमकुंड साहिब की यात्रा करके लौटने वाले और यात्रा पर जाने वाले अधिकांश यात्री रात्रि विश्राम करते हैं। मैंने यात्रा करके लौटने वाले यात्रियों से पूछा कि ऊपर तपस्थान पर बर्फ है तो उन्होंने बताया कि ऊपर बर्फ है और घोड़ा ढाई किलोमीटर पीछे छोड़ देता है। मैं सोच में पड़ गई कि मेरे से चला नहीं जाता मैं ढाई किलोमीटर की पैदल यात्रा वो भी सीधी चढ़ाई कैसे तय करूंगी। 14 जून का शुक्रवार को सवा बारह बजे के करीब हम गोविंद घाट पहुँच गए। यहाँ से पैदल यात्रा शुरू होती है। सुरिन्दर और इसके साथी नौ लोगों ने गोबिन्द घाट से गोबिन्द धाम तक की पैदल यात्रा शुरू कर दी। मुझे चलने में बहुत परेशानी आती है सोच में पड़ गई कि क्या किया जाय। इतने में पता चला कि गोबिन्द घाट से गोविंद धाम तक की हवाई यात्रा हैलिकाप्टर द्वारा शुरू हो चुकी है। मेरे खुशी का कोई ठिकाना न था। हम दोनों पति पत्नी हैलिकाप्टर द्वारा गोबिन्द धाम पाँच मिनट में पहुँच गए। गोबिन्द धाम गुरद्वारे तक जाने के लिए 600 मीटर की चढ़ाई तय कर के हम गुरद्वारे पहुँच गए और हमने अपने लिए और अपने 10 साथियों के लिए कमरा बुक करवाया जो हमें चौथी मंजिल में मिला। हमारे साथी लोग पैदल यात्रा तय कर के गोबिन्द घाट रात दस बजे के करीब पहुँचे। उस समय रात्रि में मूसलाधार बरसात शुरू हो गई और रुकने का नाम नहीं ले रही थी। हम सभी यात्री विश्राम करने लगे।

अगले दिन 15 जून शनिवार को हमारे साथ आये चार युवा लड़के पैदल और बाकी के आठ लोग खच्चर पर हेमकुंड साहिब तपस्थान की यात्रा पर चल पड़े। तेज बरसात के बावजूद भी हेमकुंड साहिब का दरबार हाल संगत से खचाखच भरा हुआ था। हम सभी ने पवित्र तालाब मे स्नान किया जहाँ 33 करोड़ देवी देवता आके रात्रि ढाई बजे स्नान करते हैं। हम सब दरबार हाल पहुँच गए और माथा टेकने के बाद जबरस्ती संगत के बीच में बैठ गए और गुरु जी के खुले दर्शन किए। इसके बाद हमने खिचड़ी और चाय का परसाद छक के वापस गोबिन्द धाम के लिए चल दिये। हम दोनों पति पत्नी घोड़े पर हमारे बाकी साथी दस लोग पैदल उतराई कर के वापस गोबिन्द धाम पहुँच गए और अपने चौथी मंजिल कमरा नंबर 9 में आ गए। तपस्थान श्री हेमकुंड साहिब में रात्रि में किसी भी यात्री को रुकने नहीं दिया जाता क्योंकि वहाँ आक्सीजन की कमी होती है। कभी-कभी मैं सोचती हूँ कि 15,000 फीट की ऊँचाई पर बने तपस्थान से भी कोई यात्री भूखा नहीं आता वहाँ भी सिख धर्म की लंगर की मर्यादा का पालन किया जाता है।

शुक्रवार रात से मूसलाधार बरसात हो रही थी और रुकने का नाम नहीं ले रही थी। रविवार सुबह हम सभी यात्रियों को जो तपस्थान के दर्शन कर चुके थे नीचे गोबिन्द घाट लौटना था। गोबिन्द छाट गुरद्वारे से यह घोषणा की गई कि कोई यात्री ऊपर हेमकुंड साहिब दर्शन के लिए न जाय क्योंकि वहाँ का लकड़ी का पुल टूट गया है और न ही कोई यात्री नीचे गोबिन्द घाट जाय वहाँ झरने के पानी का बहाव बहुत ज्यादा है। ऊपर से पानी तेजी से नीचे की और आने लगा तो गुरद्वारे के सेवादारों ने गेट बंद कर दिया ताकि गुरद्वारे के अंदर पानी न आ सके। कुदरत का चमत्कार ऐसा हुआ कि एक पत्थर पानी के बहाव के आगे आ गया और पानी ने अपना मार्ग बदल लिया फिर गुरद्वारे का गेट खोल दिया गया।

अगली घोषणा फिर हुई कि झरने का पानी का बहाव कम हो गया है सारी संगत वापस गोबिन्द घाट चली जाय और हेमकुंड साहिब की यात्रा पर कोई न जाय क्योंकि ऊपर लकड़ी का पुल टूट चुका है। पैदल यात्रा वाले और घोड़े की यात्रा करने वाले यात्री गोबिन्द घाट के लिए चल दिये लेकिन हम पति और पत्नी ने हैलीकाप्टर से जाना था इसलिए हम एक घंटे बाद निकले और 600 मीटर की दूरी पार कर के हेलीपैड तक पहुँच गए। वहाँ जा के पता चला कि बरसात और मौसम खराब के कारण हवाई यात्रा बंद कर दी गई है। अब हम ने सोचा कि तीन किलोमीटर लकड़ी के पुल तक की दूरी जो तिरछी उतराई है पैदल और बाकी की उतराई को घोड़े से पार कर लेंगे। अभी हम दो किलोमीटर झरने तक ही पहुंचे थे वहाँ हमने देखा कि बहुत लंबी लाइन लगी हुई है और झरने के पानी का बहाव बहुत तेज हो गया और चार पाँच जवान लड़के संगत को पकड़ पकड़ कर पार करवा रहे है। अभी हमारी बारी आई नहीं थी कि संगत वापस आनी शुरू हो गई और शोर मच गया कि तीन किलोमीटर दूरी पर जो लकड़ी का पुल था वह टूट गया है। सभी लोग वापिस गोबिन्द धाम आने लगे। घोड़े वालों ने भी मौके का फायदा उठाया और मनमर्जी के दाम ले कर लाचार लोग जो चल नहीं सकतें थे उन को गोबिन्द धाम गुरद्वारे तक छोड़ा।

अब हम अपने साथी लोगों से यहाँ अलग हो गये। वे सारे पुल पार कर गए और हम वापस गोबिन्द धाम अपने चौथी मंजिल के कमरा नंबर 9 में पहुँच गये। बरसात के कारण सारे कपड़े गीले हो चुके थे। सर्दी बहुत थी। चार हजार यात्री गोबिन्द धाम गुरद्वारे में फंस गये। पानी की पाइप लाइन टूट चुकी थी। बरसात शुक्रवार से हो रही थी और रुकने का नाम नहीं ले रही थी। स्थानीय दुकानदारों ने बिसलेरी की बोतल के दाम 160/-रूपये और खाने के दाम आसमान पर पहुंचा दिए थे। मंगलवार 18 जून तक बरसात पड़ती रही और गुरद्वारे के प्रबंधकों ने बड़े बड़े पतीलों मे बरसात का पानी इकटठा कर के चार हजार लोगों का लंगर, चाय, और पीने के पानी की व्यवस्था कर के एक मिसाल कायम कर दी। यहाँ पर किसी भी यात्री को किसी भी प्रकार की परेशानी का सामना नहीं करना पड़ा।

बुधवार 19 जून को सूर्य देवता ने खुले दर्शन दिये। मौसम साफ हुआ और कुछ जवान लड़कों ने हेमकुंड साहिब जाने वाले रास्ते के टूटे हुये लकड़ी के पुल को अस्थाई रूप से जोड़ दिया और जो लोग पैदल यात्रा कर सकते थे वे तपस्थान श्री हेमकुंड साहिब दर्शनों के लिए बिना किसी घोषणा के चले गये। वहाँ उनसे कहा गया की जल्दी दर्शन कर के वापस गोबिन्द धाम चले जाओ जब तक कोई नई घोषणा नहीं होती तब तक कोई यहाँ न आए। 20 जून को एक दिन के लिए तपस्थान दरबार पैदल यात्रियों के लिए दर्शन के लिए खोल दिया गया उसके बाद शुक्रवार 21 जून को अरदास कर के श्री हेमकुंड साहिब के कपाट बंद कर दिये गए।

बुधवार 19 जून को पंजाब सरकार व दिल्ली सिख गुरुद्वारा प्रबन्धक कमेटी और हेमकुंड साहिब ट्रस्ट ने इन फंसे हुए यात्रियों को निकलाने का बीड़ा उठाया। सेना को मदद के लिए लगाया गया। हैलीकाप्टर गोबिन्द धाम से जोशीमठ तक पाँच पाँच यात्रियों को छोड़ने लगा। हमारा नंबर तिथि 21 जून को आया। जोशीमठ गुरद्वारे में दो घंटे के करीब रुकने के बाद टाटा सूमो ने हमे जोशी मठ से श्रीनगर गुरुद्वारे में रात्रि विश्राम के बाद अगले दिन 22 जून शनिवार को सुबह दस बजे ऋषिकेश गुरद्वारे छोड़ दिया। वहाँ हमने माथा टेका, लंगर छका और परशाद, सिरोपे लिए फिर दिल्ली सिख गुरद्वारा प्रबन्धक कमेटी द्वारा भेजी गई वॉल्वो बस द्वारा 22 जून की शाम को गुरद्वारा रकाबगंज साहिब पहुँच गये। वहाँ से मेरा पुत्र कार द्वारा घर ले आया।

फंसे हुये लोगों को बिना किसी भेद भाव से जोशीमठ से ऋषिकेश और ऋषिकेश से अन्य राज्य के लिया फ्री ए.सी. बस लगा कर पंजाब सरकार और दिल्ली सिख गुरद्वारा प्रबन्धक कमेटी और शिरोमणि गुरूद्वारा प्रबन्धक कमेटी ने एक सराहनीय कार्य करके एक मिसाल कायम कर दी। उत्तराखंड सरकार ने बाढ़ में फंसे यात्रियों की मदद के लिए कुछ नहीं किया। राजनैतिक पार्टियों ने एक दूसरी पार्टियों पर असफलता का आरोप लगा कर खूब राजनैतिक रोटियाँ सेकीं। इसके विपरीत सेना ने अपनी जान पर खेलकर श्रद्धालुओं को बचाकर उपलब्धिपूर्ण कार्य किया। स्थानीय लोगों ने, साधुओं ने भगवे

भेष मे मंदिरो ओर गुरद्वारे की गोलक, गुरद्वारा गोबिन्द घाट के गठरी घर को खूब लूटा और यहाँ तक कि मरी हुई औरतों के जेवर उतार के मानव जाति को शर्मसार कर दिया।

अब हमारे दस साथी यात्री जो हमसे गोबिन्द धाम से 16 जून को हम से अलग हुये थे वे दो किलोमीटर झरने तक पहुंचे ही थे कि उन्हें भी झरने के पानी के बहाव का सामना करना पड़ा। इन लोगों को जवान लड़को नें पकड़-पकड़ कर पार करवाया। गोबिन्द घाट जा रही सारी संगत ने एक कुत्ते को झरने के पास बैठा देखा। सुरिन्दर ने बताया कि कुते का ऐसा रंग हम ने कभी नहीं देखा और उसकी देखनी में जैसे कोई रहस्य छुपा हुआ था। तीन किलोमीटर पुल तक पहुंचे ही थे कि इनके सामने लकड़ी का पुल आधा टूट गया। सुरिन्दर सहित चार महिलाये पुल पार कर गई और छह पुरुष पीछे रह गये। सुरिन्दर ने ज़ोर ज़ोर से रोना शुरू कर दिया क्योंकि अपने साथ आए नौ लोगों की सुरक्षा की जिम्मेरदारी जो उठाई हुई थी। इनके साथ पीछे रह गये पाँच लोग और कुछ और लोगों के पुल पार करने के बाद लकड़ी का पुल पूरा टूट गया उसमे दो खच्चर और एक बच्चा बह गया और उसकी माँ को बचा लिया गया। अभी ये लोग और बाकी की संगत ने दो किलोमीटर की दूरी पार की थी कि इन्होंने और बाकी संगत ने फिर वही अजनबी कुत्ते को बैठा देखा। यह कुत्ता वहाँ कैसे पंहुचा यह एक रहस्य था। किसी ने उसे आता नहीं देखा। इसकी देखनी से ऐसा लगता है जैसा कि आपदा जल प्रलय मे कौन कौन काल के लपेटे मे आने वाला है इसकी पहचान कर रहा हो।

पुल टूटने के बाद, बरसात होने के कारण इन लोगों को जंगल के रास्ते गोबिन्द घाट पहुंचना पड़ा। ये लोग 16 जून को रविवार दोपहर दो बजे गोबिन्द घाट पहुंचे और हमारा इंतजार करने लगे। भारी बरसात के कारण मौसम बहुत ज्यादा खराब हो गया था। इनके साथ आए हनी और सन्नी नामक बच्चे गोबिन्द घाट हेलिपैड जा कर हैलिकॉप्टर का पता करने चले गये। वहाँ से उन्हे पता चला कि मौसम खराब के कारण हवाई यात्रा बंद कर दी गई हैं। इन्हें रात्रि विश्राम करने के लिए गठरी घर की चौथी मंजिल में कमरा मिल गया। रात्रि में मूसलाधार बरसात के कारण गोबिन्द घाट का लकड़ी का पुल भी टूट गया। बिजली का ट्रांसफार्मर भी टूट गया। बिल्डिंग हिलनी शुरू हो गई। गुरद्वारे से खतरे का अलार्म बजना शुरू हो गया। संगत बहुत ज्यादा थी। सभी लोग गठरी घर के सामने लंगर हॉल और जहां गुरु ग्रंथ साहिब का प्रकाश है वहाँ इक्ट्ठे हो गए। 17 जून सोमवार को करीब तीन बजे गुरद्वारे से घोषणा की गई कि पार्किंग मे जो वाहन खड़े हैं उनके ड्राईवर यहाँ से जल्दी बाहर निकल कर सुरक्षित स्थान में चले जाओ। अब पानी लंगर हाल में भी आना शुरू हो गया। गुरद्वारे का अलार्म बार बार बज कर यात्रियों को खतरे की सूचना दे रहा था और घोषणा कर दी गई कि अपना अपना बचाव खुद करो और यहाँ से सभी यात्री ऊपर सुरक्षित स्थान में चले जाओ।

अलकनन्दा नदी जो मानव जाति के कुकृत्यों से अत्यंत दुखी हो चुकी थी, क्योंकि कलियुग के लोगों ने आ कर इस स्थान को पिकनिक स्थान बना दिया था। यात्रियों ने नशा करके, शराब व नशीले कैपसूल का सेवन करके तपस्थान की यात्रा करनी शुरू कर दी। गुरुमार्ग और तपस्थान श्री हेमकुंड साहिब के पवित्र तालाब के जल को दूषित कर दिया। स्थानीय लोगों ने घोड़ों को नशीले कैप्सूल खिलाने और खुद भी खाने शुरू कर दिये। प्रकृति के नियम तोड़कर पहाड़ो के सीने में सड़कें बना कर पहाड़ों को कमजोर बना दिया। अलकनन्दा के जड़ में बहुमंजिले भवन बना दिया। इस स्वार्थी मानव ने जंगल उजाड़ दिये, पक्षियों का बेसेरा छीन लिया। धन के लालच में पहाड़ों में बहुमंजिल इमारतें, होटल बना कर प्रकृति को नाराज़ कर दिया। अलकनन्दा रो रो के बेहाल और दुखी हो कर शिकायतों का बंडल सिर पर उठा कर बहुत गुस्से में गोबिन्द घाट गुरद्वारे मे भागती हुई अपनी फरियाद ले कर पहुंची। वह भागती हई रास्ते में लोगों की जान माल की परवाह न करती हुई सब को अपने में समेटती हुई गुरु चरणों पर सीस झुका कर, अपना दुखड़ा रो कर वापस चली आयी।

हमारे साथी लोग ऊपर सुरक्षित स्थान पर चले गए। उन्होंने अपनी आंखों के सामने एक हैलिकॉपटर, पार्किंग की गाड़ियाँ तथा सोये हुये चालकों को पानी मे बहते देखा, और गठरी घर की बिल्डिंग, आस पास की सारी दुकानें, होटलों

को ढेरी होते देखा। इनकी टैम्पो ट्रेवलर गाड़ी एक किलोमीटर की दूरी पर खड़ी थी और पैदल वहाँ से निकल कर और टैम्पो गाड़ी में बैठ गये। रोशनी होते ही 17 जून को टैम्पो चल पड़ा और हेलांग गाँव तक पहुंचा ही था कि वहाँ इन्हें दो किलोमीटर जाम का सामना पहाड़ टूटने के कारण करना पड़ा। इन्हें वहीं रात गुज़ारनी पड़ी। कुछ मोटरसाइकल पर सवार नवयुवक यात्रियों को पुलिस ने आगे जाने से मना किया पर वे नहीं माने और आगे बढ़ते ही खाई मे गिर गए और सात युवकों की मृत्यु हो गई और तीन ज़ख्मी हो गऐ। उस समय नदियां उफान पर थीं, गाँव के गाँव तबाह हो गए, ये लोग 18 जून मंगलवार की दोपहर को वहाँ से निकले परेशानी झेलते हुए गोचर नामक स्थान पर पहुंचे और इन्हें यहीं रात काटनी पड़ी। खाने को रोटी व पीने को पानी नहीं मिला। जो घर से बिस्कुट लाए थे उसे खा कर ही रात बिताई। इनके पास कपड़े बदलने के लिय नहीं थे। मैले कपड़े पहने टैम्पो में रात काटने के लिए मजबूर थे। 19 जून को नगरासु गुरद्वारे दो बजे दोपहर पहुंचे वहाँ लंगर छक्ने के बाद चल पड़े और 20 जून वीरवार को अपने घर विश्वास पार्क (उत्तम नगर) पहुंचे।

इन्होंने घर पहुंच कर हमारे कपड़ों का बैग हमारे घर पहुंचा दिया जिसे देख के मेरी बेटी रिंपी बहुत रोई कि हमारे मम्मी पापा नही आये परंतु उनका बैग आ गया। वह सोच रही थी पता नहीं मेरे माता पिता किस हाल में होगें।

सुरिन्दर और उनके साथी श्रीनगर और ऋषिकेश गुरद्वारे के दर्शन करना चाहते थे पर नहीं कर पाये। बिना हेमकुंड साहिब का परसाद लिए वापिस घर आ गए। हम दोनों पति पत्नी बिना किसी परेशानी से श्रीनगर और ऋषिकेश गुरद्वारे के दर्शन कर के हेमकुंड साहिब का परसाद, सिरोपाये, जपुजी साहिब और सुखमनी साहिब के गुटके ले कर 22 जून, शनिवार को शाम को घर पहुंच गये। जो जल प्रलय ने गोबिन्द घाट मे कहर ढाया वही कहर बद्रीनाथ, केदारघाट, रामबाड़ा मे भी हुआ। हम दोनों ने इस घटना के बारे में केवल सुना परंतु प्रत्यक्ष नहीं देखा। यही कामना करते हैं कि परमात्मा भविष्य में ऐसी घटना न दिखाए।

29 जून के दिन शनिवार को सुरिन्दर कौर ने विश्वास पार्क गुरुद्वारे में सुखमनी साहिब का पाठ करवाया और गुरु जी से प्रार्थना कि जो यात्री अभी भी जल प्रलय के कारण फंसे हुये हैं उन्हें सही सलामत निकाल कर उनके परिवार से मिला दो। जिनकी मृत्यु हो गई है उनकी आत्मा को शांति दो, उनके घर वालों को सदमा सहने की शक्ति दो और जो सही सलामत घर आ गए हैं इसके लिए गुरु जी का शुक्राना किया।

पचास रुपए का पास बनाम यह माटी सभी की कहानी कहेगी

विजय सिंह

शहर से बाहर के यात्रा संस्मरण तो बहुत पढ़े-सुने हैं मैंने। लेकिन शहर-ए-दिल्ली कुछ इस कदर फैल गया है कि अगर दिल्ली के एक कोने से दूसरे कोने में जाना हो तो अपने आप में गोइंग टू अनदर सिटी के इक्कल हो जाता है।

बचपन से सुनता आया कि मैं दक्षिण दिल्ली में रहता हूँ। थोड़ी सी समझदारी फैली तो उसमें यह समाया कि मैं नई दिल्ली का वोटर हूँ। फिर पता चला कि वो नई दिल्ली नहीं रही, बैठे-बिठाए ईस्ट दिल्ली में तब्दील हो गई है। ईस्ट दिल्ली का साइकोलाजिकल मतलब जमना-पार लगता रहा हालांकि उस पार के लोग हमें जमना-पार वाला कहते रहें। लेकिन साउथ दिल्ली का बाशिंदा होने की मेरी ईगो पर ऐसी चोट लगी कि बस।

अचानक से ईस्ट दिल्ली के ब्रैकेट में आ जाने पर मुझे ऐसा धक्का लगा कि जैसे मुझसे कॉमर्स एंड इंडस्ट्री मिनिस्ट्री लेकर मुझे संस्कृति मंत्री बना दिया गया है। ख़ैर यह तो हुई पिछली बातें। अब तो ईस्ट दिल्ली भी बल्ले बल्ले है जी, यह बात दीगर है संस्कृति मंत्रालय की हालत वाणिज्य के मुक़ाबले पहले से भी ज़्यादा पतली हो गई है। शायद इसीलिए देश के ज़्यादातर संस्कृति-कर्मी कल्चर को कॉमर्स बनाने पर तुले हैं कि कहीं तो बराबरी पर आएँ। पर यह विषय किसी और दिन के लिए।

वैसे शहर के अंदर की यात्रा पर मेरा यह वृत्तांत वेस्ट दिल्ली के बारे में हैं (मैं दुआ करता हूँ कि मेरा यह लेख अगर छप गया तो कम-से-कम तब तक वेस्ट दिल्ली वेस्ट में ही रहे)।

तो हुआ यूं कुछ कि रविवार पहले दिन में एक ज़रूरी काम से रोहिणी जाकर वापस आना था और मैंने डीटीसी का 50 रूपए का पास सुबह ही बनवा लिया था। सच बताऊँ तो दोपहर तक सेंट्रल और साउथ दिल्ली में ही कुछ जगहों पर आ-जाकर पचास से ज्यादा रूपए का सफ़र तय कर भी लिया था और रोहिणी की यात्रा शुरू करने से पहले भोजन इत्यादि के लिए घर वापिस पहुँच भी गया था। एक मन था कि अब कहीं न जाऊँ लेकिन जाना ज़रूरी था सो भोजनोपरांत गुड़गुड़ाते पेट और अलसाए डगमगाते क़दमों और अनमने मन से घर से निकल गया।

मेट्रो भी था एक ऑप्शन रोहिणी जाने के लिए। जल्दी जाकर जल्दी वापस भी आ जाता। पर जेब में पड़े उस पचास रुपए के पास को पुरानी मिडल क्लास मेंटेलिटी के मुताबिक यूज़ करने, यूज़ क्या - बुरी तरह से उसका दोहन करने के चक्कर में मेट्रो नहीं ली जबकि जल्दी घर वापसी के बाद बच्चों को भी समय देना था। पर बनवा जो रखा था पास पचास रूपए का।

कॉलेज के दिन भी याद आए जब आल रूट पास में पूरी दिल्ली नाप लेते थे। अच्छा भी लगा कि दिल्ली के उस हिस्से में कम जाना या लगभग न ही जाना होता है. अब तो खैर मेट्रो की वजह से दक्षिण दिल्ली वालों को रोहिणी और द्वारका दूर नहीं लगते पर एक ज़माने में तो यह जगहें परदेस लगती थीं। ज्यादा पुरानी बात नहीं है बस सन दो हज़ार एक या दो की बात है, एक बार जब दिल्ली विकास प्राधिकरण ने द्वारका में अपने उद्यानों का प्रबंधन दिखाने के लिए पत्रकारों का एक दौरा आयोजित किया था। डिप्लोमा कोर्स करने के बाद भी किसी अख़बार में जगह नहीं मिल पा रही थी तो 'नेशनल हेराल्ड' में बतौर ट्रेनी प्रश्रय मिला था। अब तो नेशनल हेराल्ड बंद हो गया है। उन दिनों मुझे उस दौरे की कवरेज के लिए भेजा गया था। ऐसा लगा दिल्ली कहीं दूर पीछे छूट गई है। और द्वारका में जब एक स्थानीय डीटीसी बस नज़र आई तो कुछ पत्रकार भाइयों ने हैरानी मिश्रित चुटकी लेते हुए कहा था कि 'अरे! वो देखो! डीटीसी की बस!'

खैर, इस बार शाम को नियान रौशनी में चमकती दिल्ली के उस हिस्से की रौनक ही निराली थी। मुझे सच में लगा कि मैं किसी और ही शहर में आ गया होऊँ।

बसें बदल-बदल कर गया और बसें ही बदल-बदल कर आया। जाने के सफर में एक जगह ग्रामीण सेवा की टेम्पुलिया में पांच रूपए देने पड़े, बहुत खटका। जब जेब में पचास रूपए का पास हो तो ट्रेवल पर पैसे खर्चने वाला बेवक़ूफ़ ही कहलाएगा न मिडल किलास के हिसाब से।

एक और बस बदलते हुए रास्ते में अवंतिका नामक उपनगर में थक-हार के एक जगह जलजीरा भी पिया। उस आदमी के पास उस जल को पीने के वास्ते सिर्फ महिलाएं ही खड़ी थीं। मैंने डरते-डरते उस भाई से पूछ लिया कि वो मुझे भी जलजीरा पिलाएगा या मैं जीरे-सा मुंह ले के कहीं और जल मरूं. पर उसने मुस्कुरा कर 10 रुपल्ली झड़वा लिए और पिला दिया मुझे तैरती बूंदी वाला (या शायद मुनक्के वाला) जलजीरा।

इन चिर-प्यासे नयनों के सामने
सदैव सद्यस्नात-सी फ्रेश
षोडशी रहने का बिना एक्सपायरी डेट वाला लाइसेंस धारिणी
डिज़ाईनर चप्पलें पहने आधा दर्जन चपल बालाएं
उम्रें जिनकी रहीं होंगी - कौन जीता है तेरी जुल्फ़ के सर होने तक वाली

उस पर जलजीरा
उसमें बूंदी
धनिया
और मैं...
अजी थकान गई भाड़ में... !

वापसी के सफर में बसों की खिड़कियों से झाँकते हुए मुझे कमाल बात यह लगी कि रास्ते में जितने भी मॉल और दुकाने आईं, उनमें से कोई भी खाली नहीं थी। खरीदने वालों की भरमार देखकर मुझे तो एकबारगी ऐसा लगा कि लोग पैनिक में हैं जल्दी-जल्दी खरीद लो भईया पता नहीं कल मिले न मिले। अपनी तरफ वाली दिल्ली में मैंने ऐसा कभी नहीं देखा था (या मेरी नज़र ही नहीं पड़ी थी उस तरफ)। पत्नियों के ज़रखरीद गुलाम पति तो बस खरीद करने का ज़रिया यानी द्रव्य उपलब्ध कराने भर को यूजफुल लग रहे थे। ब्वायफ्रेंडों की हालत भी कुछ बेहतर नहीं रही होगी. बेचारे... चलती-फिरती एटीएम मशीन...बस। मुझे लगा अच्छा हुआ मैं न हुआ, बस हुआ-हुआ करता हुआ करने लगा हूँ ढेंचू-ढेंचू और अब चर्र-मर्र, जाऊंगा यूं ही मर।

हर रेस्तरां में खाने वाले लोग (हे भगवान मेरी नज़र ने उन्हें भी नहीं बख्शा!!) तो ऐसे लग रहे थे मानो सदियों से भूख से पीड़ित लोगों में ज्यादा खाना तेज़ खाने की रेस लगी हो। जिन्हें ज़्यादा-से-ज़्यादा रेस्तरां ढाबों में खाने का शौक है उनके लिए मेरी यह कविता—

खा खा खा
खामखा खा
खाने के लिए आ
जा खा कर जा
खोल बैंक में खाता
खुल के खा
खाता जा
आता-जाता खा
बिल चुका
आ कल फिर आ
घर पर कुछ मत बना
कमा
कायम रहने के लिए चूरन खा
पेट खाली करके आ
और फिर खा
जब भी वो मिला
पिला
था खाने पे पड़ा पिला
जो भी मिला
गया खा
खिलखिला
खिला
खा खा खा
खाक में मिलने से पहले खा

रेस्तरां से निकाले गए नाकाम चूहे फ्लाई ओवरों पर चढ़ती-उतरती बस में हिचकोले खाने के कारण अपनी जगह से सरके मेरे आधे ग्लोबल पेट में शेयर बाज़ार में मंदी के कारण किसी मल्टीनेशनल के हाय-दैया करते हुए सी ई ओ की तरह बेचैनी में कुलबुला रहे थे। मैं घर जाकर दाल-रोटी (क्या करूं मेरी फेवरेट डिश है यही) खाने के लिए मरा जा रहा था।

बस जब रिंग रोड से होती हुई धौला कुआँ में दाखिल हुई तो लगा जैसे घर आ गया। हालाँकि घर वहां से भी 15-20 किलोमीटर दूर होगा पर अब सड़कें और इमारतें जानी-पहचानी लगने लगीं। यह भी सोचा जो लोग रोजाना अप-डाउन करते हैं वो क्या सोचते होंगे इस बारे में। और जो लोग दिल्ली के उस हिस्से में रहते हैं वो जब कभी-कभी इस तरफ आते होंगे तो कैसा लगता होगा उन्हें। शायद उनका इस तरफ आना ज्यादा होता होगा बनिस्पत दिल्ली के इस तरफ वाले लोगों के वहां जाना।

हालांकि जलजीरा वाले, गोलगप्पे, खोमचे हमारी तरफ भी हैं और खाने वालों में ज़्यादातर तादाद महिलाओं की ही इस तरफ भी होती है पर न जाने क्यों मुझे वो हिचक अपनी तरफ नहीं हुई जितनी कि अवंतिका में जाकर जलजीरा पीने में हुई। दुकाने हमारे यहाँ भी काफी हैं पर शायद यहाँ ज़्यादा ग्राहक भी ज़्यादा नहीं लगते या फिर नए अमीरों की गिनती वेस्ट दिल्ली में ज़्यादा है। रेस्टोरेंट्स में खाने-पीने वालों की भरमार तो इधर भी है पर उस तरफ ऐसा लगा जैसे लोग बाहर खाने को एक उत्सव की तरह सेलिब्रेट करते हों और यह उत्सव उनका रूटीन हो। नियान रौशनियाँ हमारी तरफ भी कम नहीं पर पश्चिमी दिल्ली में तो बाज़ार नयेपन की रौशनी से नहाए हुए लगे।

कमाल है उस तरफ और इस तरफ की दिल्ली का कंट्रास्ट और कैरेक्टर शहर की पूरी आब-ओ-हवा और चाल-ढाल मुझे बिलकुल अलग लगीं। यानि जगहों का रूप-रंग, तेवर और मिज़ाज हर कुछ किलोमीटर के बाद बदल जाता है? या यह सिर्फ मेरे देखने का ढंग है?

कुल मिलाकर अच्छा लगा।

कहानी

व्यथा के स्वर

प्रकाश टाटा आनंद

''मोरे कान्हा जो आएं पलट के, अबके होरी मैं खेलूँगी डट के...'' वनराज भाटिया की सुप्रसिद्ध बन्दिश पूरे विद्यालय में गूँज रही थी। प्रिया गा रही थी और गोपाल तबले पर था। बीच-बीच में गुरू जी की स्वर लहरियाँ भी शामिल हो जातीं। प्रिया की इतनी मनमोहक आवाज़ है कि जब वो गाती तो विद्यालय के बाकी विद्यार्थी किसी न किसी बहाने संगीत की क्लास के बाहर इकट्ठा हो जाते थे।

अक्सर गुरूजी जब भी प्रिया की क्लास लेते तो गोपाल को ही संगत के लिये बुलाते थे। जितना प्रिया के गले में मिठास भरा था उतना ही गोपाल की उंगलियों में भी जादू था। उसकी पतली और लम्बी उंगलियाँ जब तबले पर पड़तीं तो प्रिया बस देखती ही रह जाती। गोपाल भी उसके मधुर स्वरों में खो जाता और कभी-कभी तो लय से भटक जाता था, तब गुरूजी उसे प्यार से डाँटते क्या गोपाल इतना अच्छा बजाते-बजाते कहाँ खो जाते हो ? और गोपाल सकपका जाता था। बस यही उसका भोलापन प्रिया के मन में जगह बनाता चला गया।

एक दिन गोपाल क्लास में अकेला ही था। गुरूजी उस दिन प्रिंसिपल साहिबा के कमरे में गए थे। तभी प्रिया आ गई। गोपाल ने उसके हाल पूछे और तबला सुर करने लगा। प्रिया ने मौका देखा और बिना झिझके बिन्दास अपने मन की बात कह डाली। पहले तो गोपाल चुप रहा फिर बोला ''प्रिया मुझे ग़लत मत समझना, मेरे मन में भी तुम्हारे लिए प्यार, इज्जत है और मुझे भी तुम्हारे साथ समय बिताना, संगत करना अच्छा लगता है। पर.....''

''पर क्या गोपाल ?'' प्रिया की आँखें प्रश्नात्मक भाव लिए फैल गई। ''अब मैं तुम्हें क्या बताऊँ कि मेरे तबले का शौक़ मुझे यहाँ तक लाया है और गुरूजी से पूछो मेरे पिता जी संगीत के सख्त ख़िलाफ़ हैं, पर गुरूजी की ज़िद के आगे उनकी नहीं चली सो मैं यहाँ आता हूँ। पर पिताजी की एक शर्त है कि मैं बाहर सीख रहा हूँ सो तो ठीक है पर घर मैं संगीत कभी न ले कर जाऊँ। सो मैं शौक़ के हाथों मज़बूर हूँ और यहाँ चला आता हूँ, पर अपने घर खाली हाथ ही जाता हूँ। ऐसे में तुम्हारे जैसी गायिका के बारे में चाहते हुए भी कोई ऐसी बात नहीं सोच सकता जिससे तुम्हारा भविष्य खराब हो। इस बारे में गुरूजी भी कई बार बात कर चुके हैं। मैंने ही उन्हें मना कर दिया था बात को आगे बढ़ाने के लिए। अब तुम जो समझो ...'' गोपाल जो कभी ज्यादा बात नहीं करता था वो बोलता ही चला गया और प्रिया उसे एकटक देखे जा रही थी।

प्रिया को लगा कसक तो गोपाल के दिल में भी गहरे बैठी है। ये जान कर तसल्ली हुई कि ये सब एक तरफा नहीं है। उसने अधिकार से कहा ''पर गोपाल एक बार तुम कदम तो बढ़ाओ, रास्ते अपने आप निकल आएंगे''... तभी प्रिया ने देखा गुरूजी दरवाजे पर खड़े सब सुन रहे हैं। प्रिया से नज़रें मिलने पर गुरुजी अन्दर आ गए और बोले ''कैसे रास्ते निकलेंगे बेटी ? मैं इसके पिता को अच्छी तरह जानता हूँ। जिद्दी जमींदार है... है नहीं था। रियासत चली गई, धन दौलत चली गई पर शान आज भी वही रखता है और ऊपर से अंग्रेजों द्वारा दिया गया राय बहादुर का तमगा'' कुछ क्षण रुक कर ''दादा परदादा पहले नौकरों चाकरों वाले थे, इनके पिता तक आते-आते सब कुछ खत्म हो गया और अब शहर की सबसे बडी मिल में मैनेजर के ओहदे पर हैं।'' एक लम्बी साँस भर कर गुरूजी बोले ''वो मेरा जिगरी यार है सो मेरे खिलाफ नहीं जा सका पर मुझे भी आज तक समझ नहीं आया कि वो संगीत से इतनी नफरत क्यों करता है ?''

उस दिन प्रिया चुप हो गई और गोपाल की कहानी अधूरी छोड़ कर पहले तो बाथरूम जाने के बहाने बाहर आ

गई और फिर गुरूजी से इजाज़त ले कर घर चली गई। ''अरे प्रिया सुनो तो एक मिनट रुको'' गोपाल पीछे पीछे लपका। ''क्या सुनूँ और क्या कहूँ गोपाल'' बस मुझे जाने दो जिस दिन अपनी शानो-शौक़त की दीवार से बाहर निकलने की हिम्मत रखो तो बता देना। फिलहाल तो मैं इंतजार करूँगी पर आगे वक्त क्या कहेगा कुछ पता नहीं।'' कह कर प्रिया चली गई। और फिर वो कभी नहीं आई। गुरुजी ने कई बार संदेशा भी भेजा पर प्रिया नहीं आई।

एक दिन गुरूजी प्रिया की गायकी के बारे में नए विद्यार्थियों को बता रहे थे, तो गोपाल को एहसास हुआ कि उसकी वजह से एक होनहार गायिका का भविष्य खराब हो रहा है सो गोपाल प्रिया के घर चला गया। प्रिया की माँ आँगन में कपड़ों को धूप लगा रही थी। गोपाल ने गेट से ही प्रश्न किया ''क्या प्रिया जी यहीं रहती हैं?'' ''हाँ बेटा !! आप कौन?'' माँ ने प्रश्न के उत्तर में प्रश्न किया। ''जी मैं.. मैं गोपाल, प्रिया के साथ संगीत सीखता हूँ। कई दिनों से प्रिया आ नहीं रही थी और गुरूजी भी याद कर रहे थे तो सोचा कहीं कुछ तबीयत वगैरह... सो पूछने चला आया।'' माँ गोपाल को अन्दर ले गई। ड्राईंग रूम के नाम पर एक छोटा सा कमरा था जिसमें एक ओर चारपाई पर बड़े करीने से दरी और चादर बिछी थी साथ ही दो मूड़े कुशन के साथ रखे थे। बीच में लकडी की एक पुरानी सी मेज थी जिस पर क्रोशिए का कवर था। घर साफ सुथरा था। किचन से एक छोटा सा आला ड्राईंग रूम में खुला था। शायद खाने की वस्तुएँ यहीं से पकड़ा दी जाती थी। इस प्रकार कुछ ही क्षण में गोपाल ने पूरे घर का जायजा ले लिया था। प्रिया की माँ कुछ ही देर में चाय और कुछ बिस्किट ले आई और मूड़ा खींच कर पास ही बैठ गई। ''अच्छा तो तुम ही गोपाल हो मैं भी कई दिनों से तुमसे मिलना चाह रही थी। एक बार प्रिया ने तुम्हारे बारे में जिकर किया था। तब वह बहुत खुश थी। पर अभी कुछ दिनों से न जाने क्या हो गया है, संगीत सीखने भी नहीं जाती। बस दिन भर अखबार में नौकरी ढूँढ़ती रहती है..., मैं तुम कह कर बुला रही हूँ बेटा बुरा तो नही लगा'' माँ ने अपनी बात को विराम दिया। ''अरे नहीं आंटी जी कैसी बातें कर रही हो, एक ओर बेटा कहती हो माँ के लिये तो हम बच्चे हैं और तुम नहीं आप मुझे तू कह कर बुलाइए, अच्छा लगेगा।'' आंटी ने चाय की तरफ इशारा किया और फिर गोपाल की ओर देख कर बोली ''बेटा बिस्किट भी खाओ न। और हाँ तुम ही बताओ प्रिया को क्या हो गया है?'' अभी गोपाल कुछ बोलता कि प्रिया आ गई? अरे गोपाल जी आप? ''आप कब आए? और.. और गुरूजी कैसे हैं?'' ''सब ठीक हैं आपको याद करते हैं। आप क्लास में क्यों नहीं आती? मेरे कारण अपना रियाज़ तो न छोड़ो।'' प्रिया ने कनखियों से पहले तो माँ को देखा फिर बोली ''नहीं-नहीं ऐसी कोई बात नहीं हैं बस यूँ ही मन नहीं करता। और आप बताइए आपका तबला कैसा चल रहा है।'' प्रिया ने बात बदलते हुए कहा। और बस दोनों में यूँ ही बातें होती रही और फिर गोपाल चला गया।

प्रिया भी अपने काम में लग गई पर प्रिया की माँ का मन कुछ विचलित सा हो रहा था हो न हो कोई तो बात हुई है प्रिया और गोपाल में, माँ यूँ ही रात भर करवटें बदलती रही। प्रिया के पिताजी तो जब प्रिया दस बरस की थी तभी भगवान के पास चले गए थे। माँ ने बड़े लाड-प्यार से पाला था और वो प्रिया को इस तरह उदास देख कर बेचैन हो जाती थी। सुबह माँ सब्जी लेने का बहाना करके संगीत केन्द्र में गई, और गुरूजी से मिली तब गुरूजी ने सारी बात माँ को बता दी। अब माँ ने और गुरूजी ने मिल कर गोपाल के पिताजी को मनाने की ठानी और अगले हफ्ते गोपाल के घर जाना निश्चित किया। प्रिया की माँ को कुछ तसल्ली हुई और वो घर चली गई।

अब वो दिन भी आ गया जब प्रिया की माँ और गुरूजी गोपाल के घर गए। गोपाल घर पर नहीं था। सो राय बहादुर जी से बात करना और भी आसान हो गया। राय बहादुर जी ने बड़े ही प्रेम से दोनों की आव-भगत की। घर में बूढ़ा नौकर गणपत गोपाल के दादाजी के समय से था। सब छोड़ कर चले गए पर वो गोपाल के पिताजी के साथ ही रहा। सो गणपत चाँदी की विशेष केतली और कप प्लेटों में चाय व नाश्ते का सामान ले आया। गुरूजी ने पहले तो प्रिया की माँ से उनका परिचय कराया। फिर कुछ इधर-उधर की बातें करके मुख्य विषय पर आए। गोपाल और प्रिया की दोस्ती की बात बताई। यहाँ तक तो सब ठीक था पर जैसे ही गुरूजी ने प्रिया के सुरीलेपन की बात मुँह से निकाली कि वो तो

भड़क गए... और बोले ''देखो मास्टर (वो बचपन से ही गुरूजी को मास्टर कहते थे) मुझे ये नाचने-गाने वाली बहू नहीं चाहिए। हाँ मेरे कुछ उसूल हैं। मुझे कोई दहेज-वहेज नहीं चाहिए बस दो कपड़ों में सुन्दर, सुशील, आदर्शों वाली बहू हो तो घर गृहस्थी की गाड़ी सुखपूर्वक चल जाती है। पर इस नाच गाने ने तो आज की पीढ़ी को कहीं का नहीं छोड़ा। तू तो जानता है मास्टर कि गोपाल की माँ कैसी थी। आज भी सारी बिरादरी उसके गुनगान करती हैं।'' गुरूजी चुप हो गए और प्रिया की माँ अवाक देखती रह गई। कुछ देर तीनों चुपचाप चाय की चुस्कियाँ लेते रहे।

काफी समय निकल गया। फिर अचानक चुप्पी तोडते हुए प्रिया की माँ ने अचकचाते हुए कहा ''भाई साहब मेरी बेटी प्रिया में मैंने संस्कार कूट-कूट कर भरे हैं, वो आपको कभी किसी कारण से निराश नहीं करेगी। मैं तो ये रिश्ता इसलिए ले कर आई थी कि दोनों एक दूसरे को पसन्द करते हैं और मैं अपनी बेटी की खुशी के लिए कुछ भी कर सकती हूँ। अब आप ही सोचिए ये दोनों तो हम जहाँ कहेंगे वहीं शादी कर लेंगे और मेरी बेटी को मैं जैसा कहूँगी वो कभी न नहीं करेगी। पर क्या मन मार कर शादी करना, दो और जिन्दगियों को बर्बाद करना नहीं होगा? आगे आपकी मर्जी, आप लड़के वाले हैं। गुरूजी ने आपकी तारीफ की थी सो चली आई।'' उसी मिजाज में राय बहादुर साहब बोले, ''क्या मन मारना-वारना बस जवानी का जोश हैं जब गृहस्थी के बन्धन में बन्धेंगे तो सब कुछ भूल-भाल जाएंगे।''

अब गुरूजी की बारी थी वो अपने दोस्त को जानते थे बेहद जिद्दी और अड़ियल किस्म के थे सो प्यार और गुस्से के मिले-जुले स्वर में बोले ''देख यार, अब तुम्हारी और हमारी उम्र तो निकल गई और कितने दिन जिएंगे पर इन बच्चों के सामने तो सारी जिन्दगी पड़ी है क्यों ज़िद करता है यार। अच्छा चल एक बात रही कि प्रिया बेटी तेरे घर में गाना नहीं गाएगी पर वो मेरे यहाँ तो आ सकती है जैसे गोपाल आता है। दोनों ने कौन सा विश्व प्रसिद्ध संगीतकार बनना है जब दो चार बच्चे हो जाएंगे तो संगीत-वंगीत सब रह जाएगा तू चिंता क्यों करता है। अब देख गोपाल भी तो घर में तबला नहीं बजाता न। प्रिया बेटी को मैं जानता हूँ बहुत सुशील है... अब बस कोई सवाल नहीं। बस हाँ कर दे यार बच्चों की खुशी में ही तो हमारी खुशी है क्यों बहनजी?''

राय बहादुर साहब उठ कर अन्दर चले गए और काफी देर तक गोपाल की माँ की तस्वीर के सामने खड़े रहे फिर खखारते हुए आए और बोले ''अरे गणपत जरा लड्डू ले आना अच्छा चल रहने दे, अब तू धीरे-धीरे बाजार जाएगा, जा रसोई से मिश्री ले आ।'' गुरूजी ने खुशी से ताना मारा, ''क्या यार इतनी खुशी की बात मिश्री में टालेगा'' और उन्होंने अपने थैले से लड्डुओं का डिब्बा निकाला, ''मैं तो पहले ही साथ रख लाया था मुझे मालूम था कि तू आखिर मान ही जाएगा।'' प्रिया की माँ ने थोडा सा लड्डू लिया, वो खुश तो थी पर मन पर एक भारी बोझ था। फिर वो गुरूजी के साथ राय बहादुर जी से विदा ले कर चल पड़ी।

माँ के चेहरे पर दो तरह के भाव आ रहे थे एक तरफ तो वो प्रिया के लिए बेहद खुश व उत्साहित थी कि उसकी बेटी को उसका प्रियतम मिल जाएगा। घर भी अच्छा है। नाम है,इज्जत है और शान भी है पर दूसरी ओर एक गहरा ग़म उसे खाए जा रहा था वो था प्रिया का संगीत। प्रिया बचपन से ही संगीत की दीवानी थी उसके पिताजी भी एक जमाने में सितार का शौक़ रखते थे और प्रिया में ये जींस में था। अब प्रिया को कैसे ऐसे घर में भेज दे जहाँ उसकी जान से प्रिय वस्तु संगीत पर पहरे लगे हो। पर माँ ये बात प्रिया से छुपा गई।

प्रिया के चेहरे पर भी दो तरह के भाव आ रहे थे एक तरफ तो वो खुश थी कि उसके मन की मुराद पूरी होने जा रही है जिसे उसने चाहा वही मिला। ऐसा बहुत कम होता है कि चाहने से या यत्न से प्रिय वस्तु हर कोई पा ले। वह स्वयं को बेहद खुशनसीब समझ रही थी और उसके चेहरे से भी सब झलक रहा था पर दूसरी ओर माँ को छोड़ कर जाने का ग़म भी था। वो पल-पल सोच रही थी माँ को किसके सहारे छोड़ेगी। हिन्दू संस्कृति के अनुसार माँ बाप बेटी के घर का जल भी नहीं लेते और ऐसे में माँ क्या करेगी। भाई सोनू भी अभी छोटा है अभी तो उसकी पढाई के खर्चे ही बढ़ रहे हैं।

दोनों माँ बेटी यही सब सोचती रही और शादी का दिन भी आ गया। गोपाल ने प्रिया को आश्वस्त कर दिया था कि वो माँ की चिंता न करे जब तक सोनू अपने पैरों पर नहीं

खडा हो जाता उसकी पढाई कि जिम्मेदारी गोपाल सम्भालेगा। प्रिया गोपाल दोनों की खुशी का ठिकाना न था। माँ भी बेहद खुश थी। सिलाई कढ़ाई करके प्रिया के लिए कुछ ज़ेवर भी जोड़ लिये थे और सोनू वो तो अपने दोस्तों में बस धाक जमाने में मस्त था मेरी दीदी जमींदार साहब के घर जा रही हैं शहर की सबसे बड़ी हवेली में है उसकी ससुराल।

शादी खूब धूम-धाम से हुई। राय बहादुर साहब ने सजावट और आव-भगत में कोई कसर नहीं छोड़ी थी बारात हाथी पर आई थी। और प्रिया के मोहल्ले वाले दाँतो तले उँगली दबा कर देखते रह गए। सभी प्रिया के भाग्य को सराह रहे थे। गुरूजी भी बेहद खुश नजर आ रहे थे आखिर उनके प्रिय शिष्यों की शादी थी। और फिर वो घड़ी भी आ गई जब प्रिया माँ और भाई को छोड़ कर ससुराल विदा हो गई।

गोपाल की हवेली दूधिया रोशनी में नहा रही थी। चारों ओर मेहमानों की चहल पहल थी। पर एक ही बात प्रिया को खटक रही थी कि इतनी रौनक के बावजूद कहीं कोई गाजे बाजे, शहनाई, ताशे या गीतों का आयोजन कुछ न था। बिना संगीत के सारा माहौल बुझा बुझा सा था। नई नवेली दुल्हन थी कुछ बोलना या पूछना शिष्टता के खिलाफ होता सो चुप रही। उस दिन प्रिया को गोपाल से मिलने भी नही दिया गया।

सत्यनारायण की कथा के बाद सभी मेहमान चले जाते हैं। तभी बहू अपने कमरे में जाती है वर्ना जनाना कमरे में ही सभी महिलाओं के साथ रहती है। वहाँ रात भर हँसी-ठिठोली चलती रहती हैं और दुल्हन का दिल भी लगा रहता है। इसी बहाने रिश्तेदारों से परिचय भी हो जाता है। ऐसी ही उस घर की परम्परा थी, जिसे प्रिया ने बखूबी निभाया भी।

अब गोपाल और प्रिया विवाह बन्धन में बन्ध गए थे। विवाह को छ: महीने गुजर गए। गोपाल रोज की तरह केन्द्र में जाता उसकी तबले की प्रेक्टिस जारी थी। पर प्रिया अभी तक घर की चार दिवारी से बाहर नहीं निकल पाई। कभी कभी माँ से मिलने चली जाती थी या सोनू दीदी का हाल पूछने आ जाता था।

एक दिन रात को गोपाल और प्रिया खाना खा कर छत पर टहल रहे थे। तभी प्रिया ने गोपाल से पूछा ''गोपाल एक बात बताएं कि जब पिताजी को संगीत पसन्द ही नही है तो वो हमारी शादी को राजी कैसे हो गए'' गोपाल पहले तो चुप रहा फिर धीरे से बोला वो माँ और गुरूजी ने पिताजी की इसी शर्त पर हाँ की थी कि तुम कभी इस घर में नहीं गाओगी।'' प्रिया तो सन्न रह गई इतना बडा धोखा किया माँ और गुरूजी ने उसे तो लगा जैसे सारी दुनिया ही बदल गई है।

बस उस दिन से प्रिया का मन बुझा-बुझा सा रहने लगा वह घर के सारे काम करती थी। पिताजी की देखभाल भी अच्छे से करती। सबसे बातचीत भी ठीक से करती थी पर उसके अन्दर कुछ था जो टूट चुका था। गोपाल भी अपने काम में लग गया। वो अब कभी कभी ही गुरूजी के पास जाता था वो भी केवल मिलने के लिए। तबले का अभ्यास तो कब का छूट चुका था। गोपाल ने बहुत जिद करके एक कपड़ों की दुकान खोलने की मंजूरी ले ली थी वो भी गोपाल का मित्र उसे समेट कर विदेश जा रहा था सो बसी बसाई दुकान गोपाल ने ले ली और वो भगवान के आशीर्वाद से अच्छी चल भी निकली थी। बस यूँही दिन बीतते गए। अब वे दो से तीन हो गए थे। घर में किलकारियाँ गूँजने लगी। प्रिया की उदासी भी कुछ कम हो गई थी। पर बेचारी जब एकदम एकांत होता था तभी दबी दबी आवाज में अपनी रज्जो को लोरी सुनाती। वर्ना उसे भी मात्र थपकियों से ही सोने की आदत हो गई थी।

पाँच बरस बीत गए राय बहादुर साहब भी कुछ ढल गए थे सो उनके कड़कने की आवाज मद्धम हो गई थी। एक दिन राय बहादुर जब मिल से आए तो आते ही जोर से प्रिया को आवाज दी। प्रिया दौड़ी दौड़ी आई कई वर्षों बाद प्रिया ने पिताजी को इतना जोर से पुकारते हुए सुना था। ''जी पिताजी क्या हुआ ? सब ठीक तो है।'' ''हाँ-हाँ बहू सब ठीक है बस आज मेरे एक बचपन के मित्र का फोन आया था। पच्चीस बरस से हम नहीं मिले... वो विदेश चला गया और वहीं का हो कर रह गया। आज उसने फोन किया कि वो आ रहा है... और... अरे गणपत.....'' और फिर पिताजी गणपत को ढूँढने हाँफते हुए रसोई की तरफ चले गए।

आज पहली बार प्रिया ने पिताजी को ऐसे बोलते हुए देखा था। उसे समझ नहीं आ रहा था कि पिताजी बौखलाए हुए हैं, घबराए हुए है, उत्साहित हैं या अत्यधिक खुश हैं। वो असमंजस में थी जब उसे कुछ समझ नहीं आया तो उसने गोपाल को फोन किया और उसे सारी बात बताई।

''क्या पिताजी के बचपन के दोस्त आ रहे हैं!!! अरे बाप रे!'' और फिर गोपाल ने बिना कुछ बताए फोन रख दिया। प्रिया की हैरानी की कोई सीमा नहीं थी आखिर ये हो क्या रहा है? वो सोचते सोचते रोती हुई रज्जो को चुप कराने चली गई।

तभी प्रिया को बेडरूम के दरवाजे पर आहट सुनाई दी तो देखा गोपाल खड़ा है। प्रिया की हैरानी का ठौर ही नही मिल रहा था। जबसे गोपाल ने दुकान खोली थी तबसे आज तक गोपाल ऐसे जल्दी घर नहीं आया था। कई बार प्रिया ने गोपाल से बाहर कहीं घूमने जाने के लिए कहा। और तो और रज्जो के नाम से भी कभी गोपाल जल्दी घर नही आया था। पर आज पिताजी के दोस्त का नाम सुनते ही दौड़ा चला आया। लगभग हाँफते हुए बोला ''प्रिया पिताजी कहाँ है?'' ''अरे आप आज इतनी जल्दी आ गए?'' प्रिया ने विस्मय से कहाँ ''दो मिनट दम तो लो मैं पानी लाती हूँ'' ''अरे नहीं मैं ठीक हूँ पहले बताओ पिताजी कहाँ हैं?'' और बिना जवाब सुने गोपाल बाहर की ओर चला गया। बरामदे में ही उसे पिताजी मिल गए। पिताजी ने खुशी से चहकते हुए गोपाल को कन्धों से पकड़ लिया और बोले ''अरे गोपाल आज मेरा यार उदय प्रताप आ रहा है। मुझे समझ नहीं आ रहा कैसे उसके स्वागत की तैयारी करूँ?'' ''सब हो जाएगा आप यह बताइए कि वो कब आ रहे हैं? कितने बजे कि फ्लाईट है? प्रिया और गणपत मिल कर सब सम्भाल लेंगे आप फिक्र मत कीजिए।'' ''हाँ हाँ मुझे प्रिया बेटी पर भरोसा है बस अब तीन घण्टे हैं फ्लाईट आने में चलो एअरपोर्ट भी जाना है।'' और फिर गोपाल ने तसल्ली से प्रिया को समझाया क्या-क्या बनाना है। उदय ताऊ जी की क्या पसन्द है घर कैसे दिखना चाहिए वगैरह वगैरह ... (पिताजी से दो महीने बड़े थे सो गोपाल उन्हें ताऊजी ही कहता था) और फिर गणपत को तो सब पता ही है। सो गोपाल ने गाड़ी निकाली और पिताजी को लेकर एअरपोर्ट की ओर चल दिया।

रास्ते भर पिताजी बेचैन से बने रहे। फिर एअरपोर्ट पर भी टहलते रहे और आखिर वो लम्हा आ गया जब सामने से उदय प्रताप सिंह जी का रौबीला चेहरा नजर आया। वो ट्राली पर सूटकेस रखे ऐसे चले आ रहे थे जैसे कोई खिलौना धकेल रहे हों। पिताजी दौड़ कर पास पहुँचे और रूक गए। गोपाल ने आगे बढ़ कर पाँव छुए। ताऊजी ने आशीर्वाद के साथ ही गले से लगा लिया। फिर पिताजी के पास आ कर, ''अरे यार तू क्यों टकटकी लगाए देख रहा है आ गले लग जा जन्मों के बिछड़े यार मिले हैं।'' और वो वाकई देखने वाला सीन था श्रीराम जी और भरत भाई के मिलाप के बाद शायद यही मिलाप हुआ था। दोनों की आँखों से अश्रुधारा बह रही थी। लगभग पाँच मिनट तक यूँही कभी गले मिलते कभी रोते। ''पिताजी अब सारा प्यार यहीं उंडेल दोगे या कुछ घर के लिये भी ले जाना है।'' गोपाल ने चुटकी ली। पिताजी को मानो होश आया हो और फिर गोपाल ने उदय ताऊ जी की ट्राली पकड़ ली और एअरपोर्ट के बाहर ला कर रूकने को कहा। कुछ ही देर में पार्किंग से गाडी ला वहाँ लगा दी। गाडी घर की ओर सरपट दौड़ने लगी।

इतनी देर में घर एकदम चमका दिया गया था। कई तरह के व्यंजन बनाने की तैयारी हो चुकी थी। बैठक, दालान, शयन कक्ष सब कुछ चमक रहे थे। सफेद रजनीगन्धा के बीच नरगिस के फूल ला कर लगा दिये गए थे। उदय ताऊ जी को यही पसन्द थे। गणपत को तो सब याद था। छत पर तख्त बिछा कर उस पर चाँदनी बिछा दी गई थी। छत के एक कोने में पानी के बर्तन में केवड़ा डाल दिया गया था, जिसकी खुश्बू से सारी छत महक रही थी। बिजली के बल्बों के होते हुए लालटेन वाले लैम्प लगा दिये गए हालाँकि उनमें भी बिजली के बल्ब ही लगे थे। अब बाजार में सब कुछ जो मिलता हैं। गमलों को तरतीब से लगा दिया गया था। गणपत को सब याद था कि गरमी की रातों में अक्सर राय बहादुर साहब और उदय प्रताप सिंह जी छत पर घण्टों बैठा करते थे। मालकिन भी शरमाती हुई उनकी बातों में रस लेती और फिर मालकिन से दोनों की मनुहार करना, ... ये सब याद करते करते गणपत की आँखे भर आई थी।...

तभी दरवाजे की घण्टी बजी। गणपत दौड़ता हुआ नीचे उतरा और दरवाजा खोला। प्रिया भी रज्जो को लेकर आ गई थी। सवा छ: फुट लम्बे, रौबीले, गठे हुए बदन के एक बेहद खूबसूरत सी शख्सियत वाले. जिन के भरे हुए गोरे कुछ लाली लिए हुए चेहरे पर घनी श्वेत मूँछे सुशोभित हो रही थी,

प्रिया देखती ही रह गई। गणपत ने आगे बढ़ कर पैर छूने चाहे पर ताऊजी ने गणपत को बीच में ही पकड़ कर गले लगा लिया। अरे गणपत काका क्या कर रहे हो पैर तो हमें छूने चाहिए, आप तो बस आशीर्वाद दीजिए, फिर प्रिया ने भी पैर छुए। ताऊजी ने दोनों को आशीर्वाद दिया और प्रिया की गोद से रज्जो को अपनी बाहों में लेते हुए बोले, ''अरे ये कहाँ की राजकुमारी हैं यह तो गोपाल महाराज की सुपुत्री जान पडती हैं'' और गाल चूमने के लिए जैसे ही मुँह झुकाया रज्जो को ताऊजी की मूँछे चुभी और वो जोर जोर से रोने लगी। और ताऊजी ने जोर का ठहाका मारते हुए रज्जो को प्रिया की गोद में देते हुए अन्दर प्रवेश किया। उन्हें देखते ही पुराने दिन याद आ गए हवेली बिल्कुल वैसे ही थी जैसे वो छोड़ कर गए थे उन्हें समझते देर नही लगी ये सब गणपत ने किया है। ताऊजी ने गणपत की हथेली पर पाँच सौ का नोट रख दिया। गणपत की आँखे छलक गई। ताऊजी बैठक में पहुँचे देखा एक बड़ी सी तस्वीर पर चन्दन की माला लटकी थी। वो गोपाल की माँ की तस्वीर थी। वो कुछ देर टकटकी लगाए देखते रहे मानों वन्दना कर रहे हो। पिताजी कुछ घबरा से गए और बढ़ कर ताऊजी का हाथ पकड़ते हुए उन्हें सोफे पर बैठाया। फिर चाय पानी के बाद बातचीत का हल्का फुल्का दौर चला...

रात हो चली थी सो डायनिंग हाल में खाना लगाया गया। खूब ठहाकों के बीच खाना खाया गया। इन सब के बीच प्रिया मन्द मन्द मुस्करा देती। पर! जब भी ताऊजी पूछते कि प्रिया बेटी ने क्या किया है? कितना पढ़ी है? तो पिताजी बात को बदल देते और ताऊजी का ध्यान दूसरी तरफ ले जाते। ये सब प्रिया को हैरान कर रहा था। खाना खाने के बाद सबने हाथ मुँह धोए। और फरमान सुना दिया गया कि ''चलो सब छत पर चलो आज रात कोई नही सोएगा। बस रज्जो बिटिया को सोने की छूट है।'' पिताजी फिर सहम गए। प्रिया पल-पल हैरान हो रही थी कि आखिर बात क्या है कभी तो पिताजी बेहद खुश नजर आते हैं और कभी मायूस हो जाते हैं। तभी ताऊजी गणपत के साथ हवेली का भ्रमण करने निकल पड़े। रसोई का मुआयना क्या, हर कमरे में जा कर देखा और अंत में पिछले कमरे से होते हुए नीचे उतर गए। ये हिस्सा हवेली का सालों से बन्द था। कभी कोई नही गया। ये हवेली का एक स्टोर था, जिसमें प्रिया का हारमोनियम तानपुरा और गोपाल का तबला कैद था। कुछ ही दूर पर एक सितार सिल्क के लाल कपड़े में लिपटा हुआ कोने में रखा था। ''गणपत भाई ये हारमोनियम और तबला किसका है? सितार तो शायद भाभी जी का है?'' गणपत सकपका गए धीमे स्वर में बोला ''बड़े मालिक धीरे बोलिए... ये हारमोनियम और तबला तो बहूरानी और गोपाल के हैं.... पर आप मालिक को मत कहिएगा कि मैंने आपको ये सब बताया वर्ना मुझे घर से निकाल देंगे।'' ''क्यों ऐसा क्या हो गया है?'' ताऊ जी ने बड़ी-बड़ी आँखे करके पूछा। ''बड़े मालिक! क्या बताएं जब से मालकिन छोड़ कर गई हैं इस घर से जैसे संगीत ही रूठ गया है। प्रिया बिटिया बहुत अच्छा गाती हैं और गोपाल बाबा तबला बजाते हैं। दोनों गुरूजी के यहाँ मिले और प्यार हो गया पर मालिक इसी शर्त पर शादी को राजी हुए कि इस घर में संगीत नही होगा और दोनों ने मालिक की खुशी की खातिर अपने शौक की आहूति दे दी। सुना है प्रिया बिटिया का तो सपना ही संगीत की टीचर बनने का था।'' इतना कह कर गणपत चुप हो गया। ताऊजी ने गणपत के कान में कुछ कहा और वहाँ से बाहर आ गए।

''अरे भाई कहाँ चले गए थे'' पिताजी ने हँसते हुए पूछा ''कही नहीं बस बहुत दिनों से हवेली देखी नही थी सो गणपत के साथ हवेली की सैर कर रहा था। विदेश में ऐसे घर कहाँ होते हैं ये शान शौकत कहाँ'' फिर कुछ देर रूक कर ''चलो चलो सब चलो ऊपर वहीं गप्पे मारेंगे। चलो बिटिया तुम भी चलो और हाँ गणपत शर्बत का दौर भूल मत जाना... हाँ भई शर्बत... दारू नहीं मुझे याद है मेरा यार ये सब कब का छोड़ चुका।'' फिर पिताजी की तरफ देखकर ''कहीं फिर से शुरू तो नही कर दी'', ''अरे नहीं नहीं राम का नाम लो'' और पिताजी भी खिलखिला कर हँस दिये। सभी छत की ओर चल दिये।

जैसा किसी जमाने में छत की सजावट होती थी वैसे ही छत को सजाया गया था पर पिताजी को इस बात का बिलकुल भी आभास नहीं था कि बूढ़ा गणपत इतने कम समय में ये सब कर देगा। ''वाह वाह भई वाह! मजा आ गया वही मसनद, 'वही चाँदनी और वही केवड़े की खुश्बू और तो

और मेरी रजनीगन्धा में नर्गिस भी है अरे वाह! यार तूने तो कमाल कर दिया।'' ताऊजी तख्त पर गाव तकिए का सहारा ले कर बैठते हुए बोले। पिताजी कुछ कहते इतने में प्रिया बोल पडी ''ये सब तो गणपत काका ने किया है उन्हें सब याद है। आपको क्या पसन्द है और क्या नहीं।'' ताऊजी को आए हुए चार घण्टे से ज्यादा हो गए थे पर उन्होंने प्रिया की आवाज नहीं सुनी थी। बस हूँ, हाँ और फिर धीमी सी मुस्कराहट। और जब प्रिया बोली तो लगा जैसे कानों मैं मधुर घण्टियाँ बज उठी हों। ताऊजी को सारा माजरा तो समझ आ ही गया था। इतने में गणपत शहतूत और फालसे का शर्बत ले आया। ताऊजी ने गणपत को बुला कर कान में कुछ कहा और फिर पिताजी की तरफ होकर बोले, ''और सुनाओ भाई कैसी कट रही है। राम नगर जाना होता है या नहीं? चलो छोड़ो।'' फिर प्रिया की ओर मुड़कर, ''बेटी तुम बताओ तुम सारा दिन रज्जो में ही लगी रहती हो या कोई शौक वौक भी पाले हैं'' पिताजी को काटो तो खून नहीं, बस अभी सब पता चल जाएगा।

इतने में गणपत हारमोनियम ले आया और दूसरे चक्कर में तबला। देखते ही पिताजी गुस्से से तमतमा गए ''गणपत ये सब क्या है?'' ''क्यों भाई हमने कहा था गणपत को पर तुझे क्या हो गया पहले तो खूब गाता था जब भाभी सितार बजाती थीं, याद है यहीं महफिल जमती थी'' ताऊजी उल्हाने भरे अन्दाज में बोले, ''मैं जब हवेली के पिछवाड़े वाले कमरे में गया था तो तभी मुझे सब समझ आ गया था जब मैंने हारमोनियम और तबले पर धूल की मोटी परत देखी थी। और इधर प्रिया बहू के चेहरे पर खामोशी जो साफ कह रही थी कि कुछ तो है कि मैं जब भी बहू से कुछ पूछने की कोशिश करता हूँ तो तू मुझे बार बार टोक देता है। आखिर माजरा क्या है हम भी तो सुने।'' कुछ देर रूक कर फिर बोले ''क्यों विक्रम, क्यों तू अपने दिल के जख्मों को इन बच्चों के आँसुओ से धो रहा है?'' फिर प्रिया की ओर देखते हुए ''सुनाओ बेटी आज कुछ पक्का गाना हो जाए विदेश में तो यह सब मिलता ही नहीं।'' प्रिया एकदम से सकपका गई थी और सोच रही थी कि अब क्या होगा उसके हाथ ठण्डे पड़ गए थे। ''बेटे घबराओ नहीं मैं हूँ न! मेरे सामने कोई कुछ नही कह सकता और गोपाल चलो उधर क्या खड़े हो इधर आओ, मुझे सब पता है कि तुम्हारे तबले की आवाज के बिना लय कैसे बंधेगी। चल इधर आ।'' गोपाल कुछ झिझकता सा, काँपता सा ताऊ जी के पास बैठ गया। उधर पिताजी परेशान से दिख रहे थे। इतने दिन बाद बचपन के दोस्त से मिले थे गुस्सा करते तो दोस्त को खोने का डर था और यदि कुछ न कहें तो उस ईगो का क्या जो उन्होंने सब पर हावी कर रखी थी। बस जब नहीं रहा गया तो उठ कर जाने लगे। प्रिया ने पिताजी को रोकना चाहा फिर ताऊ जी की ओर देखा। तो ताऊजी ने गाने के लिए इशारा किया। और प्रिया ने काँपते हुए होंठो से गाना शुरू किया।

''कौन तरह से तुम खेलत होरी रे.....'' राग काफी में बेगम अख्तर की गाई होरी जैसे प्रिया ने शुरू की और पहली पंक्ति के बाद गोपाल ने भी ठेका लगाया। पिताजी चलते चलते ठिठक कर रूक गए। उन्हें उमा देवी की याद आ गई। अंतिम दिनों में उन्होंने यही बन्दिश गाई थी। और फिर गोपाल को पिताजी की गोद में छोड़ कर चल बसी। प्रिया डर-डर कर गा रही थी और पिताजी पुराने वक्त में पहुँच गए थे। पहले मशहूर गायिका मालविका का छोड़ कर चले जाना और फिर उमा देवी का स्वर्गवास हो जाना। इस सबने पिताजी को तोड़ दिया था और कुछ हद तक डरा भी दिया था। उन्हें ये डर बैठ गया था कि वो जिसके भी संगीत में डूबते है वही उन्हें छोड़ कर चला जाता है। इसीलिए तो पिताजी अपने मित्र गुरूजी के यहाँ भी कभी नहीं गए थे। प्रिया ने अपनी बन्दिश गोपाल की तिहाई के साथ समाप्त की। ताऊ जी ने भरपूर तालियाँ बजाई। पर पिताजी वहीं खड़े रहे और रोते रहे।

ताऊजी उठे और प्रिया व गोपाल को लगभग खींचते हुए पिताजी के पास ले गए। बता यार इन मासूमों ने तेरा क्या बिगाड़ा है, जो इनकी इच्छाओं का गला घोट रहा है और तू तो बड़ा वैज्ञानिक बनता था तू कब से दकियानूसी हो गया।''

पिताजी ने प्रिया और गोपाल को गले लगा लिया और रोते रोते बोले मुझे माफ कर दो मेरे बच्चों, मैं स्वार्थी हो गया था। अपनी दुनिया को ही सबकी दुनिया समझ लिया था मैंने। अब पिताजी से खड़ा नहीं रहा गया, वो लड़खड़ा गये। तभी ताऊजी ने आगे बढ़ कर दोस्त को थामा और उसे अपने पास तख्त पर बैठाया, ''देख वो जमाना और था और अब तो चाचाजी भी नहीं रहे क्या तू नहीं चाहता कि भाभी की आत्मा

इन बच्चों को गाता बजाता देख खुश हो ? वो भी तो गाने का अरमान लेकर चली गईं। पिताजी को अपनी गलती का अहसास हो रहा था और वो ग्लानि से सराबोर हो रहे थे।

''बेटी मैं आज तुझे बताता हूँ कि एक समय था जब तेरा ये ससुर विक्रम सिंह राय बहादुर सारी रियासत में अपने काम के साथ अव्वल दर्जे के गवैये के रूप में मशहूर था और इसे इश्क हो गया शहर की बेहद खूबसूरत और बला की गायिका कु. मालविका से। जितनी मीठी आवाज थी उतना ही मधुर सितार बजाती थी।'' पिताजी के चेहरे पर एक रंग आ रहा था और एक जा रहा था। जिस जख्म को वो बरसों से दबाए हुए थे उसे एक क्षण में उनके अतरंग मित्र में कुरेद दिया था। ताऊजी ने एक घूँट शर्बत का लिया और फिर से कहना शुरू किया।''मालविका गायिका घराने की थी सो चाचाजी यानि गोपाल के दादाजी को पसन्द नहीं थी सो इश्क की चिंगारी दबी रह गई और मालविका पार्टिशन के बाद एक अंग्रेज के साथ विलायत चली गई। बस फिर उमा देवी यानि गोपाल की माँ से शादी कर दी गई। चाचाजी को मालविका के कारण संगीत से चिढ़ थी। और एक दिन भाभी उमा देवी जो कि स्वयम् सुरीली गायिका थी मन्दिर में बैठी ठुमरी गा रही थी कि तभी यह मेरा यार गुस्से से तमतमाता हुआ अन्दर आया और इतनी जोर से चिल्लाया ''बन्द करो ये गाना पिताजी सुन लेंगे तो... ?'' बस भाभी उसी वक्त सहम गई और इतना डरी कि सदमें से उनकी आवाज ही चली गई। उस दिन से वो कभी भी नहीं बोल पाई, और तीन महीने में चल बसीं बस तभी से इसने सोच लिया कि संगीत उससे अपनों को जुदा कर देता है। कोई बताए इस पगले को कि संगीत मिलाता या बिछड़ाता है। अरे संगीत में तो वो ताकत है जो परमात्मा से भी मिला देता है फिर इंसान क्या चीज है.... चल अब बहुत हो गया रोना धोना, ये शर्बत पी और सुनादे के. एल. सहगल का गाना दिल जलता है तो जलने दे....'' प्रिया और गोपाल हैरानी से देखने लगे कि पिताजी भी गाते हैं।

''गणपत!'' पिताजी गुस्से से चिल्लाए। ''जी मालिक मेरा कोई कसूर नहीं है ये तो बस बड़े मालिक ने...'' और गणपत गिड़गिड़ाते हुए रूआँसा सा हो गया। ''अरे तू इतना घबड़ा क्यों रहा है तुझे शरम नही आई हारमोनियम और तबला तो ले आया और उस सितार का क्या ? चल ले कर आ और देख तारों का सेट और मिज़राबें मेरी दराज में रखा है, उन्हें भी ले आना।'' गणपत का गला भर आया और उसके साथ-साथ सभी के चेहरों पर खुशी की लहर दौड़ गई।

फिर जो संगीत का ऐसा समा बँधा कि पूछो नहीं। वो बाबूजी की व्यथा के स्वर थे जो आज मधुर गीतों में परिवर्तित हो कर पूर्णत: को प्राप्त हो गए थे।

संस्मरण

चार मास का बाँस

हरसिंह मनराल

बाँस के वनों से जुड़ा था मेरा प्रारंभिक जीवन, यहीं हुआ था मेरा जन्म, यह स्थान मेरे पैतृक गाँव से सैंकडों मील दूर घने वन में था। जहाँ माता-पिता जाया करते थे चार महीने की मजदूरी हेतु। सरकारी बाँस काटने के लिए, यूँ तो गाँव की खेती का कार्य वर्ष भर बहुत अधिक हुआ करता था। 'आश्विन' माह के दिनों में खाने-पीने का भी होश न रहता, इन दिनों मोटे अनाज से लेकर दलहन व मसालों से लेकर सब्जियों की फसल को समेटने का समय रहता, यहाँ तक कि वे दिन के अतिरिक्त चाँदनी रातों में भी खेती का कार्य किया करते थे। किन्तु यही चार महीने 'मार्गशीर्ष' 'पौष' 'माघ' 'फाल्गुन' के ऐसे थे जिन दिनों में गांव में खेती का कार्य बहुत कम या न के बराबर हुआ करता था। गाँव के लोग इन महीनों का इंतजार बहुत उमंग और बेसब्री से किया करते, यह रोजगार उनकी अतिरिक्त आय के रूप में जुड़े होने के कारण उनके परिवार के वार्षिक भरण-पोषण की पूर्ति का मुख्य साधन हुआ करता था। बाँस जो अस्थाई किन्तु मजबूत घर बनाने से लेकर सुरमई बाँसुरी तक सीढ़ी से लेकर किश्ती और काग़ज से लेकर स्याही तक मानव के जीवन में नाना प्रकार के वस्तु-फल व रोजगार तक अपनी बहुमूल्य भूमिका सदियों से निभाता आया है।

यह बाँस होता था दूर घनघोर वर्षा-वन में, जहां मनुष्य की बसावट दूर-दूर तक नही होती और जंगली जानवरों का वर्चस्व पूरी तरह कायम था, उन वनों के बॉस की कटाई के लिए सरकार द्वारा ठेकेदारी की प्रथा थी, जिसके अंतर्गत ठेकेदार गाँव-गाँव जा कर उन परिवारों तक पहुँचते, जहाँ सीढ़ीनुमा व नोकदार खेतों में वर्षा पर आधारित खेती की जाती थी, किन्तु असामान्य वर्षा के कारण हर बरस खेतों में फ़सल एक जैसी नही होती थी, जिस कारण गाँव के मेहनतकश लोग अपने परिवार के लिए वर्ष-भर के भरण-पोषण हेतु इस ओर कदम बढ़ाते। यह एक अर्थव्यवस्थिक सोच थी कि चार माह का अपनी घर-खेती का राशन तो बचेगा ही और इन दिनों का भरण पोषण भी हो जायेगा, ईश्वर ने चाहा कुछ रकम हाथ में बची तो घर जाते समय बाज़ार से दो बैल के बछड़े लेकर जाऊँगा। इस सोच को अपने अवचेतन मन में रख जी तोड़ मेहनत करते, और किसी वर्ष ऐसा ही होता। मैंने ऐसे कई जोड़े बछड़ों को अपने ही आँगन में उनकी 'ठौर' पर बैल बनते देखा जो कभी मीलों कई दिनों की पैदल यात्रा तय करके अपने नये मालिक के संग 'देवभूमि' में मेरी पैतृक खेती के लिए आये थे।

सभी के जाने पहचाने ठेकेदार अपने पट्टे की कटाई हेतु मजदूर नियुक्त करते तथा सफ़र के खर्चे हेतु कुछ रकम एडवांस के रूप में अपने 'बाँसकट' मजदूरों को देते। अब गाँव से 'चार मास का बाँस' के लिए बाँसकटों की सहमति से सफ़र के लिए दिन नियुक्त हुआ। कुछ लोग घर के सभी परिवार-जन जायेंगे वे अपने पालतू 'ढोरों' को या तो बेच कर जायेंगे या उनकी जिम्मेदारी गाँव में ही घर-पड़ोस में दे कर जायेंगे। स्कूल पढ़ने वाले बच्चों को गाँव या किसी रिश्तेदार के सुपुर्द करके जायेंगे तथा छोटे बच्चों की देखभाल के लिए घर के किसी बुजुर्ग अथवा नाबालिग सदस्य को भी उस 'चार मास के बाँस' के सफ़र में ले जाते थे। अपने पैतृक घर-खेती की देखभाल के लिए पड़ोस में बार-बार बोलते फिरते, पड़ोस वाले भी उसकी एवज में वापस घर लौटने पर अपने लिए बाँस की मथनी, 'ढोरों' को तेल पिलाने वाली कूप, आग फूकने वाली 'फूकनी, बाँस की ही 'चिलम' जैसी अन्य आवश्यक वस्तुओं की फरमाइशें उनके आगे रख दिया करते थे। कठिन पथ, दुष्कर यात्रा व परिश्रम के कारण

जवान व युगल नारी-पुरुष ही इस चार मास के बाँस के सफ़र में अधिक संख्या में जाया करते थे। किसी घर से केवल एक ही सदस्य जाया करता जो अपना खाना-खर्चा अन्य अकेले 'बॉसकट' के साथ मिल कर किया करता। ये मजदूर 'फट-फट' के नाम से जाने जाते क्योंकि इनके साथ सफर में बच्चे व बुजुर्गों का झमेला न हुआ करता, किन्तु सफ़र में परिवारजन की मदद भरपूर किया करते थे।

अब जाने का दिन आने वाला था, लोगो ने रात कुछ बातों में और कुछ तैयारियों में बिताई। आखिर चार माह के लिए घर छोड़ कर जाना था। आज सारा गाँव भोर होने से पहले ही जगने लगा, सभी अपने 'ईष्टदेवता' को स्मरण करते, आज प्रात: सभी के माथे रोली-अक्षत के टीकों से दमक रहे थे। जाने वाले एक दूसरे को सेवा-सलाम दे रहे थे, महिलाएँ नम आँखों से एक-दूसरे के गले मिल रही थी, परिवार के सभी सदस्य कुछ आवश्यक सामाग्री की पोटलियाँ लिए जैसे- बिस्तर, वस्त्र, दो पाग के बर्तन, व रास्ते के लिए कुछ कच्चा-पक्का राशन व बाँस कटाई हेतु फर्सानुमा कुल्हाड़ियाँ लिए मंजिल की ओर चल पड़ते यह सोच कर कि आज हर हाल में सांझ ढलने तक तीस मील की दूरी चढ़ाई व उतराई वाले जंगल के रास्ते से तय करनी होगी तभी रिहायश के करीब रैन-बसेरा मिल पाएगा। गाँव के बड़े बुजुर्गों की आँखें भी आज कुछ नम थीं।

यूँ तो उस जंगल में जाने के लिए मोटर मार्ग से भी जाया जाता। किन्तु उस समय एक तो मोटर मार्गों व मोटर गाड़ियों का अभाव था, दूसरा उस खर्चे को बचाने के लिए एक दिन के मोटर मार्ग के बराबर का सफर कई दिनों के पैदल चल कर किया करते। जो मार्ग जंगलों और नदियों के रास्तों से गुजरता, केवल गोदी के बालकों वाली स्त्री व डेरों में छोटे बच्चों की देखभाल करने वाले बुजुर्गों को ही जहां तक संभव हो, मोटर गाड़ियों से पहुंचाया जाता था। अनजान जंगल व नदी पड़ने के कारण रात्रि को बसेरा करना ही पड़ता। आठ-दस परिवार के बीस-तीस सदस्य, सब के सब सामान से लदे, जंगली रास्तों से एक लम्बी पैदल यात्रा, पीठ पर बंधी बिस्तर की गठरी एक काँधे पर घर का पका भोजन का झोला, दूसरे काँधे पर रास्ते के लिए राशन के थैले की 'दोनरी', एक हाथ पर 'दो पाग के बर्तन' की 'कंडी' व छोटे बच्चे के दोनो पाँव आगे की ओर रख कर गर्दन पर बिठा कर चलते रहने के वावजूद भी किसी की सहायता के लिए एक हाथ खाली रखा करते थे।

सॉझ होने को आई, पहले दिन का सफ़र सबने जोश व उमंग के कारण निर्धारित मील की दूरी समय रहते तय कर ली 'रोशल देवी' के जंगलों के समीप जहाँ बसावट के नाम से कुछ साधु-महात्मा साधना हेतु इन जंगलों में झोपड़ी बना कर बसे थे। इस जगह जंगली जानवरों के खतरे के कारण उस स्थान पर आम लोगों का आवागमन कम हुआ करता था। उन्हीं के नजदीक कंटीले बेरों के बड़े-बड़े पेड़ के 'झाल' थे। जो पूरी तरह रात की ओस की ढाल बने, उन्हीं के नीचे बिस्तर लगाकर रात बिताते, थकान से चूर होने के कारण नींद भी इस भय से बेखबर थी कि हम अपने घर में सो रहे हैं या किसी भयावह जंगल में।

दूसरे दिन की यात्रा में हमने गाँव से प्रथम बड़े बाजार 'रामनगर' को पार किया और कोसी-नदी भी, यूँ तो अभी साँझ होने में समय बहुत था किन्तु उससे आगे का सफ़र शहर से दूर 'गुरखपौ चोड़' उन दिनों कम आबादी क्षेत्र होने के कारण चोर, लुटेरों व जंगली जानवरों से भय की वजह से जाना जाता। अत: कबीले के मुखिया ने सभी को आज कोसी नदी के तट के करीब ही बसेरा करने को कहा। पीछे आ रहे परिवार-जन को यह सुखद संदेश एक-दूसरे द्वारा दिया गया। थकान से चूर सभी की थकान मानो यह बात सुनते ही उतर गई कि आज का बसेरा यहीं पर करना है। आज शाम की रोटी के लिए सबको चूल्हा जलाना होगा। सभी रात बिताने की तैयारी में नदी किनारे रेत में तम्बू लगाने लगे। कोई चूल्हा जलाने के लिए सूखी लकड़ियाँ चुनता नजर आता, तो कोई रात्रि जागरण के लिए आग जलाने के लिए मोटी लकड़ियाँ जमा करते दिखते। अभी तो नदी से मछली पकड़ने का समय भी बचा था। वैसे भी सभी गाँव वालों की पैतृक जन्म-भूमि रामगंगा नदी किनारे होने के कारण वे लोग मछली पकड़ने में बड़े निपुण थे। बच्चे व महिलाएँ रात्रि को तंबुओं में सो जाते, जवान लोग बातों में रात काट कर पहरा देते। पहरा देने वाले लोगों ने भोर होने से

कुछ पहले ही सबको जगा दिया जिससे आगे की यात्रा दिन खुलते ही आरम्भ की जा सके तथा आज ही पड़ाव तक पहुंचा जा सके।

तीसरे दिन का सफर कुछ उमंग कुछ थकान के साथ आरम्भ हुआ। कबीले के लोग एक दूसरे के सामान की अदली-बदली से मदद करते। एक दूसरे का साहस बढ़ाते चले जा रहे हैं। कुछ जंगली कुछ आबादी वाले स्थान के रास्ते जैसे- 'लालढाक' 'झरना' 'वैरना' 'परसोव', 'धारु' के धार होते पहुँचते दूसरे बड़े शहर 'कालागढ़' जहां से आज मंजिल को पाने का समय काफी था किन्तु दो दिन की थकान सभी को इस फैसले को लेने के लिए मजबूर कर रही थी कि आज का बसेरा बस यहीं पर कर लिया जाय, जिससे दूसरे दिन अपनी मंजिल के जंगलों जैसे- 'नौकटिया', 'निमशोत', शुवासोत, 'चिलोई' 'कालूशैत' के जंगलो में पहुँच कर सबसे पहले अपने लिए चार मास के लिए अस्थाई 'खरिक' (झोपड़ी) बनाने की कवायत होती। अब कबीला कुछ दिन तक बस्ती में बदलने को हैं। एक दूसरे की झोंपड़ी बनाने में सब सहयोग करते। करीब तीन-चार दिन का समय सभी की झोंपड़ी बनाने में लग जाया करता था। चार मास के लिए अस्थाई किन्तु मजबूत झोंपड़ी को बनाने के लिए मात्र घास और बाँस का प्रयोग किया जाता था। ठेकेदार द्वारा अपने कामगारों को खान-पान की मूलभूत सुविधाओं के लिए एक राशन गोदाम भी पास में ही बनाया जाता। जो हर परिवार को खाता बनाकर उन्हें वितरित किया जाता और वह रकम मजदूर के आने वाले दिनों की मजदूरी से काट ली जाती। फिर कहीं जाकर बाँस की कटाई का काम चालू होता। सभी लोग अपने खरिक से निकल जंगल की ओर एक साथ कौतुहल करते चलते, पुरुषों के हाथों में कटाई हेतु 'फर्सा' व महिलाओं के पास छटाई के लिए दराती, व कमर में सभी के जूट की रस्सी बधीं होती।

अनजान जंगल में जंगली जानवरों के भय से सभी लोग एक सर्कल बना कर सतर्कता से बॉस कटाई का काम करते, तथा अलग-अलग साईज के बॉस को अलग नाम के दाम से मजूरी मिला करती, जिसमें सबसे महंगा 'खप्रेल' जो सबसे अधिक मोटा होता फिर बारह फुटा, आठ फुटा, पट्टी, कनेरू, चढ़ाऊ, आदि नामों से जाना जाता तथा अपने-अपने डेरों के करीब ढेरी बनाकर रखा जाता। करीब एक महीने की कटाई को ठेकेदार द्वारा नाप-तौल कर माल उठाकर मजदूरों के खाते में चढ़ाया जाता। किसी बरस उस जंगल का बाँस महिने दो महिने मे खतम हो जाता जिस कारण उसी ठेकेदार के दूसरे जंगल में महिने भर के लिए पड़ाव ही बदलना पड़ता, फिर महिने भर के लिए एक नयी 'झोंपड़ी' बनानी पड़ती।

किन्तु जिस प्रकार घड़ी की सुईयाँ चहुँ ओर चक्कर एक समान काटती हैं, उस प्रकार समय व मौसम समानता नही बरत सकता जिस वजह से किसी वर्ष परिवारजन को उन चार महीनों में मुनाफे के बदले 'खाई' लग जाया करती थी अर्थात कमाया कम खाया ज्यादा। फिर घर वापसी का खाना-खर्चा ठेकेदार से कर्ज के रूप में लेना पड़ता, फिर भी वे लोग अपने जीवन में प्रसन्न व सन्तुष्ट थे। जमाना बहुत सीधा-सादा था। लोग झूठ बोलने से बहुत डरते थे। दु:ख-सुख में एक दूसरे को भरपूर सहयोग दिया करते थे। पास में कोई अन्य बसावट न थी कुछ दूरी पर कुछ लोग दूध के व्यवसाय के लिए भैंस पाला करते थे। वे लोग घोषी वस्ती के नाम से जाने जाते, वही से हम लोगों के चाय के लिए दूध मोल व चावल के सब्जी हेतु मट्ठा मुफ्त मिल जाया करता तथा जंगल में अकेलेपन का भय भी कुछ कम होता और जंगल से कभी कंदमूल फल तो कभी शेर का शिकार किया हुआ शिकार भी मिल जाता।

एक बार की बात है बस्ती वालों को शेर का शिकार किया हुआ हिरन मिल गया। बस्ती वाले खुश भी थे और जंगली पुलिसियों से डरे हुये भी आखिर इतने बड़े शिकार को छिपाकर बस्ती तक ले जाना भी मुश्किल था। आखिरकार किसी ने बस्ती वालों को कुछ ले जाने की जानकारी जंगली पुलिसियों को दे दी। फिर क्या था बस्ती वालों के पहुचने के कुछ समय उपरान्त वहाँ दो 'सिपाही' बंदूक कांधे पर रखे चले आये बस्ती की ओर और बस्ती वालों पर उस हिरन को मारने का इल्ज़ाम लगाने लगे। पिताजी ने बहुत समझाया कि यह हिरन हमने नही मारा है। इसे तो शेर ने मारा है हमने शेर को इसे मारते हुए भी देखा किन्तु हमारे शोर गुल से शेर शिकार को छोड़ कर भाग निकला। इतने में एक पुलिस वाले

ने पिताजी के सीने मे दोनाली बंदूक टेकते हुए कहा- आखिरी बार सच बोल बुड्ढे कि यह हिरन तुमने मारा है ? नहीं तो गोली चला दूँगा। मेरी माँ ने पुलिस वालों के पाँव पकड़ कर कहा इन्हें मत मारो इन्होंने हिरन को नही मारा। किन्तु पिताजी ने फिल्मी डायलौग में कहा चलाओ गोली यदि हमने हिरन को नही मारा होगा तो गोली चलेगी ही नहीं। इस साहसी सत्य को सुनने के बाद पुलिस वालों ने बस्ती वालों को सही समझा और वे भी अपने हिस्से का भाग लेकर चल पड़े।

इतना आसान भी नही था उस बस्ती में सुरक्षित जीवन यापन करना। रात्रि के समय बस्ती के करीब जंगली जानवरों जैसे चीता, बाघ, गुल्दाड़ आदि जानवरों की आवाजे स्पष्ट सुनाई देती थी। कभी-कभी रात्रि के समय बस्ती के करीब जंगली हाथियों का झुंड़ भी आ जाया करता था। जिसे बस्ती वाले बर्तन बजाकर शोर मचाकर और आग दिखाकर भगाया करते थे। लोग कभी-कभी बीते दिनों में जंगली जानवरों द्वारा कुछ दुर्घटनाओं का जिक्र भी किया करते थे। साँझ ढलते ही बस्ती के करीब ही बाघ की अजीब सी गर्जन सुन जब बच्चे अपने अभिभावकों से पूछते कि वो क्या है तो अभिभावक बड़ी निर्भीकता पूर्वक प्यार से कहते - सो जा बेटा कुछ नही है 'बाघ' है, यहां नही आयेगा। आयेगा तो मारुंगा।

अब चार मास की यात्रा की वापसी का समय आने वाला था फाल्गुन का महीना तिहाई पार कर चुका था। रोजगार भी खतम हो चुका था। सब लोग घर की तैयारियों में लगे थे। हमारी झोपड़ियों को तोड़कर अपने खेती की बाड़ के लिए ले जाने के लिए किसानों की बैलगाड़ियाँ भी पहुंच चुकी थी किन्तु विधाता के विधान ने उस समय व स्थान को मेरे जन्म के लिए चुन लिया, जिस कारण हमें बिना रोजगार के कुछ दिनों तक उस जंगल में अकेले ठहरना पड़ा, बगैर काम के वे दिन भी भारी पड़ते दिखते जिस कारण मैने माँ की गोद में सातवें दिन से इस यात्रा में साथ दिया। 11वें दिन मेरे माता पिता मुझे ले कर अपने गाँव 'दरमोली' पहुंचे तो वह दिन हिन्दी तिथि के अनुसार 'चैत' का प्रथम दिन था। पूरे गाँव में बड़ी चहल-पहल थी। सभी घर, आँगन व रास्ते नाना प्रकार के पुष्प जैसे- सरसों, बुरॉश, प्योलि, सगिना, के पुष्पों से इस प्रकार सुशोभित थे कि जैसे आज ही गाँव में पुष्पों की वर्षा हुई हो। दरअसल उस दिन 'फूल-सग्यान' का दिन था। जिसे उत्तराखण्ड के पहाड़ी इलाकों के लोग इस पहले दिन को बड़े उमंग और उत्साह के साथ मनाते हैं कि पूरे वर्ष इसी प्रकार सबके जीवन में खुशहाली बनी रहे, और हमारे अनाज के भंडार के 'भक्कार' आने वाली नई फ़सल में भर जायें।

इस त्योहार में बच्चों को ही फूल खेलने की अनुमति थी। बच्चे बाँस की बनी टोकरियों में पुष्प भर कर हर घर आँगन पुष्पों का छिड़काव कर कहते—फूल-फूल तुम्हारा भक्कार भर जाय हमारी टोकरी इसके ऐवज में उसे मुट्ठी-भर चावल मिलते। इतना ही नही जिस बच्चे का वह प्रथम त्योहार होता उसके लिए हर घर से पकवान की स्पेशल थाली, मुद्रा, व तोहफे भी मिला करते थे।

मैं जन्म से लेकर चार वर्ष तक इस 'चार मास के बाँस' में शामिल रहा।

स्वामी विवेकानन्द जी की बंगला कविता

नाचे उस पर श्यामा

(अनुवादक : 'निराला')

(स्वामी विवेकानन्द जी महाराज की सुविख्यात रचना 'नाचुक ताहाते श्यामा' का अनुवाद! स्वामी जी ने इसमें कोमल और कठोर भावों की वर्णना द्वारा कठोरता की सिद्ध दिखलाई है।)

फूले फूले सुरभि-व्याकुल अलि
गूंज रहे हैं चारों ओर;
जगतीतल में सकल देवता
भरते शशिमृदु-हँसी हिलोर।
गन्ध-मन्द गति मलय पवन है
खोल रही स्मृतियों के द्वार,
ललित-तरंग नदी-नद सरसी
चल-शतदल पर भ्रमर-विहार।

दूर गुहा में निर्झरिणी की
तान-तरंगों का गुंजार
स्वरमय किसलय-निलय विहंगों
के बजते सुहाग के तार।
तरुण-चितेरा अरुण बढ़ा कर
स्वर्ण-तूलिका-कर सुकुमार
पट-पृथिवी पर रखता है जब,
कितने वर्णों का आभार।

धरा-अवर धारण करते हैं,—
रंग के रागों के आकार
देख-देख भावुक-जन-मन में
जगते कितने भाव उदार!
गरज रहे हैं पेष, अशनि का
गूंजा घोर निनाद-प्रमाद
स्वर्ण-धरा-त्र्यापी संगर का
छाया विकट कटक-उन्माद।
अन्धकार उद्गीरण करता
अन्धकार घन-घोर अपार,
महाप्रलय की वायु सुनाती
श्वासों में अगणित हुंकार
इस पर चमक रही है रक्तिक
विद्युज्ज्वाला बारम्बार
फेनिल लहरें गरज चाहतीं
करना गिरी-शिखरों को पार
भीम घोष गम्भीर, अतल धँस
टलमल करती धारा अधीर,
अनल निकलता छेद भूमितल,
चूर हो रहे अचल शरीर।

हैं सुहावने मन्दिर कितने
नील-सलिल-सर वीचि-विलास
वलयित कुवलय, खेल खिलाती
मलय वनज-वन यौवन-हास।
बढ़ा रहा है अंगूरों का
हृदय रुधिर प्याले का प्यार,
फेन शुभ्र सिर उठे बुलबुले
मन्द-मन्द करते गुंजार।
बजती है श्रुति-पथ में वीणा,
तारों की कोमल झंकार
ताल-ताल पर चली बढ़ाती
ललिता वासना का संसार।
भावों में क्या जाने कितना
ब्रज का प्रकट प्रेम उच्छ्वास
आँसू ढलते विरह-ताप से
तप्त गोपिकाओं के श्वास।

नीरज-नील नयन, बिम्बाधर
जिस युवती के अति सुकुमार,
उमड़ रहा जिसकी आँखों पर
मृदु भावों का पारावार।
बढ़ा हाथ दोनों मिलने को
चली प्रकट प्रेम अभिसार,
प्राण-पखेरू, प्रेम-पींजरा,
बन्द बन्द है उसका द्वार!

भेरी झरर झरर, दमामे,
घोर नकारों की है चोप,
कड़-कड़-कड़ सन्-सन् बन्दूकें,
अररर अररर अररर तोप।
धूम-धूम है भीम रणस्थल,
शत-शत ज्वालामुखियाँ घोर
आग उगलतीं दहक-दहक-दह
कंपा रहीं भू-नभ के छोर।
फटते, लगते हैं छाती पर
घाती गोले सौ-सौ बार,
उड़ जाते हैं कितने हाथी,
कितने घोड़े और सवार।

थर-थर पृथ्वी थर्राती है,
लाखों घोड़े कस तैयार
करते, चढ़ते, बढ़ते-अड़ते
झुक पड़ते हैं वीर जुझार।
भेद धूम-तल अनल, प्रबल दल
चीर गोलियों की बौछार,
बस गोलों-ओलों में लाते
छीन तोप बेड़ी मार।
आगे-आगे फहराती है
ध्वजा वीरता की पहचान,
झरती धारा-रुधिर दण्ड में
अड़े पड़े पर वीर जवान।
साथ-साथ पैदल-दल चलता,
रण-मद-मतवाले सब वीर,
छुटी पताका, गिरा वीर जब,
लेता पकड़ अपर रणधीर।
पटे खेत अगणित लाशों से
कटे हजारों वीर जवान,
डटे लाश पर पैर जमाए,
हटे न वीर छोड़ मैदान।

देह चाहता है सुख-संगम
चित्त-विहंगम स्वर-मधु-धार
हँसी-हिंडोला झूल चाहता
मन जाना दुख-सागर-पार।
हिम-शशांक का किरण अंग-सुख
कहो, कौन जो देगा छोड़—
तपन-तप्त मध्याह्न-प्रखरता
से नाता जो लेगा जोड़?
चण्ड दिवाकर ही तो भरता
शशधर में कर-कोमल-प्राण,
किन्तु कलाधर को ही देता
सारा विश्व प्रेम-सम्मान!

सुख के हेतु सभी हैं पागल,
दुख से किस पामर का प्यार?
सुख में है दुख, गरल अमृत में,
देखो, बता रहा संसार
सुख-दुख का यह निरा हलाहल
भरा कण्ठ तक सदा अधीर,
रोते मानव, पर आशा का
नहीं छोड़ते चंचल चीर।
रुद्र रूप से सब डरते हैं,
देख-देख भरते हैं आह,
मृत्युरूपिणी मुक्तकुन्तला
माँ की नहीं किसी को चाह!

उष्णधार उद्गार रुधिर का
करती है जो बारम्बार
भीम भुजा की, बीन छीनती,
वह जंगी नंगी तलवार।
मृत्यु स्वरूपे माँ, है तू ही
सत्य-स्वरूपा, सत्याधार

काली, सुखवनमाली तेरी
माया छाया का संसार।

अये-कालिके, माँ करालिके,
शीघ्र मर्म का कर उच्छेद,
इस शरीर का प्रेम-भाव, यह
सुख सना, माया, कर भेद!
तुझे मुण्डमाला पहनाते,
फिर भय खाते तकते लोग,
'दयामयी' कह कह चिल्लाते,
माँ, दुनिया का देखा ढोंग!

प्राण काँपते अट्टहास सुन
दिगम्बरा का लख उल्लास,
अरे भयातुर असुर विजयिनी
कह रह जाता, खाता त्रास!
मुँह से कहता है,—देखेगा
पर माँ, जब आता है काल,
कहाँ भाग जाता भय खाकर
तेरा देख वदन विकराल!
माँ, तू मृत्यु घूमती रहती,
उत्कट व्याधि, रोग बलवान्,
भर विष-घड़े, पिलाती है तू
घूँट जहर के लेती प्राण
रे उन्माद! भुलाता है तू
अपने को, न फिराता दृष्टि
पीछे भय से, कहीं देख तू
भीमा महाप्रलय की सृष्टि।

दुख चाहता; बता; इसमें क्या
भरी नहीं है सुख की प्यास?
तेरी भक्ति और पूजा में
चलती स्वार्थ-सिद्धि की साँस।

छाग-कण्ठ की रुधिर धार से
सहम रहा तू, भय-संचार!
अरे कापुरुष, बना दया का,
तू आधार!—धन्य व्यवहार!

फोड़ो वीणा, प्रेम-सुधा का
पीना छोड़ो, तोड़ो, वीर,
दृढ़ आकर्षण है जिसमें उस
नारी-माया की जंजीर।
बढ़ जाओ तुम जलधि-ऊर्मि-से
गरज गरज गाओ निज गान;
आँसू पीकर जीना; जाए
देह, हथेली पर लो जान।

जागो वीर! सदा ही सिर पर
काट रहा है चक्कर काल,
छोड़ो अपने सपने, भय क्यों,
काटो, काटो यह भ्रम जाल।
दु:ख भार इस भव के ईश्वर,
जिनके मन्दिर का दृढ़ द्वार!
जलती हुई चिताओं में है
प्रेत-पिशाचों का आगार;
सदा घोर संग्राम छेड़ना
उनकी पूजा के उपचार,
वीर! डराये कभी न, आए
अगर पराजय सौ-सौ बार।
चूर-चूर हो स्वार्थ, साध, सब
मान, हृदय हो महाश्मशान,
नाचे उस पर श्यामा, घन रण
में लेकर निज भीम कृपाण।

कविता

अल्मोड़े में विवेकानन्द

सुमित्रानंदन पंत

(पंत जी की बहुत सुन्दर और स्मरणीय कविता है। इस कविता में माँ और बच्चे के भावुक संवाद के रूप में वे मनोरम स्मृतियाँ संचित हैं, जब स्वामी विवेकानन्द अपने विश्व भ्रमण से लौटकर स्वास्थ्य-लाभ के लिए कुछ समय अल्मोड़े में रुके थे।)

''माँ, अल्मोड़े में आए थे
जब राजर्षि विवेकानन्द,
तब मग में मखमल बिछवाया,
दीपावलि की विपुल अमन्द;
बिना पाँवड़े पथ में क्या वे
जननि, नहीं चल सकते हैं?
दीपावलि क्यों की? क्या वे माँ,
मन्द दृष्टि कुछ रखते हैं?''

''कृष्णे, स्वामीजी तो दुर्गम
मग में चलते हैं निर्भय,
दिव्य दृष्टि हैं, कितने ही पथ
पार कर चुके कंटकमय;
वह मखमल तो भक्ति भाव थे
फैले जनता के मन के,
स्वामीजी तो प्रभावान हैं,
वे प्रदीप थे पूजन के!''

जूठी चिलम

रामधारी सिंह 'दिनकर'

(परिव्राजक के रूप में भ्रमण करते समय वृन्दावन के पास स्वामीजी के जीवन की एक बड़ी मार्मिक घटना हुई थी, जिसे राष्ट्रकवि ने सुन्दर काव्य में निबद्ध किया है।)

शिष्यों को कर शोकमग्न हो गए ब्रह्म में लीन
रामकृष्ण जो परम धर्म की मूर्ति, स्नेह के स्वर थे।
कुछ विषाद, कुछ बेचैनी, घबराहट से हो दीन
निकल पड़े सब शिष्य, साधना के निमित्त घर-घर से॥

उन शिष्यों के मुकुट वीरवर सन्त विवेकानन्द
नगर, ग्राम, वन,विज़न, सभी स्थानों में घूम रहे थे।
प्रथम देश-दर्शन से पा प्रेरणा और आनन्द
देशभक्ति के भावों से पूरित हो झूम रहे थे।

चलते-चलते एक दिवस देखा कि खेत के पास
एक व्यक्ति ले चिलम मस्त होकर दम खींच रहा है;
फैलाता तम्बाकू का सब ओर महकता वास
घोंट रहा है धुआँ मग्न, कुछ आँखें मींच रहा है।

स्वामीजी ने कहा विरम कर—''भला करें भगवान।
जो सुख लूट रहे, वह क्या मुझको भी पाने दोगे?
तम्बाकू की ख़ुशबू से मेरी भी है पहचान।
बन्धु, एक दम इस सुलफ़े में मुझे लगाने दोगे?''

तम्बाकू पीनेवाले ने कहा—''हाय, महराज!
पाप कमाकर भला जगत् में हम किस भाँति जिएँगे?
आप साधु हैं, लेकिन मेहतर कहता हमें समाज।
किस प्रकार फिर आप हमारी जूठी चिलम पिएँगे?''

यह उत्तर सुनकर आगे बढ़ गए विवेकानन्द।
पर तुरन्त लौटे अन्तर में गाँस कहीं पर खाकर।
''मूढ़ अभी तक भी बाक़ी है जात-पाँत का द्वन्द्व?
तू कायथ ही रहा शिखा कटवाकर, सूत्र जलाकर?''

चिलम छीनकर पी ली स्वामीजी ने आँखें मूँद।
खड़ा देखता रहा ठगा-सा वह मेहतर बेचारा।
टपकी दृग से उमड़ मौन आनन्द-जलधि की बूँद।
स्वामीजी ने और ज़ोर से सुलफ़े में दम मारा॥

मूल असमिया : स्व. देवकांत बरुवा

सागर देखिछा ?

सागर देखिछा ? देखा नाई के तियाओ ? मयो देखा नाई,
शुनिछो तथापि,

नीलिम सलिल राशि, बाधाहीन उर्म्मिमाला, आछे दूर
दिगन्त बियपि।

मोरोइ अन्तरखनि सागरर दरे नीला बेदनारे,
देखा नाइ तुमि ?

उठिछे मरिछे जत बासनार लक्ष ढउ तोमारेइ
स्मृति-सीमा चुमि।

हिन्दी रूपान्तर : डॉ. रमानाथ त्रिपाठी

सागर देखा है ?

सागर देखा है ? नहीं देखा कभी भी ? मैंने भी नहीं देखा,
सुना है तथापि,

नीली सलिल राशि, बाधाहीन उर्म्मिमाला फैली है
दूर दिगन्त तक।

मेरा भी अन्तर है सागर की तरह नीला वेदना से
देखा नहीं तुमने ?

उठती हैं, बिखरती हैं वासनाओं की लक्ष तरंगें तुम्हारी ही
स्मृति-सीमा का स्पर्श कर।

गीत

चल रहा हूँ

डॉ. रामदरश मिश्र

चल रहा हूँ क्योंकि गति से पंथ का निर्माण होगा

ज़िंदगी का सिंधु फेनिल दूर जीवन का सहारा
प्राण के बहते स्वरों को मिल न पाता है किनारा
चाहता हूँ मैं ठहर क्षण भर किसी का प्यार ले लूँ
पर बहाती जा रही तूफान की गतिमान धारा
... ...
सिंधु के उस पार से कोई विकल आवाज़ आती
दूर कोलाहल-पुलिन से आह मानव की बुलाती

इसलिए इन उर्मियों के बंधनों में भी निरंतर
बढ़ रहा हूँ क्योंकि युग का जागरण गतिमान होगा

रेत यौवन का पड़ा उड़ रहे हैं रेणु के घन
लड़ रहे जलते पवन से प्राण के ये दीप उन्मन
चाहता हूँ मैं किसी के प्राण का विश्वास ले लूं
पर क्षितिज तक काँपता झंझा-शिखा पर मूक निर्जन
... ...
दूर उस मरु पार से कोई विकल आवाज आती
जिंदगी की साँझ मानव की कहीं हमको बुलाती

इसलिए हारा हुआ भी साँस का सम्बल सँभाले
जल रहा हूँ क्योंकि जग की रात का अवसान होगा

आंधियों में भी दिवा का दीप जलना ज़िंदगी है
पत्थरों को तोड़ निर्झर का निकलना ज़िंदगी है
चाहता हूँ मैं किसी छाया तले निश्वास ले लूँ
किंतु कोई कह रहा दिन रात चलना ज़िंदगी है

प्राण के उस पार शत-शत ज्योति रो-रो जागती है
और मेरे प्राण से संघर्ष की गति माँगती है

इसलिए बुझते हुए भी दीप दामन में छिपाए
जी रहा हूँ क्योंकि बंदी एक दिन तूफान होगा।

(साभार : पथ के गीत)

कविता

मुझे है चिंता!!!

पवन झा 'काश्यप कमल'

न कल की, न आज की
न तख़्त की, न ताज की
प्रेम की, न राग की
न ही, अपने भाग और अभाग की
धूप की, छाँव की
न प्रवेशोन्मुख हो रहे, दर्द के दबे पाँव की
रोटी की, दाल की
न अपनों के बदले हुए चाल की
मुझे है चिंता—
जीवन मात्र के मुख से, उड़ते हुए मलाल की
मुझे है चिंता!
स्कूल के फीस की,
न अर्थाभाव के टीस की
अजायब घर में स्पंदनहीन, दादी के लोरी की
न, अदद गोदान का स्वप्न लेकर, मर रहे होरी की
रामलीला मैदानी चक्रव्यूह में, फँसे बूढ़े अर्जुन की
न ही लुटी निर्भया के लिए, शोकाकुल आमजन की
भागीरथी के गाँव में, दूध पर भारी पड़ते पानी की
न भाईयों के बीच से, घायल भाईचारे की रवानगी की
मुझे है चिंता
बस और केवल बस
जवानों के देश से, गायब हो रहे जवानी की
मुझे है चिंता
मुझे है चिंता
स्वप्न की, न सपनों की चाह की
न भटके हुए, नैतिकता के राह की
प्रेम में, प्रेम से छल जाने की अदाओं की
न दिन दुगुनी रफ़्तार के, कुंठित मर्यादाओं की
बोस की, और चोरी हो चुके महात्मा के नाम की
न बापू की छाया में बापू बनकर
आशा को कलंकित करने वाले राम की,
आर्यावर्त-हिंदुस्तान-भारत की, आज के इंडिया की
न ही गीता-द्रौपदी-सीता की, गोकुल की टूटी हाण्डियों की
मुझे है चिंता
सिर्फ़ और सिर्फ़ 'भेड़गोत्र' बन
जन्म लें रही वर्णसंकर मनोवृत्तियों की
मुझे है चिंता।
तंत्र की, यंत्र की
हाँ, मुझे है चिंता
न ही सत्तालोलुपता से आए नए मंत्र की
परंतु
नहीं हूँ मैं हारा,
भले ही हूँ समय का मारा
फिर भी दिक्भ्रमित नहीं हूँ
किसी विद्वान की उदासीनता भी नहीं
मैं भीष्म की तरह तटस्थ भी नहीं
कि
महाभारत का रण देखूँ
वीर होते हुए भी कायरता का वरण करूँ
मैं हार नहीं मानूँगा

मगध के सत्तावीर के तूणीर में
पाए गए अर्जुन के तीर से,
न ही लालटेन को रौशन कर

झोंपड़ी से सत्ता तक पहुँचने वाले वीर से,
मैं हारा नहीं हूँ
देवासन से विरक्त,
कुर्सीयोन्मुख, खिलाने वाले कमल के तात से
कट जाते हैं कुर्सी चढ़ाकर जो
आम जन के उस हाथ से
मैं हारा नहीं हूँ
बस थोड़ा-सा चिंतित हूँ

मुझे है चिंता
हमारे कर्मफल पर रो रहे पूर्वजों की आत्मा की,
कुचक्रों से जल-जल हो रहे सत्ता परमात्मा की
मुझे है चिंता
कल की, आज की और भारत के भाल की
जन की हत्या करने वाले आज के तंत्र की
खुद के अवशेष से निकले मानवता के नए मंत्र की
मुझे है चिंता!!!
मुझे है चिंता!!!

शुभा सक्सेना

क्रांति

जब आत्मा रौंदी जा रही हो
तब मन बाग़ी हो जाता है
आत्मा पर लगे घावों से—
आख़िर एक दिन,
शान्ति का बुत
भुरभुरा कर बिखर जाता है।
तब आँखों से आँसू नहीं
लहू बहता है।
धीरे-धीरे मिट्टी में रिसता लहू
लावा बनता जाता है,
फिर—
एक दिन
जब ज्वालामुखी फटता है,
तब विद्रोह और विध्वंस का
वह ताण्डव होता है,
कि कुछ शेष नहीं बचता
न प्रेम, न कोई रिश्ता
न भय, न विवशता।
उग आते हैं असंख्य हाथ
धरती का सीना फाड़ कर।
तलवारें तिलमिला उठतीं हैं तब।
बह उठती है—
नफ़रत की एक नदी,
छोड़ जाती है जो निशान
सदियों तक के लिए।

बारिश

अब की बारिश में कुछ नया किया जाए
मुस्कुराएँ औ' आँसुओं को धो दिया जाए।

भीगी-हरी घास पर लेटे रहें रात भर 'औ
हाथ बढ़ा बादलों का छू लिया जाए।

उँगलियों से बादलों पर उकेरें कोई चेहरा
और उसे यूँ ही कोई नाम दे दिया जाए।

शाखों पर ठहरे पानी को चेहरे पर झाड़ें
और भीगे फूलों से मय को पिया जाए।

क्यूं ना सियाह-आसमाँ की तनहाई में
सपनों का एक इंद्रधनुष टांक दिया जाए।

तरसता बचपन

सुमित भोला

चिलचिलाती धूप में घूमता यहाँ–वहाँ
ना गर्म कपड़े कड़कती सर्दी में ढकने को तन
आती–जाती गाड़ियों को ताकता
मैंने देखा सड़कों पर तरसता बचपन।

ना मिला उन्हें खेलने को कोई खिलौना
आपस में ही ठिठोली कर बहलाते अपना मन
रखता अपने सिर पर डब्बा जैसे ताज
खुद अपना ही मजाक बनाता तरसता बचपन।

राहों की खाक में सोना ढूँढते
बैठ जाते होकर नाकाम करके हर जतन
अमीरों के बच्चों को हँसता गाता देख
अपना सा मुँह लेकर रह जाता तरसता बचपन।

नकार देते माँ बाप उनकी हर माँग
सूखे रह जाते रेगिस्तान, बिना सावन
खुद अपने ही हाथों की लकीरों से जूझता
सावन की हर बूँद को तरसता, तरसता बचपन।

विद्या ग्रहण करने की आयु में सीखते
भीख मांग व्यतीत करना अपना जीवन,
क्या यही है वो भारत जिसका देखा था गांधी ने स्वप्न
अपने ही देश में अपनी पहचान ढूँढ़ता तरसता बचपन।

संघर्ष

ललिता बजाज

यह जीवन भी क्या जीवन है
होता जिसमें संघर्ष नहीं,
संघर्ष बिना इस जीवन में
हो सकता है उत्कर्ष नहीं।
होती है बिना कसौटी के कब
सोने की पहचान यहाँ,
संघर्ष कसौटी जीवन की
बिन इसके पहचान कहाँ!

राजभाषा प्रयोग की दृष्टि से क्षेत्र वर्गीकरण

हिंदी बोले जाने व लिखे जाने के प्राधान्य के आधार पर तीन संघ व राज्य क्षेत्र इस प्रकार हैं—

'क' क्षेत्र : बिहार, छत्तीसगढ़, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, झारखंड, मध्य प्रदेश, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड राज्य, राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली राज्य और अंडमान तथा निकोबार द्वीप समूह संघ राज्य क्षेत्र

'ख' क्षेत्र : गुजरात, महाराष्ट्र और पंजाब राज्य तथा चंडीगढ़, दमन और द्वीव तथा दादर व नगर हवेली संघ राज्य क्षेत्र

'ग' क्षेत्र : 'क' और 'ख' क्षेत्र में शामिल नहीं किए गए अन्य सभी राज्य

हिंदी दिवस–2013 के अवसर पर भारत के राष्ट्रपति, श्री प्रणव मुखर्जी का अभिभाषण

विज्ञान भवन, नई दिल्ली : 14.09.2013

देवियो और सज्जनो,

1. हिंदी दिवस के अवसर पर आप सबको हार्दिक बधाई और शुभकामनाएँ। इस समारोह में आप सबके बीच उपस्थित होकर मुझे बहुत खुशी हो रही है।

2. भारत विविधताओं का देश है। यहाँ अनेक भाषाएँ और बोलियाँ बोली जाती हैं। हिंदी आम-आदमी की भाषा के रूप में देश की एकता का सूत्र है। महात्मा गांधी, लोकमान्य तिलक, सुभाषचंद्र बोस, राजगोपालाचारी, पंडित जवाहरलाल नेहरू, मौलाना आज़ाद, सरदार वल्लभ भाई पटेल जैसे महान राष्ट्र निर्माताओं ने हिंदी के माध्यम से आजादी की लड़ाई लड़ी थी। महान स्वतंत्रता सेनानी, आचार्य केशवचंद्र सेन ने सन् अठारह सौ पचहत्तर में ही 'सुलभ समाचार' में लिखा था—''अपनी बात को इस देश में आख़िरी व्यक्ति तक पहुँचाने का सरलतम मार्ग है, हिंदी।...क्योंकि हिंदी भारत के जन-सामान्य की आत्मा में बसती है।''

देवियो और सज्जनो,

3. देश के विकास के लिए सरकार द्वारा अनेक कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। सामाजिक कल्याण और विकास के कार्यक्रमों की सफलता भाषा पर निर्भर करती है। सरकार की योजनाओं का लाभ आम आदमी तक पहुंचाने में हिंदी का विशेष योगदान है। इसलिए, हमें हिंदी तथा क्षेत्रीय भाषाओं को बढ़ावा देना चाहिए।

4. किसी भी भाषा का विकास उसके साहित्य पर निर्भर करता है। इसके लिए ज़रूरी है कि हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषाओं में उच्च कोटि के साहित्य का सृजन किया जाए। तकनीकी विषयों की पुस्तकों को भी सरल एवं सुगम भाषा में उपलब्ध कराना होगा तथा अंग्रेजी में प्रचलित इन पुस्तकों का हिंदी तथा भारतीय भाषाओं में अनुवाद कराना होगा। इस दिशा में हमारे विश्वविद्यालय अहम् भूमिका निभा सकते हैं। अभी कुछ ही समय पूर्व, मुझे मध्य प्रदेश में अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय की आधारशिला रखने का सुअवसर मिला था। मुझे विश्वास है कि हमारे ऐसे शिक्षा संस्थान हिंदी में साहित्य एवं शोध को बढ़ावा देंगे।

देवियो और सज्जनो,

5. आज का युग सूचना तकनीक का युग है। इंटरनेट की सहायता से सूचनाओं का अदान-प्रदान तेजी से हो रहा है। हमें, इंटरनेट में हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं के प्रयोग को बढ़ाने के लिए एकजुट होकर कार्य करना होगा। मुझे बताया गया है कि राजभाषा विभाग ने इंटरनेट पर हिंदी सीखने तथा हिंदी अनुवाद की सेवाएं उपलब्ध कराई हैं। मुझे खुशी है कि अब सरकारी विभागों की वेबसाइटें हिंदी में भी उपलब्ध हैं। मुझे उम्मीद है कि भविष्य में इंटरनेट के माध्यम से हिंदी को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर बढ़ावा देने के लिए हम और अधिक प्रयास करेंगे।

6. भारत ने अंतरिक्ष विज्ञान, मेडिकल साइंस, इंजीनियरी आदि में अंतरराष्ट्रीय स्तर पर प्रसिद्धि प्राप्त की है। दुनिया के छोटे-बड़े अनेक देश अब भारत से इन क्षेत्रों में सहयोग ले रहे हैं। परंतु इन उपलब्धियों का अधिक लाभ हमारे देश के दूरगामी क्षेत्रों तक पहुँचाने की जरूरत है। इससे अशिक्षा तथा अंधविश्वास को मिटाने में और विकास को दूरदराज के इलाकों तक ले जाने में मदद मिलेगी। हिंदी और अन्य क्षेत्रीय भाषाओं का प्रयोग करते हुए यह कार्य आसानी से हो सकता है।

देवियो और सज्जनो,

7. भारत सरकार द्वारा हिंदी को विश्व-भाषा के रूप में स्थापित करने का प्रयास भी किया जा रहा है। वर्धा में महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय विश्वविद्यालय तथा मॉरीशस में विश्व हिंदी सचिवालय की स्थापना ऐसे ही कुछ प्रयास हैं। विदेशों में बसे भारतीय मूल के प्रवासियों द्वारा भी हिंदी को विश्व-भाषा बनाने की दिशा में सहयोग दिया जा रहा है। हम सभी का यह प्रयास होना चाहिए कि हिंदी को संयुक्त राष्ट्र की मान्य भाषा का दर्जा जल्दी-से-जल्दी प्राप्त हो।

8. अंत में, मैं सभी पुरस्कार विजेताओं को उनकी उपलब्धियों के लिए बधाई देता हूँ। मुझे उम्मीद है कि ये पुरस्कार हमें हिंदी में अधिक-से-अधिक कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करेंगे। हिंदी दिवस के इस आयोजन के लिए मैं, राजभाषा विभाग को बधाई देता हूं।

9. मैं, कवि-गुरु रवीन्द्रनाथ ठाकुर के शब्दों को दोहराते हुए अपनी बात समाप्त करना चाहूँगा। गुरुदेव ने कहा था, ''भारत की सब प्रांतीय बोलियाँ अपने घर में रानी बनकर रहें...और आधुनिक भाषाओं के हार की मध्यमणि हिंदी भारत-भारती होकर विराजती रहे।''

धन्यवाद,

जय हिंद!

(साभार : राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार)

संगीत नाटक अकादेमी में विकास के पथ पर राजभाषा

तेजस्वरूप त्रिवेदी

राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार से प्राप्त वार्षिक कार्यक्रम एवं संस्कृति मंत्रालय भारत सरकार से प्राप्त निर्देशों के अनुसरण में संगीत नाटक अकादेमी में 14 सितम्बर 2013 को हिन्दी दिवस का आयोजन किया गया। अकादेमी की कार्यकारी सचिव श्रीमती हैलेन आचार्य ने इस अवसर पर अपनी अपील पढ़ी। श्रीमती आचार्य ने अपील में कहा कि हिन्दी एक सक्षम समर्थ और उदार भाषा है। संतों ने इसी भाषा के माध्यम से तत्कालीन समाज में एकता के बीज रोपे, यहाँ तक कि गार्सा-द-तासी, जार्ज गियर्सन, गिलक्राइस्ट, फॉदर कामिल बुल्के, वारान्निकोव जैसे विदेशी विद्वानों ने भी हिन्दी में विपुल साहित्य का सृजन किया। उन्होंने कहा कि आज चीनी भाषा के बाद विश्व में सबसे ज्यादा बोली जाने वाली भाषा हिन्दी ही है। भारतीय संस्कृति की प्रबल संवाहिका होने के नाते हिन्दी दुनिया भर के लोगों को आकर्षित करती है। भारतीय संविधान का प्रणयन करने वाले मनीर्षियों ने इस मर्म को गहराई से समझा इसलिए उन्होंने 14 सितम्बर 1949 को हिन्दी को संघ की राजभाषा का दर्जा प्रदान किया। श्रीमती आचार्य ने सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों से अपील की कि वे अपना अधिकाधिक कार्य हिन्दी में करने की शपथ लें। इस अवसर पर श्रीमती आचार्य ने गृहमंत्री एवं संस्कृति मंत्री के सन्देशों का भी वाचन किया। इस अवसर पर एक कार्यशाला का आयोजन किया गया। 'राजभाषा हिन्दी की विकास यात्रा' शीर्षीय विषय पर आयोजित कार्यशाला में अतिथि व्याख्याता, संस्कृति मंत्रालय की हिन्दी सलाहकार समिति के सदस्य, डॉ. अशोक कुमार सचदेव को आमंत्रित किया गया। डॉ. सचदेव ने राजभाषा नीति का क्रमिक विकास बताते हुए संवैधनिक प्रावधान, राष्ट्रपति के आदेश, राजभाषा अधिनियम 1963 सहित संघ की राजभाषा नीति को विस्तारपूर्वक समझाया। अकादेमी की सहायक निदेशक (राजभाषा) श्रीमती सुशील जैन ने स्वागत भाषण दिया। हिन्दी अनुवादक श्री तेजस्वरूप त्रिवेदी ने आभार प्रदर्शन किया।

संगीत नाटक अकादेमी में कार्यरत अधिकारियों एवं कर्मचारियों में हिन्दी के प्रति जागरूकता एवं इसके प्रयोग में गति लाने एवं प्रतिस्पर्धा की भावना को बढ़ाने के उद्देश्य से विगत वर्षों की भांति इस वर्ष भी 30 सितम्बर से 7 अक्तूबर 2013 तक 'हिन्दी पर्व' का आयोजन किया गया। इस दौरान सात प्रतियोगिताएँ हिन्दी निबन्ध एवं संस्कृति ज्ञान प्रतियोगिता, श्रुतलेखन एवं सामान्य हिन्दी ज्ञान प्रतियोगिता, हिन्दी निबंध प्रतियोगिता, हिन्दी टंकण प्रतियोगिता, प्रश्न मंच प्रतियोगिता, काव्य पाठ प्रतियोगिता का आयोजन हुआ।

प्रश्न मंच प्रतियोगिता के निर्णायक मण्डल में एन.आई.सी. के वरिष्ठ तकनीकी निदेशक श्री केवल कृष्ण एवं पूर्व राजभाषा निदेशक श्री गोरखनाथ को आमंत्रित किया गया। काव्य पाठ प्रतियोगिता में निर्णायक मण्डल में राजकमल समूह के संपादक डॉ. सुशील सिद्धार्थ व नागरिक उड्डयन मंत्रालय की राजभाषा निदेशक श्रीमती मोहिनी हिंगोरानी को आमंत्रित किया गया। काव्य पाठ प्रतियोगिता के उपरांत काव्य गोष्ठी भी हुई जिसमें अधिकारियों एवं कर्मचारियों ने काव्यपाठ किया।

अकादेमी में 30 सितम्बर से 7 अक्तूबर 2013 तक आयोजित हिन्दी पर्व प्रतियोगिताओं में सफल प्रतिभागियों को पुरस्कृत करने के लिए 1 जनवरी 2014 को पुरस्कार वितरण समारोह का आयोजन किया गया। कार्यकारी सचिव श्रीमती हैलेन आचार्य ने विजयी प्रतिभागियों को नकद पुरस्कार एवं प्रमाण पत्र प्रदान किये। इस अवसर पर श्रीमती आचार्य ने कहा कि प्रतियोगिताएँ हमें अपनी क्षमता का मूल्यांकन करने का अवसर प्रदान करती हैं और आगे बढ़ने की प्रेरणा देती हैं। प्रतियोगिताओं में शामिल सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों ने अपनी क्षमताओं का अच्छा प्रदर्शन किया, यही उत्साह एवं क्षमता दैनिक सरकारी कामकाज में भी झलके तभी प्रतियोगिताओं की सार्थकता और बढ़ेगी। सहायक निदेशक श्रीमती सुशील जैन ने कार्यक्रम का संचालन किया व हिन्दी अनुवादक श्री तेजस्वरूप त्रिवेदी ने धन्यवाद ज्ञापन किया।

संगीत नाटक अकादेमी द्वारा जारी निर्देशों की अनुपालना में इसके अधीनस्थ कार्यालयों में भी हिन्दी दिवस उत्साह के साथ मनाया गया। इस क्रम में मणिपुर स्थित जवाहरलाल नेहरू मणिपुर डांस एकेडमी इम्फाल ने 14 सितंबर 2013 के अपने सभा भवन में हिन्दी दिवस मनाया। इस अवसर पर जवाहर लाल नेहरू मणिपुर डांस एकेडमी इम्फाल के उपाध्यक्ष प्रोफेसर एन तोम्बी सिंह, निदेशक श्री एल उपेन्द्र शर्मा एवं प्रधान गुरू श्री ए तोम्बी नों देवी उपस्थित रहे। इस आयोजन में माननीय गृहमंत्री भारत सरकार, माननीया संस्कृति मंत्री भारत सरकार एवं संगीत नाटक अकादेमी की कार्यकारी सचिव श्रीमती हैलेन आचार्य के सन्देश का वाचन हुआ व इसकी प्रतियाँ भी कार्मिकों में परिचालित की गई। एकेडमी में कार्मिकों एवं छात्रों के लिए हिन्दी कविता पाठ तथा तत्कालीन भाषण प्रतियोगिता का आयोजन हुआ। विजयी प्रतिभागियों को 21 सितम्बर 2013 को आयोजित पुरस्कार वितरण समारोह में निदेशक एल उपेन्द्र शर्मा एवं प्रधान गुरू श्रीमती ए. तोम्बीनो देवी ने नकद पुरस्कार दिये।

अकादेमी के अधीनस्थ कार्यालय कथक केन्द्र, नई दिल्ली द्वारा 14 सितम्बर 2013 को केन्द्र के बहावलपुर हाउस, भगवानदास रोड, नई दिल्ली स्थित परिसर में हिन्दी दिवस मनाया गया जिसमें केन्द्र के विद्यार्थियों गुरूजनों एवं कर्मचारियों ने भाग लिया। कार्यक्रम के आरंभ में कार्यकारी सचिव श्रीमती हैलेन आचार्य की अपील का वाचन किया गया, माननीय संस्कृतिक मंत्री महोदय के संदेश का भी वाचन किया गया। आयोजन के दौरान विद्यार्थियों, गुरूजनों तथा कर्मचारियों ने अपनी कविताएँ, लेख, और कहानियाँ प्रस्तुत की। इसके साथ ही गुणीजनों द्वारा हिन्दी भाषा के महत्त्व से जुड़े अपने निजी अनुभवों को व्यक्त किया गया जो कई लोगों के लिए प्रेरणा स्त्रोत बनें।

कार्मिकों में हिन्दी में अधिकाधिक कार्य करने की अभिरूचि विकसित करने के उद्देश्य से अप्रैल 2013 से मार्च 2014 के दौरान 5 कार्यशालाओं का आयोजन किया गया। 22 जून 2013 को 'हिन्दी शब्द संसाधन' विषय पर आयोजित कार्यशाला में केन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान, राजभाषा विभाग के सहायक निदेशक श्री राम सकल सिंह ने व्याख्यान दिया व उपस्थित कार्मिकों से कम्प्यूटर पर प्रायोगिक कार्य भी कराया। 16 सितम्बर 2013 को 'राजभाषा हिन्दी की विकास यात्रा' पर एक कार्यशाला का आयोजन हुआ जिसमें संस्कृति मंत्रालय की हिन्दी सलाहकार समिति के सदस्य व पूर्व राजभाषा निदेशक डा. अशोक कुमार सचदेव ने व्याख्यान दिया। 27 दिसम्बर 2013 को कार्यालयी अनुवाद : समस्याएँ और समाधान' विषय पर एक कार्यशाला का आयोजन हुआ जिससे दिल्ली विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के एसोसियेट प्रोफेसर एवं भारतीय अनुवाद परिषद के महासचिव डॉ. पूरनचंद टण्डन ने व्याख्यान दिया!

संगीत नाटक अकादेमी में नियमित तौर पर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठकें आयोजित होती हैं। इन बैठकों की अध्यक्षता अकादेमी के सचिव द्वारा की जाती है। अप्रैल 2013 से सितम्बर 2013 की समयावधि में राजभाषा कार्यान्वायन समिति की दो बैठके 5 जुलाई 2013 एवं 27 दिसंबर 2013 को आयोजित हुई।

संगीत नाटक अकादेमी में हिन्दी के प्रकाशन प्रगति के पथ पर है। इस समयावधि में त्रैमासिक हिन्दी पत्रिका 'संगना' के तीन अंक (संयुक्तांक 9 एवं 10 जनवरी-मार्च/अप्रैल-जून 2013, अंक 11 जुलाई-सितंबर 2013, अंक 12 अक्टूबर-दिसंबर 2013) प्रकाशित हुए। 'वाद्य दर्शन' पुस्तिका का भी प्रकाशन हुआ। इसका अंग्रेजी से हिन्दी अनुवाद सहायक निदेशक (राजभाषा) श्रीमती सुशील जैन ने किया।

इस समयावधि में दो कार्मिकों को हिन्दी शिक्षण योजना के अन्तर्गत तीन माह के प्रशिक्षण के लिए केन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान में भेजा गया। दोनों कार्मिकों ने अधिकतम अंक प्राप्त करते हुए प्रशिक्षण इसी समयावधि में पूरा किया।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, राजभाषा विभाग द्वारा आयोजित बैठकों में भी अकादेमी की सहभागिता रहती है। नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति द्वारा आयोजित काव्य पाठ प्रतियोगिता में अकादेमी की सहायक प्रलेखन अधिकारी श्रीमती प्रकाश टाटा आनंद ने सहभागिता की व नकद पुरस्कार व प्रमाण पत्र प्राप्त किया।

इस प्रकार राजभाषा अनुभाग राजभाषा नीति के कार्यान्वयन, अनुवाद एवं प्रकाशन की दिशा में सतत अग्रसर है। अकादेमी के राजभाषा परिवार द्वारा 'राजभाषा रूपाम्बरा' के संयुक्तांक (तृतीय व चतुर्थ अंक) का प्रकाशन इसी सतत विकास का ही परिचायक है।

भारत की चुनाव व्यवस्था : समग्र मूल्यांकन

राकेश कुमार पाण्डेय

(अकादेमी में हिन्दी पर्व 2013 के दौरान आयोजित हिन्दी निबन्ध एवं संस्कृति ज्ञान प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार प्राप्त निबन्ध)

विश्व के मानचित्र पर यदि किसी देश को उसके भौगोलिक, सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक विविधताओं से युक्त अस्तित्व का आँकलन करते हुए, हम उसके अति प्राचीन राजनैतिक विविधताओं को स्वीकार करते हुए यदि संपूर्ण देशों के बीच तुलनात्मक अध्ययनकरें तो हम नि:संदेह यह पाएँगे कि भारत वर्ष ही एकमात्र ऐसा देश है जिसमें उपरोक्त समस्त विविधताएँ समग्र हैं।

प्राचीन काल से ही हमारा देश विविधताओं में समग्र रहा है विशेषकर समस्त राज्य एवं राजधर्म भी इनसे अछूता नहीं रह सका है। भारत में वर्ण व्यवस्था ने समस्त देश के राजकाज को भी प्रभावित किया है। प्राचीन काल से ही राज्य के प्रशासनिक पक्ष को सम्हालने की जिम्मेदारी एक विशेष वर्ण के लोगों की रही जो कि पीढ़ी-दर-पीढ़ी प्रभावी होती रही है। वर्ण व्यवस्था के अंदर क्षत्रियों को ही राज काज के उपर्युक्त माना गया और इस प्रकार संपूर्ण देश राज-रजवाड़ों में बंटा हुआ था और उनके राज प्रमुख अर्थात राजा को सुनने का अधिकार राज्य की जनता को न होकर राजवंशियों को होता रहा जिससे राजतंत्र स्वत: ही विकसित होता गया, इसमें जनता का अस्तित्व प्रजा वाला ही रह गया। राजा की इच्छा ही सर्वोपरि होती रही, जनता परिप्रेक्ष्य में रह गई। जनता अर्थात् प्रजा अपने अधिकारों के प्रति राजा से किसी प्रकार की मांग नहीं कर सकती थी, राजा एवं उसकी इच्छा ही सर्वोपरि थी। इस राजतांत्रिक/राजशाही प्रणाली के नुकसान अधिक थे और फायदे कम थे जैसे राजा अपने दरबारियों एवं उसके पक्ष में रहने वाले लोगों को लाभ पहुँचाता था और एवं आम व्यक्ति इन लोगों की रहमोंकरम पर जीवित था, कई राज्यों में प्रजा का अस्तित्व जानवरों से भी बद्तर हुआ करता था।

समय-काल में क्रमश: परिवर्तन हुआ भारत में दूसरे देशों से आक्रमणकारियों का धन कमाने व लूटने के लिए आगमन होने लगा और यही लोग यहां की राजशाही पर धीरे-धीरे काबिज हो गए, इसके परिणामस्वरूप हूणो, मुगलों एवं अंग्रेज शासकों का उदय हुआ। यद्यपि इन विदेशियों में से केवल मुगलों ने ही भारत पर अपना राजशाही रूप में शासन किया, लेकिन अंग्रेजो ने आगमन व्यापार के उद्देश्य से किया फिर धीमे-धीमे प्रशासनिक व्यवस्था अपने हाथ में ले ली यद्यपि अंग्रेजों ने भारत के राज्यों पर स्वयं गद्दीनशीन होने का प्रयास नहीं किया परंतु राज्यों का प्रशासन अपने गर्वनरों को नियुक्त कर के चलाया जिससे 200 से अधिक वर्षो तक भारत, अंग्रेजी व्यवस्था के अंतर्गत चलता रहा, इस व्यवस्था के नुकसान तो बहुत हुए परंतु लाभ यह रहा है कि भारतीयों को राजा एवं प्रशासन के मध्य अंतर समझ आने लगा और इस समझ और हमारे समझदार नेताओं के प्रयासों के द्वारा भारतवर्ष 1947 ई. में अंग्रेजो के चंगुल से मुक्त हुआ और इसके उपरांत ही भारत में स्वतंत्र रूप से सरकार बनाने हेतु व्यवस्था बनानें का प्रयास प्रारंभ हुआ।

विश्व के पटल पर भारत को ही सबसे बड़ा लोक तांत्रिक देश माना गया है। यह हमारी अंग्रेजो से स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद की सबसे बड़ी उपलब्धि रही है। लोकतंत्र के सामने सबसे बड़ी चुनौती एक पारदर्शी चुनाव व्यवस्था थी। जो जनता के प्रतिनिधियों का उसका प्रतिनिधित्व करने के लिए चुनाव कर सके। इसके लिए सर्वप्रथम चुनाव आयोग का गठन किया गया, जिसका उद्देश्य शांतिपूर्ण ढंग से चुनाव करना था।

भारत की चुनाव व्यवस्था : केंद्र एवं राज्यों के चुनाव

चुनाव आयोग द्वारा केंद्र एवं राज्यों में सरकार बनाने के लिए चुनावों को करवाना था। चूकि भारत को एक लोकतांत्रिक देश का संवैधानिक स्थान प्राप्त हो चुका था इसके लिए यह आवश्यक था कि इन चुनाव में भाग लेने वाले व्यक्ति भी उसी जनता के मध्य से हों और भारतीय नागरिकता के हों। अत: इसको परिभाषित करने के लिए चुनाव आयोग ने व्यवस्था इस प्रकार बनाई :

i) लोकसभा चुनाव

ii) विधानसभा चुनाव

(i) लोकसभा चुनाव

इन चुनावों द्वारा लोकसभा सदस्यों को चुना जाता है जो केंद्र की सरकार बनानें में प्रभावी होते हैं। इस चुनाव की सबसे छोटी इकाई समस्त राज्यों एवं केंद्रशासित प्रदेशों के जिले होते हैं। एक जिले में जनसंख्या के आधार पर 1 या 2 सीटे ही लोकसभा सदस्यों के लिए नियत होती हैं। इन सीटों के लिए विभिन्न पार्टियों के उम्मीदवार आपस में चुनाव लड़ते हैं और उनमें से जो विजयी होता है वह लोकसभा सदस्य के रूप में अपने क्षेत्र से निकल कर, क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करने हेतु लोकसभा में पहुँचता है।

(ii) विधानसभा चुनाव

इन चुनावों द्वारा विधानसभा सदस्यों का चुनाव होता है जो कि राज्य में सरकार बनाने में प्रभावी होते हैं। इस चुनाव की सबसे छोटी इकाई एक जिले के ब्लाक स्तर होते हैं एवं जिले की जनसंख्या के आधार पर संभवत एक जिले में 4-7 सीटे विधान सभा सदस्यों की होती हैं। इनकी चुनाव प्रणाली भी चुनाव आयोग द्वारा ही बनाई गई है। अंतर इतना है कि यह सदस्य किसी राज्य की सरकार बनाने हेतु ही प्रभावी होते हैं। यद्यपि सरकार बनाने हेतु किसी विशेष पार्टी के सदस्यों को दो तिहाई मत होना आवश्यक है। यह सदस्य भी विधानसभा में अपने क्षेत्र के विकास के लिए आवाज उठाते हैं या किसी भी अध्यादेश को पास करानें में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

अत: भारतवर्ष में चुनाव आयोग द्वारा केंद्र एवं राज्य में सरकार बनाने के लिए मुख्यत: उपर्युक्त यह दो व्यवस्थाएँ हैं। परंतु इन व्यवस्थाओं के भी अपने गुण-दोष हैं जिनका मूल्याँकन करना अति आवश्यक है—

भारत एक लोकतांत्रिक देश है अत: एक लोकतंत्र होने के कारण यहाँ के किसी भी चुनाव में पारदर्शिता होना अत्यंत आवश्यक है। चुनाव आयोग द्वारा पारदर्शिता रखनें का पूरा प्रसास किया गया है इसके पश्चात भी बहुत सारी कमियाँ इस प्रणाली में हैं। जैसे—

1) भारतवर्ष बहुदलीय राजनैतिक व्यवस्था (Multi-party) है जिसके कारण एक क्षेत्र की सदस्यता हेतु प्रतिनिधियों की संख्या बहुत होती है और इससे चुनाव खर्च बहुत बढ़ता है।

२) मुख्यत: जनता ही प्रतिनिधियों का चुनाव करती है ऐसे समय में जनता की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। देहाती क्षेत्रों में धन एवं बल के आधार पर आज भी व्यक्ति/पार्टी विशेष अपने पक्ष में वोट डलवाते हैं। चूँकि आज भी हिन्दुस्तान गाँव में बसता है इसलिए धन-बल का फार्मूला प्रभावी है। इसे रोकने-के-लिए आयोग को प्रयाग करने पड़ेंगे।

3) जातीय आधार पर वोटों का बटवारा भी लोकतांत्रिक चुनावी प्रणाली का एक कमजोर पक्ष है। आयोग को इस दिशा में विशेष कदम उठाने होंगे।

4) चुनावों के निकट आने पर विशेष पार्टियों द्वारा जनता को अपने पक्ष में करने हेतु विशेष योजनाओं के अंतर्गत परोक्ष या अपरोक्ष रूप से उपहार जैसे लैपटाप इत्यादि का प्रयास होता रहा है। इस दिशा में भी आयोग की समुचित ध्यान देना चाहिए।

5) चुनाव आयोग द्वारा जनता के प्रतिनिधियों के रूप में नामित लड़ने हेतु खड़े होने वाले सदस्यों का पूरा रिकार्ड रखना चाहिए। स्वच्छ छवि के व्यक्तियों को ही चुनाव में लड़ने हेतु अनुमति होनी चाहिए।

6) आयोग द्वारा जन-प्रतिनिधियों को मिलने व अनावश्यक जन सुविधाओं पर रोक लगानी चाहिएं

क्योंकि इसके परिणामस्वरूप चुनकर आए एम पी एवं एम एल ए एवं जनता के मध्य, चुनाव के बाद कभी-कभी राजा एवं प्रजा वाला संबंध दिखायी देने लगता है।

निष्कर्ष :

भारतवर्ष में चुनाव आयोग द्वारा निर्धारित प्रणाली में बहुत बदलाव की आवश्यकता होने लगी हैं। इसके लक्षण कुछ इस प्रकार हैं/या इन उपायों को प्रभाव में लानें से देश की चुनावी व्यवस्था ठीक हो सकेगी और यह देश के सर्वांगीण विकास में भी सहायक होंगी जैसे—

1. विकसित देशों की तर्ज पर द्विपार्टी चुनाव की स्थापना हो। इन दोनों पार्टियों का स्तर राष्ट्रीय हो। इससे चुनाव खर्च कम होगा।
2. आपराधिक रिकार्ड वाले प्रतिनिधियों को चुनाव लड़ने ही न दिया जाय।
3. जनप्रतिनिधि की चुनावों से पहले आर्थिक स्थिति को छानवीन कर ही उसे टिकट देने का प्रावधान हो इससे भ्रष्टाचार पर लगाम लगेगी।
4. अन्य विकसित देशों की तरह *''नोटा''* का प्रयोग हो जिससे क्षेत्र के प्रतिनिधि-वहाँ की जनता की योग्य न लगे तो उन्हें वोटिंग मशीन पर No का बटन दबानें का अधिकार प्रदान किया जाय। यदि इन सभी महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर आयोग द्वारा ध्यान दिया जाय एवं न्यायपालिका की सहमति प्राप्त कर इसे कानून बना कर, चुनाव लड़ाने की आयोग द्वारा व्यवस्था की जाए तो वह दिन दूर नहीं जब हमारा भारतवर्ष भी विकसित देशों की कतार में शामिल होकर विश्व में अपना परचम फैला रहा होगा।

कविता

मेरी अभिलाषा

हरसिंह मनराल

(अकादेमी में हिन्दी पर्व 2013 के दौरान आयोजित काव्य पाठ प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार प्राप्त काव्य रचना)

रंग भी बनाती चटकीला गुलाबी
बनकर स्याही कलम भी बन जाती
कागज के द्वार से बनकर किताब
सहेज लेती उसमें जगत का इतिहास
काश मैं भी होती बाँस।

जो मैं बाँसुरी बनती सुरीली
पिरो लेती सुरों को छू अधर
मोह के मन साज के संग
फिर सरगम के हो लेती साथ
काश मैं भी होती बाँस।

बिखरते तिनकों में जब कदम बढ़ाती
कलाकार के हाथों कृति उभरती जाती
टूटे पुष्पों का लिए मैं गुलदस्ता बन जाती
एकानेक वस्तु रूप में रहूँ मानव के पास
काश मैं भी होती बाँस।

मानव जीवन के अंतिम पड़ाव में
सहारा बनती एक लाठी बनकर
उस स्वचलित लड़खड़ाती लाठी का
जो देता अपनों से अधिक प्यार
रखता सदा मुझे अपने ही पास
काश मैं भी होती बाँस।

बनकर सीढ़ी ऊँचाई की मंजिल पाती
बाढ़ आने पर मैं राफ़ भी बन जाती है
नव जीवन पाता मैं जिसे पार लगाती
अंत काल अर्थी बनकर देती मानव का साथ
काश मैं भी होती बाँस।

राजभाषा नीति संबंधी प्रमुख निदेश

संघ का शासकीय कार्य हिन्दी में करने के लिए राजभाषा विभाग, गृह मन्त्रालय, भारत सरकार द्वारा जारी वार्षिक कार्यक्रम 2014-2015 में राजभाषा नीति सम्बन्धी प्रमुख निदेश इस प्रकार हैं—

1. राजभाषा अधिनियम, 1963 की धारा 3(3) के अन्तर्गत संकल्प, सामान्य आदेश, नियम, अधिसूचनाएँ, प्रशासनिक व अन्य रिपोर्टें प्रेस विज्ञप्तियाँ, संसद के किसी सदन या दोनों सदनों के समक्ष रखी जाने वाले प्रशासनिक तथा अन्य रिपोर्टें सरकारी कागजात, संविदा, करार, अनुज्ञप्तियाँ, अनुज्ञापत्र, निविदा सूचनाएँ और निविदा - प्रारूप द्विभाषिक रूप में, अंग्रेजी और हिन्दी दोनों में जारी किए जाएँ। किसी प्रकार के उल्लंघन के लिए हस्ताक्षर करने वाले अधिकारी को जिम्मेदार ठहरया जाएगा।
2. अधीनस्थ सेवाओं की भर्ती परीक्षाओं में अंग्रेज़ों के अनिवार्य प्रश्न पत्र को छोड़कर शेष विषयों के प्रश्न पत्रों के उत्तर हिन्दी में भी देने की छूट दी जाए और ऐसे प्रश्न पत्र अंग्रेजी तथा हिन्दी दोनों भाषाओं में उपलब्ध कराए जाएँ। साक्षात्कार में भी वार्तालाप में हिन्दी माध्यम की उपलब्धता अनिवार्य रूप से रहनी चाहिए।
   केन्द्र सरकार के सभी मन्त्रालयों, विभागों तथा उनसे संबद्ध और अधीनस्थ कार्यालय तथा केन्द्र सरकार के स्वामित्व में या नियन्त्रणाधीन निगमों, उपक्रमों, बैंकों आदि में सभी सेवाकालीन विभागीय तथा पदोन्नति परीक्षाओं में (अखिल भारतीय स्तर की परीक्षाओं सहित) अभ्यर्थियों को प्रश्न पत्रों के उत्तर हिन्दी में भी देने की छूट दी जाए। प्रश्न पत्र अनिवार्यत: दोनों भाषाओं (हिन्दी और अंग्रेज़ी) में तैयार कराए जाएँ। जहाँ साक्षात्कार लिया जाना हो, वहाँ भी प्रश्नों के उत्तर हिन्दी में देने की छूट दी जाए।
3. सभी प्रकार की वैज्ञानिक/तकनीकी संगोष्ठियों तथा परिचर्चाओं आदि में वैज्ञानिकों आदि को राजभाषा हिन्दी में शोध पत्र पढ़ने के लिए प्रेरित और प्रोत्साहित किया जाए। उक्त शोध पत्र सम्बद्ध मन्त्रालय/विभाग/कार्यालय आदि के मुख्य विषय से सम्बन्धित होने चाहिएँ।
4. 'क' तथा 'ख' क्षेत्रों में सभी प्रकार का प्रशिक्षण, चाहे वह अल्पावधि का हो अथवा दीर्घावधि का, सामान्यत: हिन्दी माध्यम से होना चाहिए। 'ग' क्षेत्र में प्रशिक्षण देने के लिए प्रशिक्षण सामग्री हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में तैयार कराई जाए और प्रशिक्षणार्थी की माँग के अनुसार हिन्दी या अंग्रेजी में उपलब्ध कराई जाए।
5. केन्द्र सरकार के कार्यालयों में जब तक हिन्दी टंकक व हिन्दी आशुलिपि सम्बन्धी निर्धारित लक्ष्य प्राप्त नहीं कर लिए जाते, तब तक उनमें केवल हिन्दी व हिन्दी आशुलिपिक ही भर्ती किए जाएँ।
6. अन्तर्राष्ट्रीय सन्धियों और करारों को अनिवार्य रूप से हिन्दी और अंग्रेज़ी दोनों भाषाओं में तैयार कराया जाए। विदेशो में निष्पादित संधियों और करारों के प्रामाणिक अनुवाद तैयार कराके रिकॉर्ड के लिए फाइल में रखे जाएँ।
8. विदेश स्थित भारतीय कार्यालयों सहित सभी मन्त्रालयों/विभागों आदि की लेखन सामग्री, नाम पट्ट, सूचना पट्ट, फार्म प्रक्रिया सम्बन्धी साहित्य, रबड़ की मोहरें, निमन्त्रण पत्र आदि अनिवार्य रूप से हिन्दी-अंग्रेजी में बनवाए जाएँ।
9. भारत सरकारी के मन्त्रालयों, कार्यालयों, विभागों, बैंकों, उपक्रमों आदि द्वारा असांविधिक प्रक्रिया साहित्य जैसे नियम, कोड, मैनुअल, मानक फार्म आदि को अनुवाद कराने के लिए केन्द्रीय अनुवाद ब्यूरो को भेजा जाए।
10. अनुवाद कार्य तथा राजभाषा नीति के कार्यान्वयन से जुड़े सभी अधिकारियों/कर्मचारियों को केन्द्रीय अनुवाद ब्यूरो में अनिवार्य अनुवाद प्रशिक्षण हेतु नामित किया जाए। ऐसे अधिकारियों/कर्मचारियों कोभी अनुवाद के प्रशिक्षण पर

नामित किया जा सकता है, जिन्हें स्नातक स्तर पर हिन्दी-अंग्रेजी दोनों भाषाओं का ज्ञान हो तथा जिनकी सेवाओं का उपयोग कार्यालय द्वारा इस कार्य के लिए किया जा सकता है।

12. सभी मंत्रालय/विभाग आदि हिंदी के प्रयोग को बढ़ावा देने के लिए चलाई गई विभिन्न प्रोत्साहन योजनाओं का अपने संबद्ध एवं अधीनस्थ कार्यालयों में भी व्यापक प्रचार-प्रसार करें ताकि अधिक से अधिक अधिकारी/कर्मचारी इन योजनाओं का लाभ उठा सकें और सरकारी कामकाज में अधिक से अधिक से कार्य हिंदी में हो।
13. तिमाही प्रगति रिपोर्ट ऑनलाइन सिस्टम द्वारा प्रत्येक तिमाही की समाप्ति के अगले माह की 15 तारीख तक राजभाषा विभाग को उपलब्ध करा दी जाए।
14. सरकार की राजभाषा नीति के प्रति अधिकारियों/कर्मचारियों को सुग्राही बनाने की दृष्टि से यह आवश्यक है कि सरकारी कामकाज में राजभाषा हिंदी के कार्यान्वयन में हुई प्रगति की समीक्षा को मात्र राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठकों तक ही सीमित न रखा जाए। इस संबंध में मॉनीटरिंग को और अधिक प्रभावी और कारगर बनाने के लिए यह जरूरी है कि मंत्रालयों/विभागों/कार्यालयों के प्रशासनिक प्रधानों द्वारा ली जाने वाली प्रत्येक बैठक में इस पर नियमित रूप से विस्तृत चर्चा की जाए और इसे कार्यसूची की एक स्थानी मद के रूप में शामिल किया जाए।
15. प्रशिक्षण और कार्यशालाओं सहित राजभाषा हिंदी संबंधी कार्य कर रहे अधिकारियों/कर्मचारियों को कार्यालय में बैठने के लिए अच्छा व समुचित स्थान भी उपलब्ध कराया जाए ताकि वे अपने दायित्वों का निर्वाह ठीक तरह से कर सकें।
16. राजभाषा विभाग द्वारा चलाए जा रहे विभिन्न प्रशिक्षण कार्यक्रमों में मंत्रालय/विभाग/कार्यालय आदि नियमित रूप से अपने कर्मचारियों को नामित करें और नामित कर्मचारियों को निदेश दें कि वे नियमित रूप से कक्षाओं में उपस्थित रहें, पूरी तत्परता से प्रशिक्षण प्राप्त करें तथा परीक्षाओं में बैठें/प्रशिक्षण को बीच में छोड़ने या परीक्षाओं में न बैठने वाले मामलों को कड़ाई से निपटा जाए।
17. अनुवादों को सहायक साहित्य, मानक शब्दकोश (अंग्रेजी-हिंदी व हिंदी-अंग्रेजी) तथा अन्य तकनीकी शब्दावलियाँ उपलब्ध कराई जाएँ ताकि वे अनुवाद कार्य में इनका उपयोग करें।
18. सभी मंत्रालय/विभाग/कार्यालय आदि हिंदी में प्रशिक्षण के लिए नामित अधिकारियों/कर्मचारियों के लाभ के लिए 'लीला हिंदी प्रबोध, प्रवीण व प्राज्ञ' आदि सॉफ्टवेयर के उपयोग के लिए कम्प्यूटर की सुविधा उपलब्ध करवाएँ।
19. सभी मंत्रालय/विभाग/कार्यालय आदि अपने-अपने दायित्वों से संबंधित विषयों पर हिंदी में मौलिक पुस्तक लेखन को प्रोत्साहित करने तथा अपने विषयों से संबंधित शब्द भंडार को समृद्ध करने के लिए आवश्यक कदम उठाएँ।
21. सभी मंत्रालय/विभाग/कार्यालय/संस्थान आदि अपने कार्यालय में हिंदी में कार्य का माहौल तैयार करने के लिए हिंदी पत्रिकाओं का प्रकाशन कर रहे हैं। इन पत्रिकाओं में विशेषकर उक्त कार्यालय के सामान्य कार्यों तथा राजभाषा हिंदी में संबंधित आलेख प्रकाशित किए जाएँ।
22. नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों की छमाही बैठकों में सदस्य कार्यालय के प्रशासनिक प्रमुख अनिवार्य रूप में भाग लें।
23. सभी मंत्रालय विभाग अपने संबद्ध/अधीनस्थ कार्यालयों के बारे में वर्ष 2013-14 के वार्षिक कार्यक्रम से संबंधित समेकित अनुपालन रिपोर्ट राजभाषा विभाग को 31 मई, 2014 तक भिजवाना सुनिश्चित करें।
24. सभी मंत्रालय/विभाग/कार्यालय आदि 'लीला' अर्थात लर्निंग इंडियन लैंग्वेज थ्रू आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के उपयोग के लिए कम्प्यूटर सुविधा उपलब्ध कराएँ।
25. कम्प्यूटर पर हिंदी प्रयोग के लिए केवल यूनिकोड एनकोडिंग का प्रयोग किया जाए।

प्रतिक्रियाएं

1. पत्रिका काफी अच्छी बनी है। प्रति भेजने के लिए बहुत-बहुत धन्यवाद।

के. श्रीनिवासराव
सचिव, साहित्य अकादेमी
नई दिल्ली

2. 'रूपाम्बरा' का वाहय कलेवर जितना आकर्षक लगा उससे कहीं अधिक उसका सचित्र अंत: भाग मन को छू गया, स्तरीय लेख कविताएं, कहानियां प्रशंसनीय तो हैं ही, प्रकाशित विभिन्न रंगीन चित्र अनायास अतीत की याद दिला देते हैं।

काशी राम साहू,
लोक कलाकार
गांधी नगर, रतनपुर
बिलासपुर, छत्तीसगढ़

3. दोनों पत्रिकाएं मिल गयी। स्तरीय हैं।

डॉ. रमानाथ त्रिपाठी
सेवा निवृत्त आचार्य
हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

4. 'रूपाम्बरा' ज्ञानवर्धक लेखों एवं सुन्दर चित्रों से सुसज्जित पत्रिका है। पुस्तक के सफल प्रकाशन के लिए बधाई।

सुषमा टण्डन
रजिस्ट्रार
कथक केन्द्र, नई दिल्ली

5. It may keep to take Rajbhasha as her own language in all over India.

Gopal ch. Das
Agartala, west Tripura

6. राजभाषा रूपाम्बरा में साहित्य की सभी विधाएं देखने को मिलती हैं। पत्रिका का यह अंक आकर्षण व मनोहारी है। इस राष्ट्रीय अकादेमी की पत्रिका को गृह पत्रिका से राष्ट्रीय पत्रिका बनाएं।

डॉ. प्रकाश द्विवेदी
वरिष्ठ साहित्यकार
अंबेडकर नगर
उत्तर प्रदेश

संगीत नाटक अकादेमी Sangeet Natak Akademi
संगीत, नृत्य एवं नाटक की राष्ट्रीय अकादेमी
रवीन्द्र भवन, फिरोजशाह रोड, नई दिल्ली–110001
फोन: 23387246, 23387247, 23387248, 23382495
फैक्स: 91–11–23382659
ई–मेल: mail@sangeetnatak.gov.in
वेबसाइट: http://sangeetnatak.gov.in

संगीत नाटक अकादेमी के प्रकाशन

अंग्रेजी	मूल्य	छूट सहित मूल्य
1. रवीन्द्र नाथ टैगोर : ए ट्रिब्यूट (पुनर्मुद्रित): (सं) पुलिन बिहार सेन, क्षितिश रॉय	495.00	(297.00)
2. संगीत नाटक : सिल्वर जुबली वॉल्यूम, एच.के रंगनाथ	100.00	(60.00)
3. *म्यूजिक एंड डांस इन रवीन्द्रनाथ टैगोर्ज़ एजुकेशन फिलॉसफी : शांतिदेव घोष	20.00	(12.00)
4. द विंग्ड फॉर्म : एस्थेटिकल एस्सेज ऑन हिन्दुस्तानी रिदम : एस के सक्सेना	35.00	(21.00)
5. रावण छाया : जीवन पाणि	12.00	(7.20)
6. मालुशाही- द बैलेड ऑफ कुमाऊं : मोहन उप्रेती	30.00	(18.00)
7. करयाला : फोक थियेटर आफ हिमाचल प्रदेश : एस एस एस ठाकुर	20.00	(12.00)
8. इवोल्यूशन ऑफ ख्याल : एम वी धोंड	10.00	(6.00)
9. भाओना : द रिच्यूअल प्ले ऑफ असम : महेश्वर नियोग	25.00	(15.00)
10. *हूज़ हू ऑफ इंडियन म्यूजिशियंस : दूसरा संस्करण	50.00	(30.00)
11. *उस्ताद फैयाज खां : दीपाली नाग	90.00	(54.00)
12. स्टेज़ म्यूजिक ऑफ महाराष्ट्र : अशोक डी रानाडे	60.00	(36.00)
13. आस्पेक्ट्स ऑफ इंडियन म्यूजिक : सुमति मुटाटकर (संपादित), (पुनर्मुद्रण)	595.00	(357.00)
14. कंटेम्पोरेरी इंडियन थिएटर : इंटरव्यूज विद प्लेराइटर्स एंड डायरेक्टर्स : रजिन्द्र पॉल (पुनर्मुद्रण)	740.00	(444.00)
15. मैडम मेनका : दमयंती जोशी	150.00	(90.00)
16. *शारंगदेव एंड हिज संगीत - रत्नाकार : सं. प्रेमलता शर्मा, सजिल्द	1200.00	(720.00)
पेपर बैक	800.00	(480.00)
17. मतंग एण्ड हिज वर्क बृहद्देसी : प्रेमलता शर्मा	500.00	(300.00)
18. स्विन्गिंग सिलेबल्स एस्थेटिक्स ऑफ कथक डांस (पुर्नमुद्रण) : सुशील कुमार सक्सैना	475.00	(285.00)
19. तौलपावा कूत्तु : शैडो पपेट् थियेटर ऑफ केरल (पुर्नमुद्रण) : जी वेणु	295.00	(177.00)
20. तोलू बोम्मलाट्टा : शैडो पपेट्स ऑफ आंध्र प्रदेश : एम नागभूषण शर्मा	60.00	(36.00)
21. कूट्टमपलम एवं कूट्टियाट्टम : गोवर्धन पंचाल	130.00	(78.00)
22. *द आर्ट ऑफ तबला रिदम : एसेंशियल्स, ट्रेडिशन एंड क्रिएटिविटी : सुधीर कुमार सक्सैना	550.00	(333.00)
23. इन्डियन ड्रामा इन रिट्रासपेक्ट : इन्ट्रोडक्शन : जयन्त कस्तुआर	850.00	(510.00)

24.	रवीन्द्र नाथ टैगोर - वन हन्ड्रेड साँग्स इन स्टॅफ नोटेशन : इन्दिरा देवी चौधुरानी द्वारा संकलित	795.00	(477.00)
25.	क्लॉसिकल इंडियन डांस इन लिटरेचर एण्ड द आर्ट्स (तीसरा संस्करण) : कपिला वात्स्यायन	480.00	(288.00)
26.	नॉलेज ट्रेडिशन : अप्रोचेज टु भरत नाट्यशास्त्र, संपादन: अमृत श्रीनिवासन	325.00	(195.00)
27.	हिन्दुस्तानी म्यूजिक एंड एस्थेटिक्स टुडे : एस के. सक्सेना	995.00	(597.00)
28.	एवेन्यूज टु ब्यूटी : एस. के. सक्सेना	580.00	(348.00)
29.	इंडियन सिनेमा इन रिट्रासपेक्ट (सं) आर.एम.रे	895.00	(537.00)
30.	हिन्दुस्तानी संगीत: सम परस्पेक्टिव, सम परफारमर्स : एस. के. सक्सेना	600.00	(360.00)
31.	टेम्पल म्यूजिकल इंस्ट्रूमेन्ट्स ऑफ केरल : एल एस राजगोपाल संपादन : ए पुरुषोत्तमन, ए हरिन्द्रनाथ	400.00	(240.00)
32.	एस्थेटिक्स : अप्रोचेज, कॉन्सेप्टस एण्ड प्रॉब्लमस: एस के सक्सेना (नया संस्करण)	1100.00	(660.00)
33.	द विंग्ड फॉर्म : एस्थेटिकल एस्सेज ऑन हिन्दुस्तानी रिदम : एस के सक्सेना (नया संस्करण)	500.00	(300.00)
34.	फैलो एण्ड अवार्ड विनर ऑफ संगीत नाटक अकादेमी 1952-2010	400.00	
		(छूट रहित)	

हिन्दी

35.	संगीत कलाधर : दहियालाल शिवराम (अनुवाद) अनिल बिहारी ब्योहार एवं चेतना ज्योतिषी ब्योहार (सं) प्रेमलता शर्मा	1250.00	(750.00)
36.	*ओंकार नाथ ठाकुर : विनय चन्द्र मौदगल्य	2.50	
37.	*सहसरस : प्रेमलता शर्मा	25.00	
38.	त्यागराज कृति संग्रह	20.00	(12.00)
39.	रासलीला तथा रसानुकरण विकास : वसन्त यामदाग्नि	100.00	(60.00)
40.	मुतुस्वामी दीक्षितार-कृति संग्रह	50.00	(30.00)
41.	मृदंग-तबला वादन पद्धति : गुरूदेव पटवर्धन	7.50	(4.50)
42.	हिमाचल का लोक संगीत : केशव आनंद	70.00	(42.00)
43.	मृदंग वादन नाथद्वारा परम्परा : पुरूषोत्तम दास	25.00	(15.00)
44.	पुष्टि संगीत प्रकाश : बी पी भट्ट	70.00	(42.00)
45.	हिमाचल के प्राचीनतम संगीत वाद्य: नंद लाल गर्ग	400.00	(240.00)
46.	नाट्य कल्पद्रुम: मणिमाधव चाक्यार (अनुवाद-पी के गोविन्दन नांबियार, सं. प्रेमलता शर्मा)	300.00	(180.00)
47.	भरत और उनका नाट्य शास्त्र : ब्रजवल्लभ मिश्र	500.00	(300.00)
48.	नाट्य दर्शन : संगीता गुंदेचा	350.00	(210.00)

तमिल

49.	अयोध्याकांड आफ तौलपावा कुत्तु : कृष्ण कुट्टी पुलावर	100.00	(60.00)

मणिपुरी

50.	रास पूर्णिमा : बाबू सिंह	60.00	(36.00)

(*स्टॉक में नहीं)

अकादेमी द्वारा निर्मित फिल्म/वीडियो कार्यक्रम और ऑडियो सीडी

क्र. सं.	*विषय*	*निर्देशन*	*भाषा*	*रंगीन/श्वेत -श्याम*	*अवधि*	*वर्ष*	*वी सी डी (एम.आर. पी.)*	*40% छूट के बाद*	*उपलब्धता*
1.	उस्ताद बड़े गुलाम अली खाँ	हरी दास गुप्ता	हिंदी/अंग्रेजी	श्वेत-श्याम	29 मिनट	1965	रू.295	रू.177	अनुपलब्ध
2	उस्ताद अलाउद्दीन खाँ	हरी दास गुप्ता	अंग्रेजी		24 मिनट	1965	रू.295	रू.177	अनुपलब्ध
3	रामायण इन कूटियाट्टम एण्ड कथकलि	संगीत नाटक अकादेमी	अंग्रेजी	रंगीन	21 मिनट	1973	रू.295	रू.177	अनुपलब्ध
4	छायानाटक	जीवन पाणि	अंग्रेजी	रंगीन	20 मिनट	1977	रू.295	रू.177	अनुपलब्ध
5	फोक एण्ड ट्राइबल डांसिज ऑफ इंडिया	संगीत नाटक अकादेमी	अंग्रेजी	रंगीन	18 मिनट	1977	रू.295	रू.177	अनुपलब्ध
6	तानवर्णम	संगीत नाटक अकादेमी	संगीत	रंगीन	31 मिनट	1980	रू.295	रू.177	अनुपलब्ध
7	संगाई-डांसिंग डीर ऑफ मणिपुर	अरिबम स्याम सर्मा	संगीत	रंगीन	44 मिनट	1987	रू.295	रू.177	अनुपलब्ध
8	भूताराधना	बी.वी.कर्नाथ	संगीत	रंगीन	22 मिनट	1988	रू.295	रू.177	अनुपलब्ध
9	सेम्मनगुडी	भास्कर चंदावरकर	अंग्रेजी	रंगीन	20 मिनट	1992	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
10	सेम्मनगुडी	भास्कर चंदावरकर	अंग्रेजी	रंगीन	30 मिनट	1992	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
11	सेम्मनगुडी	भास्कर चंदावरकर	अंग्रेजी (उपविषय)	रंगीन	58 मिनट	1992	रू.295	रू.177	उपलब्ध है

12	पार्वती विरहम् मणि माधव चाक्यार एज रावण	के एन.पणिक्कर	अंग्रेजी	रंगीन	35 मिनट	1993	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
13	कंगलाई हरोबा	अरिबम स्याम सर्मा	अंग्रेजी	रंगीन	36 मिनट	1993	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
14	मणि माधव चाक्यार; द मास्टर एट वर्क	के एन.पणिक्कर	अंग्रेजी	रंगीन	30 मिनट	1994	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
15	बेहदेंख्लम	सुजाता मिरि	अंग्रेजी	रंगीन	16 मिनट	1994	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
16	अंग तरंग : मयूरभंज छऊ	जीवन पाणि	अंग्रेजी	रंगीन	17 मिनट	1995	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
17	पंडनालूर सुब्रया पिल्लाई	लक्ष्मी विस्वनाथन	अंग्रेजी	रंगीन	26 मिनट	1996	रू.295	रू.177	अनुपलब्ध
18	अंग तरंग मयूरभंज छऊ	जीवन पाणि	अंग्रेजी	रंगीन	41 मिनट	1997	रू.295	रू.177	अनुपलब्ध
19	एन आक्टेव इन हार्मनी	सुस्मित बोस	अंग्रेजी	रंगीन	32 मिनट	1999	रू.295	रू.177	अनुपलब्ध
20	के.पी.किटप्पा	माना श्रीनिवासन	तमिल (उपविषय)	रंगीन	53 मिनट	2001	रू.295	रू.177	अनुपलब्ध

फिल्म एवं वीडियो कार्यक्रम की डी वी डी

क्र. सं.	*विषय*	*निर्देशन*	*भाषा*	*रंगीन/श्वेत-श्याम*	*अवधि*	*वर्ष*	*एम.आर.पी.*	*उपलब्धता*
1	आधे अधूरे	श्यामानंद जालान	हिन्दी	श्वेत-श्याम	2 घंटे और 9 मिनट	1958	रू.295	उपलब्ध

ऑडियो सीडी

क्र. सं.	*विषय*	*ऑडियो सी डी (एम आर पी)*	*40% छूट के बाद*	*उपलब्धता*
1	विंड इंस्ट्रूमेंट ऑफ इंडिया (एस जी एम)	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
2	स्ट्रिंग इंस्ट्रमेंट ऑफ इंडिया (एस जी एम)	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
3	परकशन इंस्ट्रूमेंट ऑफ इंडिया (एस जी एम)	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
4	अहमद जान थिरकवा (सा रे ग म)	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
5	अमीर खाँ (सा रे ग म)	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
6	बिस्मिल्लाह खाँ (सा रे ग म)	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
7	बड़े गुलाम अली खाँ (एस एन ए)	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
8	बिस्मिल्लाह खाँ (एस एन ए)	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
9	अमीर खाँ (एस एन ए)	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
10	केसर बाई केरकर (हिंदुस्तानी गायन)	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
11	इल्याज खाँ (सितार)	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
12	नारायण राव व्यास (हिंदुस्तानी गायन)	रू.295	रू.177,	उपलब्ध है
13	राधिका मोहन मैत्रा (सरोद)पार्ट-1	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
14	राधिका मोहन मैत्रा (सरोद)पार्ट-2	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
15	शंकर कृष्ण राव पंडित (हिंदुस्तानी गायन)	रू.295	रू.177	उपलब्ध है
16	रसूलन बाई	रू.295	रू.177	उपलब्ध है